प्रारम्भिक अवधी का अध्ययन

[पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध]

प्रारम्भिक अवधी का अध्ययन

डॉ० विश्वनाथ त्रिपाठी





रचना प्रकाशन

४५-ए, खुल्दाबाद, इलाहाबाद-१

प्रथम संस्करण १९७२



प्रकाशक
जीत मल्होत्रा
रचना प्रकाशन
४५ ए खुल्दाबाद
इलाहाबाद-१



मुद्रक
इलाहाबाद प्रेस
३७०, रानी मण्डी
इलाहाबाद ३

मूल्य बीस रुपये

समर्पण

आकाशधर्मा गुरु और लोकवादी आचार्य

पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी को

प्रणतिपूर्वक

आभार

प्रस्तुत कार्य में अनेक विद्वानों और शुभ चिन्तकों ने विविध प्रकार से मेरी सहायता की है। डॉ० बाबूराम सक्सेना ने न केवल मुझे आशीर्वाद देकर उत्साहित किया है बल्कि प्रारम्भिक अवधी के अधिकांश व्याकरणिक रूपों को देखकर कई बहुमूल्य सुझाव भी दिये हैं। डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने स्वसम्पादित 'मिरगावत' (अप्रकाशित) के कुछ अंशों का उपयोग करने की अनुमति देकर उपकृत किया है। डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने मैनासत सम्बन्धी सामग्री का पता दिया है और श्री रायकृष्णदास ने भारतकला भवन में सुरक्षित कई हस्तलेखों को देखने की सुविधा प्रदान की है। डॉ० नामवर सिंह और डॉ० शिवप्रसाद सिंह ने उपयोगी परामर्श दिए हैं। डॉ० भोलानाथ तिवारी और उर्दू के प्राध्यापक डॉ० खलीक़ अंजुम ने मैनासत सम्बन्धी सामग्री उपलब्ध कराने में बड़ी सहायता की है। इसके अतिरिक्त श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी और डॉ० नित्यानन्द तिवारी ने हरिचरित और चंदायन सम्बन्धी उपयोगी सामग्री जुटाने में सक्रिय सहयोग दिया है। इलाहाबाद के श्री गोविन्दजी ने अपने संग्रहालय में सुरक्षित 'रामजन्म की प्रतिलिपि देकर सहायता की है। मैं इन सभी विद्वानों और बन्धुओं के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

गुरुवर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस प्रबन्ध को प्रस्तुत करने में जितनी और जितने प्रकार की सहायता की है, उन सबका उल्लेख यहाँ सम्भव नहीं है। उनके स्नेह आशीर्वाद और प्रेरणादायक निर्देशन के बिना यह कार्य कितना दुष्कर होता इसकी कल्पना भी मेरे लिये कठिन है।

इस शोध ग्रन्थ को प्रकाशित करने में बन्धुवर रवीन्द्र कालिया ने जो सहा-

संकेत-पत्र

अन्य पु०—अन्य पुरुष
ई०—ईस्वी
उ० व्य०
उ० व्य० प्र० } —उक्ति व्यक्ति प्रकरण
ए० अ०—एवोल्यूशन आफ अवधी
ए० व०—एक वचन
ओ० डी० बी० एल—ओरिजिन एण्ड डवलपमेंट आफ बंगाली लैंग्वेज
खोज वि०—खोज विवरण
ग्रन्थ सं०
ग्र० सं } ग्रन्थ संख्या
च०—चन्दायन (डॉ० विश्वनाथ प्रसाद द्वारा संपादित)
च० (प)—चंदायन डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त द्वारा संपादित
छं० प्र०—छन्द प्रभाकर
दे०—देखिए
ना० प्र० पत्रिका—नागरी प्रचारिणी पत्रिका
प्रा० अवधी —प्रारम्भिक अवधी
प्रा० पैं०—प्राकृत पैंगलम्
पृ०—पृष्ठ
भो० भा० सा०—भोजपुरी भाषा और साहित्य
म० भा० आ०—मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाएँ
मा० वृ०—मात्रा वृत्त
मिर०—मिरगावत (डॉ० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित)
मिर० (शि)—कुतबन कृत मृगावत (डॉ० शिवगोपाल मिश्र द्वारा सम्पादित)
मै० स०—मैनासत

रा० च० मा०—रामचरितमानस
रा० ज०—राम जन्म
रा० बे०—राउर बेल
लि० ख०—लिपि काल
लो० क०—लोर कहा
व० वृ०—वर्ण वृत्त
वि०—विक्रमी
स०—सदर्भानुसार सम्वत् या सपादक
सं० रा० – सदेश रासक
स० क०—सत्यवती कथा
सदभ प्र०—सम्भ प्रमोक
स्वर्गा०—स्वर्गारोहिणी कथा
ह० च०—हरिचरित
हि० –हिजरी
(?) सदिग्धपाठ का द्योतक
( ) कोष्ठक में किसी शब्द के आगे दिया हुआ अनुमानित पाठ
<—से विकसित
>—पूर्व रूप
ॅ—ह्रस्वत्व बोधक चिह्न
— छोड़ा या अपाठ्य अंश

उद्धृत पक्ति या शब्द के आगे अक रचना की छद सख्या को सूचित करता है जैसे ४। रा० ज० का अर्थ है राम जन्म के अन्तगत ४ थे छद में प्रयुक्त। ३।१ ह० च० का अर्थ है हरिचरित के पहले अध्याय के तीसरे छद मे प्रयुक्त।

विषय सूची

भूमिका

नवीन भारतीय आर्य भाषाएँ मूलतः परस्पर सम्बद्ध हैं। इसीलिए बीम्स, भण्डारकर केलाग, हानली ज्यूल ब्लाख, ग्रियर्सन, चटर्जी इत्यादि विद्वानों के कार्यों से अन्य नवीन भारतीय आर्य भाषाओं के साथ-साथ अवधी के अध्ययन का भी मार्ग प्रशस्त हुआ है। फिर भी अवधी के अध्ययन की दृष्टि से केलाग के *हिन्दी भाषा का व्याकरण* तथा हानली के *'पूर्वी हिंदी का व्याकरण'* का विशेष महत्त्व है। केलाग ने रामचरित मानस की भाषा पर विचार किया था और पूर्वी हिंदी के नाम से हानली ने भोजपुरी तथा अवधी के व्याकरण का विवेचन किया था। ग्रियर्सन की यशस्विनी कृति 'भारत का भाषा सर्वेक्षण' के छठे खण्ड में पूर्वी हिन्दी के नाम से अवधी के विभिन्न रूपों का संग्रह है। इस खण्ड की भूमिका में ग्रियर्सन ने पूर्वी हिंदी का सम्यक परिचय दिया है। इसके पूर्व छत्तीसगढ़ी बोली पर हीरालाल काव्योपाध्याय काम कर चुके थे। इसका अंग्रेजी अनुवाद ग्रियर्सन ने ही १९२१ ई० में प्रकाशित करवाया।

किन्तु अवधी पर सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य डा० बाबूराम सक्सेना ने किया। उनका प्रबंध 'अवधी का विकास' सन् १९३८ ई० में इंडियन प्रेस इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ में अवधी की वैज्ञानिक दृष्टि से विस्तृत विवेचना की गई। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार इस ग्रन्थ में पहले पहल एक आधुनिक भारतीय आर्यभाषा की ध्वनियों का प्रयोगात्मक ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से विश्लेषण तथा वर्णन किया गया तथा हिन्दी की एक मुख्य बोली का प्रथम वैज्ञानिक तथा विस्तृत वर्णन मिलता है। डॉ० सक्सेना ने आधुनिक अवधी के साथ-साथ 'प्रारम्भिक अवधी' का भी अध्ययन मुख्यतः पदमावत, रामचरित मानस और नूर मुहम्मद की इन्द्रावती के आधार पर किया। प्रारम्भिक और आधुनिक अवधी का विस्तृत विवेचन करने के साथ ही साथ उन्होंने अवधी ध्वनियों और व्याकरणिक रूपों की व्युत्पत्ति पर भी विचार किया। अवधी पर डॉ० सक्सेना जैसा कार्य फिर देखने में नहीं आया।

अवधी का विकास (एवोल्यूशन आफ अवधी) के प्रकाशन के पश्चात् अवधी से सम्बन्धित नवीन सामग्री पर्याप्त मात्रा में सामने आई है। १९५३ ई० में मुनि जिन विजय के सम्पादन में १२ वीं शताब्दी के पंडित 'दामोदर शर्मा द्वारा रचित उक्ति व्यक्तिप्रकरण प्रकाशित हुआ। इस महत्त्वपूर्ण पुस्तक की भाषा वैज्ञानिक विवेचना करते हुए डा० सुनीति कुमार चटर्जी ने लिखा कि उक्तिव्यक्तिप्रकरण कोसली या पूर्वी हिन्दी के इतिहास के अध्ययन की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है (दे० ९२ स्टडी, उ० व्य० प्र०)। इसमें १२ वीं शताब्दी में जन प्रचलित पूर्वी हिन्दी का रूप उपलब्ध होता है। विवेचना करने पर ज्ञात होता है कि इसके अधिकांश व्याकरणिक रूपों का विकास अवधी में हुआ है।

'भारतीय विद्या' के जून जुलाई १९५९ के अंक में डा० हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी ने 'राउर वेल' नामक एक नवोपल ध काव्य का प्रकाशन कराया। यह काव्य प्रिंस आफ वेल्स म्यूजियम बम्बई में सुरक्षित एक शिला पर अंकित था। डा० भायाणी के अनुमानानुसार इस काव्य का रचनाकाल ११ वीं शताब्दी है और इसमें कई नवोदित भारतीय आर्य भाषाओं का प्रयोग किया गया है। डा० भायाणी ने काव्य के प्रथम नखशिख की भाषा को अवधी का पूर्वरूप बताया है।

इसी काव्य का सम्पादन करके डा० माताप्रसाद गुप्त ने इसे पुस्तक रूप में १९६२ ई० में प्रकाशित कराया। डा० गुप्त रचनाकार के विषय में डॉ० भायाणी के समान मत रखते है। भाषा के विषय में उनका निष्कर्ष है कि प्रथम और अंतिम नखशिख की भाषा दक्षिण कोसली है।

प्राकृत और अपभ्रंश छन्दों के प्रसिद्ध संकलन ग्रंथ प्राकृत पैंगलम् का सम्पादित संस्करण यद्यपि बहुत पहले निकल चुका था लेकिन इस बीच अनुसंधित्सुओं का ध्यान उद्धृत छन्दों की भाषा के महत्त्व पर गया। पुरानी राजस्थानी पर विचार करते हुए तेस्सीतोरी ने इस ग्रंथ की उपादेयता पर प्रकाश डाला था। 'कल्पना', १९५४ के अगस्त अंक में डॉ० शिवप्रसाद सिंह ने उसमें ऐसे छन्दों की भाषा पर विचार किया जिनमे ब्रजा के पूर्वरूप मिलते है। प्रस्तुत अध्ययन के सिलसिले में प्राकृतपैंगलम् में उद्धृत ऐसे छन्दों की भाषा पर विचार किया गया है जिनमें अवधी में प्राप्त रूप या उनके पूर्वरूप मिलते हैं (दे० ४९)।

डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने पद्मावत का संजीवनी टीका प्रस्तुत की और उसमें अवधी के कई अज्ञातप्राय कवियों और उनकी रचनाओं का उल्लेख किया। इसके बाद अवधी की कई अनुपलब्ध रचनायें प्रकाशित हुईं।

(१) श्री अगरचंद नाहटा ने कु० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ

आगरा म प्रकाशित हिन्दी विद्यापीठ ग्र थ वीथिका (१६५६ ई०) में साधन के मैनासत के दो पाठ प्रकाशित कराए।
मैनासत के मनेर शरीफ खानकाह का पाठ प्रो० अस्करी ने उर्दू की 'मआसर' नामक पत्रिका में १६६० ई० में प्रकाशित कराया।

(२) ईश्वरदास की सत्यवती कथा यद्यपि हिन्दुस्तानी (१६३७ ई०) म प्रकाशित हो चुकी थी किन्तु वह अनुपल धप्राय थी। डा० शिवगोपाल मिश्र और रावत ओम प्रकाश सिंह ने १६५८ ई० से ईश्वरदास की अन्य कृतियो के साथ उसका प्रकाशन कराया।

(३) मुल्लादाऊद की प्रसिद्ध रचना के कुछ अशो का प्रकाशन डा० विश्व नाथ प्रसाद ने 'चदायन' के नाम स तथा डा० माताप्रसाद गुप्त ने 'लोरकहा' के नाम से १६६२ ई० मे कराया। काव्य के दोनो सपादित अश साथ साथ क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ आगरा से प्रकाशित हुए हैं।

इस रचना क लगभग सम्पूण अश का प्रकाशन डा० परमेश्वरीलाल गुप्त ने 'चन्दायन' नाम से १६६४ ई० में कराया।

लालचदास के हरिचरित नामक काव्य का क्रमश प्रकाशन बिहार राष्ट्र भाषा की परिषद् पत्रिका म पहले से हो रहा था किन्तु उसका पुस्तकाकार प्रकाशन १६६३ ई० म हुआ। सम्पादन आचाय नलिनविलोचन शर्मा तथा श्री रामनारायण शास्त्री ने किया।

उसी वष कुतबन की प्रसिद्ध रचना 'मिरगावत का डा० शिव गोपाल मिश्र द्वारा सम्पादित रूप प्रकाशित हुआ। इस काव्य का सम्पादन डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने भी किया है जो सम्भवत शीघ्र ही प्रकाशित होने वाला है।

इन रचनाओं पर आगे (दे० २५ ६४) किञ्चित् विस्तारपूवक विचार किया गया है।

ऊपर जिन रचनाओ का उल्लेख किया गया है वे सभी जायसी क पदमावत (रचनाकाल १५४० ई०) के पूव की है। जायसी के 'पदमावत' की भाषा का अध्ययन डा० सक्सेना अपने ग्रन्थ 'अवधी का विकास में प्रारम्भिक अवधी (अर्ली अवधी) के अन्तर्गत कर चुके थे। डा० सक्सेना ने जिस समय अपना काय किया था उस समय जायसी पूव अवधी की इतनी रचनायें प्रकाश में नही आई थी। इसीलिये वे इनका उपयोग अपने अध्ययन में नही कर पाए। इन रचनाओ के प्रकाशित हो जाने पर इस बात की आवश्यकता अनुभव की गई कि पदमावत पूव

सूरि की कुवलयमाला के रचनाकाल अर्थात् ८ वी शती तक देशी भाषाओ का उदय होने लगा था क्योंकि उसमें १८ देशी भाषाओ का उल्लेख और उनके उदाहरण प्रस्तुत है, (कु० मा० पृ० १५२ ५३) तथा १२ वी शती ई० की जन बोली के रूप प्रस्तुत करने वाली पुस्तक उ० व्य० प्र० में 'दिज्जइ', 'किज्जइ' जैसे रूप नहीं हैं बल्कि उनका विकास दीज, कीज में हो गया है (दे० २०।२० उ० व्य०) कहने का तात्पर्य यह कि प्राकृत पैंगलम् के विवेचित छन्दों और राउरवेल की भाषा को ११वीं शती ई० के आसपास की प्रचलित भाषा का रूप मान लिया जाए तो अनुचित न होगा।

प्रस्तुत अध्ययन के अन्तर्गत अवधी की निकटतम पूर्वजा भाषा नामक अध्याय में हमने प्राकृत पैंगलम् के छन्दों, राउरवेल और उक्तिव्यक्तिप्रकरण में से ऐसे रूपों को ढूढने का प्रयास किया है जो अवधी में मिलते है या जिनका विकास उस भाषा में हुआ है। प्राकृत पैंगलम राउरवेल और उक्तिव्यक्तिप्रकरण में अवधी के जो रूप और पूर्व रूप प्राप्त होते है, वे अपने आप में किसी भाषा का पूर्ण चित्र नही प्रस्तुत करते अत हमने उसे कोई विशिष्ट नाम न देकर 'अवधी की निकटतम पूर्वजा भाषा' कहा है।

फिर अगले अध्याय अर्थात् प्रारम्भिक अवधी के अध्ययन की सामग्री में हमने उन प्रकाशित और अप्रकाशित रचनाओ पर विचार किया है जिनके आधार पर प्रारम्भिक अवधी का भाषा सम्बन्धी विवेचन किया गया है। इसमें विचारित रचनाओ के रचयिता, रचनाकाल, भाषा इत्यादि की यथासम्भव परीक्षा और विवेचना की गई है। विवेचित रचनाओ म दाऊद की रचना चन्दायन या लोर कहा, ईश्वरदास सत्यवती कथा तथा स्वर्गारोहिणी कुतबन की मिरगावत तथा लालचदास का हरिचरित प्रकाशित है। मझन का मधुमालती भी प्रकाशित है। किन्तु हमने जिस प्रति (मनेरशरीफ व खानकाह) का उपयोग किया है, वह हिन्दी में अप्रकाशित है। 'मिरगावत की भाषा का अध्ययन करने में हमने डॉ० शिव गोपाल मिश्र की सम्पादित और प्रकाशित पुस्तक तथा डॉ० माता प्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित तथा अभी तक अप्रकाशित मिरगावत के कुछ अशों का उपयोग किया है।

इनके अतिरिक्त प्रारम्भिक अवधी की अन्य तीन रचनाओ पर विचार किया गया है जिनकी सूचना विभिन्न खोज रिपोर्टो में मिली है। वे रचनायें है—१—सखनन्दि का हरिचरित्र (रिपोर्ट ०४, २—भीम कवि का डंगवै पुराण, ३—पुरुषोत्तम का जैमिनि पुराण।

फिर 'ध्वनि विचार' के अन्तर्गत प्रारम्भिक अवधी के व्यञ्जना और स्वरो को निर्धारित करने का प्रयत्न किया गया है। प्रारम्भिक अवधी की ध्वनियो को ठीक-ठीक निरूपित करने के लिये आज हमारे पास कोई प्रामाणिक साधन नहीं है। इसलिये इन पर प्राचीन वैयाकरणो तथा अन्य विद्वानो के मतो के प्रकाश में विचार किया गया है। स्वर आनुनासिक स्वर, व्यञ्जन आनुनासिक व्यंजन स्वर सयोग की सूची दे दी गई है तथा प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त ध्वनि परिवतन के उदाहरण दे दिए गए हैं।

रूप विचार के अन्तर्गत रचनात्मक प्रत्यय, उपसर्ग प्रातिपदिक, लिंग, वचन, कारक, विशेषण, सख्या वाचक विशेषण के विविध रूपो, परसग, क्रिया के विविध रूपों, सयुक्त क्रियाओं तथा अव्यय पर विचार किया गया है और उनके उदाहरण दे दिये गए हैं।

प्रारम्भिक अवधी की क्रियाओ का अध्ययन प्रस्तुत प्रबन्ध का सबसे महत्वपूर्ण अश समझा जाना चाहिये क्योंकि प्रारम्भिक अवधी में ऐसे कई क्रिया रूपो का पता चला है जो परवर्ती अवधी में या तो बहुत कम प्रयुक्त हैं या अप्रयुक्त हैं। ईंत, ईंतिस एंतिस और एन्हि प्रत्ययान्त भूतकालिक कृदन्ती रूप पदमावत में नहीं मिलते। अभी तक अवधी पर विचार करने वाले किसी पडित ने इन रूपो पर विचार नहीं किया है। उपसहार में इन रूपो के विकास पर विचार करते हुए हमने देखा है कि प्रारम्भिक अवधी के ईंत, ईंतिस रूप पजाबी के-'इत्ता जैसे रूप के समानान्तर विकसित हुए होगे। अवधी में वे अप्रचलित हैं किन्तु पजाबी में ऐसे रूप आज भी दिखाई पड़ते हैं। प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त 'होत' भी ऐसी भूतकालिक सहायक क्रिया है जो परवर्ती अवधी काव्य में नहीं दिखलाई पड़ती है। अवधी भाषा के अन्तर्गत इस पर भी अब तक अन्यत्र विचार नहीं हुआ है।

प्रारम्भिक अवधी में कुछ ऐसे क्रिया रूप मिलते हैं जिनका प्रयोग अब अवधी क्षेत्र में न होकर अन्य भाषा क्षेत्रो में होता है। जसे सहायक क्रिया 'होरवइ' और मध्यम पुरुष अनुज्ञाथ 'करहु' जसे रूप। राम, जन्म, सत्यवती कथा में इन रूपो का मिलना इस बात की सम्भावना प्रकट करता है कि पहले इन रूपों का प्रयोग अवधी क्षेत्रों में भी होता था।

अत में उपसहार के अन्तर्गत प्रारम्भिक अवधी की कुछ विशेषताओ को ध्यान में रखकर परवर्ती अवधी काव्यो की भाषा से उसका अन्तर स्पष्ट कर दिया गया है। परवर्ती अवधी काव्य भाषा के उदाहरण डॉ० बाबूराम सक्सेना

द्वारा 'लिखित अवधी का विकास' से लिये गये है। उपसंहार में ऐसे रूपों विकास क्रम को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है जिनकी विवेचना अब अवधी पर काम करने वाले विद्वानों ने नहीं की थी। इस विषय में मुख्य डा० चटर्जी, डॉ० सक्सेना, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा तथा डॉ० उदयनारायण तिव के कार्य बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं।

अवधी की निकटतम [illegible] ञ्जा

अवधी की निकटतम पूर्वजा भाषा

१ उपलब्ध ज्ञान के अनुसार अवधी भाषा का सर्वप्रथम उल्लेख अमीर खुसरो ने नुह सिपेहर (रचना काल ७१८ हिजरी) में किया है। भारत की कई भाषाओं का नाम गिनाते हुए खुसरो ने अवधी का भी उल्लेख किया है।[1]

"हिंदुस्तान के भिन्न भागो में भिन्न भिन्न भाषाएँ बोली जाती है—सिंधी, लाहौरी, कश्मीरी, मावरी, घोर समुद्री, तिलगी, गूजरी, मावरी, गौरी, बगाली तथा अवधी ।"

इस भाषा को यह नाम अवध प्रदेश की भाषा होने के आधार पर मिला होगा।[2] प्राचीन काल में आज का अवध कोसल प्रदेश के अंतर्गत आता था।[3] ८वीं शताब्दी में रचित कुवलय माला में अठारह देशी भाषाओं के अन्तर्गत 'कोसली' भी गिनाई गई है।[4] जिस प्रकार अवधी सज्ञा अवध प्रदेश की भाषा को दी गई है उसी प्रकार कोसली कोसल प्रदेश की भाषा को कहा जाता रहा होगा। 'कुवलयमाला' माला में कोसली का जो उदाहरण दिया गया है[5] वह

---

१ खिलजी कालीन भारत (१२९० १३२० ई०) पृ० १८० (नुह सिपेहर) अमीर खुसरो से अनु० सैयद अतहर अब्बास रिज़वी।

२ The term Awadhi appears to denote the language of Awadh P 9 Evolution of Awadhi Babu Ram Saxena Allahabad The Indian Press Ltd 1937

३ बुद्धकालीन भारतीय भूगोल (पृ० २३६) डा० भरतसिंह उपाध्याय हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, स० २०१८।

४ कुवलय माला कहा (पृ० १५२ ५३) स० ए० एम० उपाध्ये सिंघी जन ग्रन्थमाला भारतीय विद्या भवन, बम्बई, १९५९।

५ कुवलय माला कहा (पृ० १५३) 'जल तल ले भणमाणे कोसलए पुलइए अवरे।

अत्यन्त संक्षिप्त है, और उसका कोई निश्चित रूप स्पष्ट नहीं होता है। ६वीं और १०वीं शताब्दी में रचित कोई ऐसी रचना नहीं उपलब्ध होती जिससे कोसली के विषय में हमारी जानकारी बढ़े।

२ अलबत्ता ग्यारहवीं शताब्दी और १२वीं शताब्दी में लिखी गई ऐसी रचनाएँ मिल गई हैं जिनकी भाषा को कोसली कहा गया है। हाल ही में प्रिंस आव वेल्स म्यूज़ियम, बम्बई में एक शिलालेख के रूप में टंकित काव्य 'राउल वेल' का प्रकाशन डॉ० हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी और डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने कराया है। डॉ० भायाणी का कार्य 'भारतीय विद्या' (भाग–१७, अंक ३ ४) जून जुलाई, १९५६ के अंक में प्रकाशित हुआ है और डॉ० माताप्रसाद गुप्त द्वारा संपादित संस्करण पुस्तक रूप में मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद से १९६३ ई० में प्रकाशित हुआ है। दोनों संपादकों का अनुमान है कि इस काव्य का रचना काल ११वीं शती है।[1] डॉ० माताप्रसाद गुप्त रचना के आदि अंत को दक्षिण कोसली में बताते हैं और डॉ० भायाणी आरंभिक अंश को अवधी का पूर्व रूप मानते हैं।[2]

'उक्तिव्यक्तिप्रकरण' का, जिसकी भाषा को डा० सुनीतिकुमार चटर्जी ने कोसली या पूर्वी हिंदी का प्रारम्भिक रूप कहा है[3] प्रकाशन श्री जिन विजय मुनि के संपादन में भारतीय विद्या भवन, बम्बई से संवत् २०१० में हो गया था। डॉ० चटर्जी के अनुसार इसकी भाषा का रूप १२वीं शताब्दी के पूर्वार्ध का है।[4]

३ उत्तरी भारत में प्रचलित नवीन भारतीय आर्य भाषाओं के पूर्व रूपों का अनुसंधान हम प्राकृत और अपभ्रंश के छंदोशास्त्रक प्रसिद्ध ग्रंथ 'प्राकृत पैंगलम्' में भी कर सकते हैं। 'प्राकृत पैंगलम्' का संकलन काल १४वीं शताब्दी के लगभग माना जाता है क्योंकि 'इस ग्रंथ में विभिन्न छंदों के उदाहरण के लिये कुछ ऐसे पद्य उद्धृत हैं जो चौदहवीं शताब्दी से पुराने नहीं हो सकते, फिर

१ डॉ० भायाणी के मत के लिये दे० 'भारतीय विद्या' भाग १७, अंक ३ ४, जून जुलाई १९५६ तथा
डॉ० माताप्रसाद का मत दे० पृ० १८ राउर वेल, प्रकाशक मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६३।

२—वही,

३—पृ० २ स्टडी, उ० व्य० प्र०, डा सुनीति कुमार चटर्जी

४—वही, पृ० १।

भी, यह स्पष्ट है कि यही बात अन्य सभी पद्या के लिए लागू नहो हो सकती।
व्यावहारिक निष्कष यह है कि हमारे लिये प्राकृतपैंगलम् की भाषा हेमचद्र क अपभ्रश और आधुनिक भाषाओं की प्रारम्भिक अवस्था के बीच वाले सोपान का प्रतिनिधित्व करती है और इस दसवी से ग्यारहवी अथवा सम्भवत बारहवी शताब्दी ईस्वी के आसपास की भाषा कहा जा सकता है।'[१] इस प्रकार प्राकृत पैंगलम् में उद्धृत छदा की भाषा में हम अवधी या उसके पूव रूपा को ढूंढने का प्रयास कर सकते है। हम यह तो नहो कह सकते कि डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी या डा० माताप्रसाद गुप्त 'उक्ति व्यक्ति-प्रकरण' या 'राउर वेल' की जिस भाषा को कोसली या दक्षिण कोसली कहते हैं वह अवधी का ठीक ठीक पूव रूप है क्योंकि कोसल प्रदश अवध स विस्तृततर क्षेत्र को कहा जाता रहा है किन्तु चूंकि अवध, कोसल क अन्तगत रहा है इसलिए राउर वेल और उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा में अवध की भाषा अवधी के रूप भी मिलने चाहिए। नीचे प्राकृत पैंगलम् के छन्दो, राउर वेल और उक्तिव्यक्तिप्रकरण की भाषा पर इसी दृष्टि स विचार किया जा रहा है।

प्राकृतपैंगलम्—

४ सज्ञा—अवधी में 'घो' जसे लघु रूप मिलते हैं।[२] प्राकृतपैंगलम् की निम्नलिखित पक्ति में ऐसे रूप देख जा सकते हैं—

सज्जिअ जोह विवाडिढ कोह चलाउ धणू।१७१ व० वृ०

अवधी मे कभी कभी स्त्रीवाचक शब्दा के अन्त में दीघ स्वर को ह्रस्व करके और 'या जो' कर उसम लघुता या प्रीति व्यजित की जाती है। जसे बहुरिया, नउनिया। प्राकृत पैंगलम् के एक छन्द में इस प्रवृत्ति की सूचना मिल जाती है—

चदकमलणअलिया खलिअयणवसणिया
हसइपरणिअलिया असइ धुअ बहुलिया। ६८ व० वृ०

५ अपभ्रशोत्तर भाषा मे लुप्तविभक्तिक पदो का प्रयोग प्रचुरता से होने लगा था। ये प्रयोग अन्य कई नवीन भारतीय आय भाषाओं की भाँति अवधी म भी मिलते है। प्राकृत पैंगलम् में उद्धत कई छन्दो में ऐसे प्रयोग मिलते हैं—

१ पुरानी राजस्थानी (पृ० ५) तेस्सीतेरी हिंदी अनुवाद, डॉ० नामवर सिंह नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, स० २०१२ वि०।
२ ग्रामर आफ हिंदी लेंग्वेज (पृ० १२२) कैलाग, १९५५ ई० तथा १६५ ए अ में उद्धत पहला सना शब्द, डॉ० बाबूराम सक्सेना।

कर्ता—

उट्ठइ ओट्ठइ जरा भअ पलाउ। १२६ मा० वृ०

प्रथम पितामह सृस्टि उपाई। १।१ ह० च०

कर्म—

जे गजिअ गोडाहिवइ राउ। १२६ मा० वृ०

हाथ काटि मोहां मुख कारा। ३३ लो० क०

करण—

खग्ग हुण। १३१ व० वृ०

गुरु प्रसाद कछु कहौं विचारी। ३।१ ह० च०

सम्बन्ध—

ता कण्ण परक्कम कोइ बुज्झ। १२६ मा० वृ०

लोरिक विरह तवइ मोर अगा। १६ मै० स०

६ लुप्तविभक्तिक पदों के प्रयोगाधिक्य से उत्पन्न अव्यवस्था को दूर करने के लिये अपभ्रंशोत्तर भाषा में परसर्गों का प्रयोग बढ़ गया था। अवधी में प्रयुक्त कई परसर्गों के पूर्वरूप प्राकृत पैंगलम् में मिल जाते हैं—

सम्बन्ध—क

देवक लिक्खिअ केण मिटावा। १०१ व० वृ०

जस अकलंकित चाँद क चंदा। ४ स० क०

कर्म, सम्प्रदान—क

सपअ अज्जिअ धम्मक दिज्जे। १०१ व० वृ०

हमहुक किछु कीज दाया। २ ह० च०

अधिकरण—मज्झ

मण मज्झ वम्मह ताव। ८६ व० वृ०

बोलत बोल माझ मुँह मारइ। १३ लो० क०

■ सर्वनाम—

प्राकृतपैंगलम् में अवधी के कई सर्वनाम प्रायः ज्यों के त्यों या उनके पूर्व रूप मिलते हैं—

उत्तम पुरुष—

हउ—जो हउ रंक सोइ हउ राआ। १३० मा० वृ०

हउ अस बोलिउ चतुर सयानी। ३ लो० क०

मइ—कोहाणल मह मइ जलउ। १०६ मा० वृ०

गनपत को मै चरन मनावौ। १ ह० च०

हम—हम इक्कलि बहू। १६३ मा० वृ०

हम गौनव द्वारिका दिन दस लागिहि जाद। १० स्वर्गा०

मध्यम पुरुष—

तुहु—तुहु जाहि सुन्दरि अप्पणा।६१ व० वृ०

का लोग तुहू घरहु पियाऊ। १ मै० सत०

तोहर तोहर सक्ट सहर। २४ मा० वृ०

जनम जनम तोहर गुन गावौ। १० रा० ज०

अन्य पुरुष—

सो—सोउ जुहिट्ठिर सक्ट पावा। १०१ व० वृ०

सो नर सदा वैकुंठहि जाइ। १५ रा० ज०

जे—जे गजिअ गोअहिवइ राइ। १२६ मा० वृ०

कीन्ह धन्य जे बेताल पचीसी। ४ स्वर्गा०

अनिश्चयवाचक—

कोई—जा कण्ण परक्कम कोइ बुज्झ। १२६ मा० व०

एहि सरि अवर न पूज कोई। १५ मिर०

निजवाचक सर्वनाम—

अपना—तुहु जाहि सुन्दरि अप्पणा। ६१ व० वृ०

जाहु राज घर आपना। १५ स० क०

सार्वनामिक विशेषण—

जेता, तेता—जेता जेता सेता तेता। ७७ मा० वृ०

सैल हिमाचल आदिक जेते,

चित्रकूट जसु गावहिं तेते। १३८ अयोध्याकांड,

रा० च० मा०, गीता प्रे

८ क्रिया—

भाषा के स्वरूप के निर्णय में क्रियापद सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होते है। पैंगलम् में उद्धृत कुछ छन्दों में ऐसे क्रियापद प्राप्त होते है जो अवधी या पूर्वरूप हैं—

वर्तमान निश्चयार्थक उत्तम पुरुष, एक वचन

—अउ (उ)—कोहाणल मह मई जलउ। १० व० वृ०

एक दुइ काल जद्दस मह देखउ। १० लो० व०

मध्यम पुरुष

—असि जीवण चाहसि सुक्ख जइ। १६६ मा० वृ०

मम न जानसि पापी कहसि कौन तैं लाग। २७ स० क०

अन्य पुरुष

—अ,—अइ,

पवण बह सिरिर दह

भमण हण तवइ मण। ४० व० वृ०

कह दूतिनि सुन मालति मैना। ३ मै० स०

बहुरि रिसे राजा सो कहई। ४। ८ ह० च०

अपूर्ण कृदत

—त चचल जुव्वण जात ण जाणहि। १३२ मा० वृ०

जेहि सुमिरत मैं मति गति पाई। १ स० क०

भविष्य निश्चयार्थ

—अब सहब कह सुण सहि। १६३ मा० वृ०

सो मै सौंपब तोहि मुआरा। ७ ह० च०

भूतकालिक कृदन्त

—आद्य अवधी में प्राप्त कई भूतकालिक कृदन्ती रूप या उनके पूर्व रूप प्राकृतपैंगलम् में मिलत ह जसे—

सोउ जुहिट्ठिर सकट पावा।

देवक लिक्खअ केण मिटावा। १०१ व० वृ०

या

जिणि आसावरि देसा दिण्हउ। १२८ मा० वृ०

वसिठ बचन तिस भरे सुनावा। १ सौ० क०

विद्या गनपति दीन्ह। ५ स० क०

पूवकालिक—

—इ बधु समदि रण धसउ। १०६ मा० वृ०

कंठ वैठि जो कहइ भवानी। ३ स० क०

९ अव्यय

प्राकृतपैंगलम् में अवधी के कई परिचित अव्यय मिलते हैं। जसे—

कबहु। २०६ मा० वृ०

कहिआ। ८१ व० वृ०

जउ (यदि)। १३० मा० वृ०

कि (विकल्पात्मक) १३६ मा० व०

इन अव्ययों का उल्लेख प्रारम्भिक अवधी के अव्ययों की विवेचना के प्रकरण में मिल जाएगा।

राउल वेल में प्राप्त अवधी या उसके पूर्व रूपों का विवरण नीचे दिया जा रहा है —

१० सत्ता

लघु रूप—

तासु सोह कि कहडा पावइ। ४ रा० वे०

दीर्घतर रूप—अइसी बेटिया जा घर आवइ। ५ रा० वे०

लघु रूपों के अवधी उदाहरण प्रा० पैं० की भाषा पर विचार करते हुए दे दिए गए हैं। दे० ४

११ परसर्ग—

राउल वेल में परसर्गों का प्रयोग बहुत कम हुआ है उसमें प्राप्त परसर्गों में से अधिकांश अवधी में प्रयुक्त हुए है।

करि— ता करि (पा) वइ। ३ रा० वे०

दीस कोस लहि ता करि डारा। २४ स० क०

केर—पहिरणु घाघरेहिं जो केरा। १७ रा० वे०

धुवाँ केर धाराहर पृथ्मी कोई न रहा निदान। १ मै,० स०

सहुं—को तइ सहुँ भइँ बोलइ। २८ रा० वे०

तेहिं ठहराइ लोर सिउ कहा। २२ लो० क०

माँझ—थणहर माझें औ हारु सुतेरउ। २४ रा० वे०

पाथर माझ कीर जनु किही। २१ मिर०

ऊपर—खोपहिं ऊपर अम्वेवल कइसे। २० रा० वे०

जिन्ह सन ऊपर चाव। ६ मै० स०

१२ कारक—

अवधी में प्रयुक्त कई कारक रूप राउरवेल में प्राय ज्यों के त्यों मिलते हैं —

करण—ए० व०

—एँ, महुइ तबोलें मणु-मणु रातउ। २

का होऊ मुँगए दूतें सोरें। १६ सो० क०

सम्बन्ध वाचक—ए० व०—हिं,—ह

जणु मागहिं जल। २५

एते रूप मैं सोतहिं देसी। २६ स० क०

काम्बदूमह आलवालु जइसी भावई। ४२ रा० बे०

नरवह कुछ आन सो मेलसि। २२ मै० स०

बहु वचन—न्ह

सो देरसि हारन्हु भउ अवहारू।

दव दान विप्रन्ह कहं दीन्हा। ३६ स० क०

अधिकरण—ए० व०—ए—हिं

जेहि घरे अइसो आलम पइसइ। १४ रा० बे०

परम आँच जेहि हियरे लगगइ। ४६ सो० क०

आँखिहिं काजल तरलउ दीजइ। २ रा० बे०

रहसि न चाँदा मनहिं लजाई। १७ सो० क०

१३ सर्वनाम—

राउर बेल में प्राप्त कई सवनाम और उनके रूप अवधी में प्रयुक्त सवनाम या उनके पूर्वरूप है —

अन्य पुरुष दूरवर्ती सकेत वाचक

सो—तरुणा जीवन्त करइ सो बाउल। १२ रा० बे०

दया धम सो सदा अधारा। ६ स० क०

ता—अनु कि इ ताकरि (पाँ) वइ। ३ रा० बे०

सती होइ सत ताकर गनिअ। ४३६ मिर०

तासु—तासु सोह कि कछुआ पावइ। ४ रा० बे०

भगिनी तासु देवकी नाऊ। ७/१ ह० प०

ताहि—ताहि कि तूलिम्ब कोऊ पाँवइ। रा० बे०

धा (जा) रतें नार ताहि कर हिया। ७ मै० स०

निकटवर्ती सकेत वाचक—

यह—चाँदहि ऊपर एह भइ टीका। २१ रा० बे०

यह ओरानेउ जाइ। १० मिर०

सम्बधवाचक—

जा—अइसी बेटिया जा घर आवइ। ५ रा० बे०

जाकर पिह परदेसह आवइ। ८ मै० स०
जहिं—जहिं घरे अइसी औलग पइसइ। १४ रा० बे०
जेह घर कंत वे करहिं वैरासू। ६ मै० स०

अनिश्चयवाचक—
कोऊ—राहि कि तूलिम्व कोऊ पावइ। ५ रा० बे०
अइस चलहु नहिं सुधि कोउ पावा। ८ लो० क०
सब—सरणे सावइ मूर्ख्यि। २० रा० बे०
मोहि सभे पिआरी। १२ रा० ज०

१४ क्रियापद—

सहायक क्रिया—
राउर वेल में अवधी में प्रयुक्त निम्नलिखित सहायक क्रियाएँ मिली हैं—
अछइ—दूधि आपणी अछइ। ३६ रा० बे०
गौनी रा (टा) पति जहा आछ रानी। १८ स० क०
भउ—सो देखि हारन्हु भउ अवहार। २४ रा० बे०
हरिखवत भी राजा दिन दिन मगलचार। १८ स० क०
भइ—चाँदहि ऊपर एह भइ टीका। २२
चाँद साथ भई। ६० लो० क०

वतमान निश्चयार्थ।—अन्य पुरुष ए० व०
राउर वेल में वतमान निश्चयार्थ के कई रूप प्राप्त होत हैं। उनमें से अधिकांश अवधी के रूप हैं—
—अइ, जाला काठी गलइ सुहावइ। ३ रा० बे०
बहुरि रिसे राजा सो कहई। ४-/८ हु० च०
—अ, कइड़ा वहुन डहि पर इतरा
(डहि पर = जल पड़ता है)
निसर न कोऊ वार। १४ लो० क०
—अहिं,—(क) य्यू (च्चू) बिच्चहिं जे थण दोसहिं। १७ रा० बे०
दादुर पपिहा कुहकहिं मोरा। १० मै० स०

मध्यम पुरुष ए० व०
—असि,—अहि —अरे अरे वब्वरे देखसि न टीका। २१ रा० बे०
मेहा टेल्लिपुतु सुहुँ मँसहि। १५ रा० बे०
यम न जानसि पापी कहसि कौन तें लोग। २७। स०क०

तजि जिउ सोक न मरहि लजाई। १७ लो० क०

कर्म वाच्य

—ईजइ,—मारें सोना जाउल कीजइ। २४ रा० वे०

तासो कीजइ नेहु। ३ मै० स०

भूतकालिक कृदन्त

राउर वेल मे प्राप्त कुछ भूतकालिक कृदन्तो के रूप इस प्रकार है—

—आ,—ई,—इता

ये या इनके विकसित रूप अवधी काव्यो में पाए जाते है—

—आ—एहा देहु सुहावा टेल्ल। १८

कते दुख कवि अउ (छ) र आवा। ३ स० क०

—ई,—मासहु जइसो जाणी। ४६ रा० वे०

मन चिंता चख नीद गवानी। ५१ लो० क०

—इता,—अपहि कय्यल डहरा दित्ता। १६ रा० वे०

सीत दरद मालिन पुनि गई मैना के बार। २ मै० स०

भानु सम्मान न कीत बयारू। ५१ च० (प)

१५ अव्यय—

राउलवेल के निम्नलिखित अव्यय प्रारम्भिक अवधी में प्रयुक्त हुए हैं—

अजहु। १६, आगे। १६

जाणि। २५

जइसे। २७, जस। ३, जइसी कइसी। १४

कतहुँ। २० स० क०, आगे। २१ रा० ज०

जनि। ५५ लो० क०

अइसा। २६ मै०स०, जस। ५ मै० स० अइस। ८ लो० क०

कइसें। १८ लो० क०

पूर्वकालिक

—इ, सो देखि हारदु भउ अवहारू। २४ रा० वे०

तजि जिउ सोक। १७ लो० क०

१६ प्राचीन अवधी के सर्वाधिक रूप हमें १२वीं शताब्दी की रचना उक्ति व्यक्ति प्रकरण में मिलते है। उक्ति व्यक्ति प्रकरण प्राकृतपैंगलम् या राउर वेल की भाँति काव्य नहीं है। इसमें हमें जनता की बानी का रूप मिलता है। नाचे उक्ति

व्यक्तिप्रकरण में प्रयुक्त ऐसे रूप का उल्लेख किया जा रहा है जो अवधी में प्राप्त होते हैं—

१७ सज्ञा

लघु रूप—

घोड वाग घरि चाल ४८।१२ उ० व्य०

दीघतर रूप—

दुखिआ काल । ३८।२६ उ० व्य०

इन रूपो के उदाहरण प्राकृतपैंगलम् की भाषा पर विचार करत समय दे दिए गए है । दे० ४

१८ कारक

कर्ता कारक एक वचन के लिए उक्तिव्यक्तिप्रकरण में शब्दो के अविकारी रूप प्रयुक्त हुए है । पुल्लिंग बहुवचन म एकारान्त शब्द भी मिलत है । ये रूप अवधी रचनाओ मे भी प्राप्त होते है —

एक वचन—दुह गावि द (दू) धु गुआल । ५।१४ उ० व्य०

नाइ मूड सुनि राजा रहा । १ लो० क०

बहु वचन—बहुतु पूत भए । १५।२८ उ० व्य०

मिरगा पथ लाघि जो जाहो । ५१ च०

दुइ गदिआऐ । १६।१ उ० व्य०

सेवा करहिं राउ औ रानें । ७ मिर०

कम

कम के लिए भी उ० व्यक्ति प्रकरण में अविकारी रूप प्रयुक्त होता है । अवधी में भी अविकारो रूप का प्रयोग कम कारक म हाता है—

याच कावल यजमान । ५।१६ उ० व्य०

बिप्रह् वेद पढे । १७ रा० ज०

करण—

करण कारक में उ० व्य० प्र० में कभी शब्दो के अविकारी रूप और कभी 'एं' प्रत्ययान्त रूपो का प्रयोग होता है । प्रा० अवधी म करण कारक में अविकारी रूप के प्रयोग तो सामान्यत मिल जाते हैं किन्तु 'ए' प्रत्ययान्त रूपो का प्रयोग विरल है ।

घन पुत्र सपुन होउ । ६।२७ उ० व्य०

जोमें चाख । ६।९ उ० व्य०
सहरस सबद हियर फाटउ । १४ मै० सत
का होई कुवरू दूते वीरें । १६ लो० क०

सम्प्रदान—

उ० व्य० प्र० में सम्प्रदान—अहि प्रत्यान्त रूप मिलता है। अवधी में ऐसे रूप मिलते है।

वरहि कन्या द । ५१।३ उ० व्य०
कर उठाइ सबही देहु पाना । ५७ स० द०
सबही (सभी को)

अधिकरण—

उक्ति व्यक्ति प्रकरण में अधिकरण कारक में अविकारी रूप, केवल अनुनासिकान्त तथा एकारान्त या ऐंकारान्त रूपों का प्रयोग हुआ है। ये रूप प्रा० अवधी में भी मिलते हैं—

दुआर पइसति निहुड । ३७।२६ उ० व्य०
मठ बैठि जौं कहई भवानी । ३ स० क०
सेज ओलर । ६।२० उ० व्य०
अभरन पहिरा जउ पिय हारू । ७ लो० क०
मूलें काठे घोआ करउ । ३७।२५ उ० व्य०
सुरज सेज अधियारें लागसि १७ लो० क०
जेहि हियरे लागइ । ४६ लो० क०

११ परसग—

नीचे उक्तिव्यक्ति प्रकरण में प्राप्त उन परसर्गों का उल्लेख किया जा रहा है जो अवधी में मिलते हैं—

किहं—(सम्प्रदान)
का किह । ३१।१०
अइस न जानों काहू किहं परा । ८४ पं
कर—(सम्बन्ध)
राज कर पुण्णु । १६।१६ उ० व्य०
सब महेस कर आसन डोना । ११ स० क०
हुत—(अपादान)
काहू हुत ए पुण्णु आ । ३३।१५ उ० व्य०

सरग हुतें घर उतरि आई। १७ लो० क०

सउ, सेऊं—(करण)

दूँजएं सउ सव काहु तूट। ३७।२३ उ० व्य०

धिए सान्रे सेउ सातु। २१।३१

जा सउ मै आपन जिय हारा। १७ मै०, स०

परम तत सेउ लागइ तारी। २ मिर०

माँझ—(अधिकरण)

एन्ह माझ। १९।२० उ० व्य०

बोलत बोल माँझ मुँह मारइ। १३ लो० क०

२० सर्वनाम—

उत्तम पुरुष

हउ, मै

विआलि को हउ मागिहउ। २२।५ उ० व्य०

को मैं भोजन मागव। २२।६ उ० व्य०

हउ अस बोलिउ चतुर सयानी। ३ लो० क०

मइ बारह तोहि अस्थन दीन्हा। ३ मै० स०

मोहि—

मोहि तहि ने बनाविहति। २१।२१ उ० व्य०

जिन्ह मोहि निरमल ग्यान सिखाऊ। १ रा० ज०

मोर—

मोर क्षेम को करिहू। २१।१२ उ० व्य०

पाउ मोर सूध न परइ। ४२४ मिर०

मध्यम पुरुष—एक वचन

तु, तैं

तु करसि। १६।६ उ० व्य०

तैं काह किअ। २०।१० उ० व्य०

बारह मदिर रैनि तू धावसि। १७ लो० क०

अस ओखर तैं बोलिसि धाई। ७ मै० स०

तोहि—

तोहि। २२।४ उ० व्य०

इस नृप तोही। ५।१ ह० च०

तोर—

कवण तोर भाइ । १६।३० उ० व्य०

मै मारा तोर श्रवन पूता । ६ रा० ज०

बहुवचन—

तुम्ह—

को तुम्ह तारिह । २१।२०

दिन दस तुम्ह यह पथ चलावइ । १० लो० क०

अन्य पुरुष—एक वचन

सो—

जरो हो सो भाजया । १०।७ उ० व्य०

सो चरित्र सब भाखा गावो । ३ ह० च०

ताहि—

सो ताहि साइक । ४७।२० उ० व्य०

चा (जा) रउँ नार ताहि कर हिया । ७ मै० स०

ता—

ताकर पापु ओरस । ३३।२५ उ० व्य०

प्रथमहि चरन चीतवौ ताके । १ । १, ह० च०

बहुवचन

ते—

ते गुणे आणि उपगति । १०।६ उ० व्य०

ते पाछो कल लेहिं निवासा । ६ स० क०

तेन्ह—

तेन्ह माझ । १०।१७ उ० व्य०

तिन्ह भीतर घरे । २ लो० क०

निकटवर्ती संकेतवाचक—बहुवचन

एन्ह माँझ । १६।३० उ० व्य०

द्वात सिंघासन इन्ह पै छाजा । ६ मिर०

सम्बन्धवाचक—एक वचन

जो—

जो निर्गुण हो । १०।८ उ० व्य०

इन्ह वे प्रभ जो होइहि वारा । ७ ह० च०

जेइ—

जेइ जेइ घम पसर। ३३।१४ उ० व्य०

(जिससे जिससे घम फैलता है)

जेइ रे मुना। ४१ लो० क०

जा—

जा किह। १४।३० उ० व्य०

जा कर। १०।३५ उ० व्य०

जा कह कछू हाथ के देई। ३८ लो० क०

जाकर पिह परदेसइ आवइ। मै० स०

बहुवचन—

जे—

जे सबहि न उपकरति। १०।१६ उ० व्य०

तीन भुवन जे भरि पुर राखा। २ रा० ज०

प्रश्न वाचक—एकवचन

कवण, को—

कवण ए छाती खणावत आच्छ। २१।१४ उ० व्य०

पिउ गारुड बिन कउन जिवावे। २६ मै० स०

को ए। १६।१८

अपनी मति को ओरइ पारा। ३ स० क०

केइ—

अम्ह पास केइ पन्थ। २१।१६ उ० व्य०

केइ र (रे) निपूती चांदा कोसी। ४५ लो० क

का—

कारऍ मठ छात्र ईहाँ पढा। २६।६ उ० व्य०

काकर धरम पाप कह करा। २१ मै० स०

अप्राणि वाचक—

काह—

काह ईहाँ कीज। २७।४ उ० व्य०

आँपि के माटक काह दहूँ हाई। ४३५ मिर०

अनिश्चय वाचक—

कोउ—

राजा जइ कोउँ। २१।१६ उ० व्य०

अदा पलटु नहिं सुधि कीउ पावा । ८ सी० क०

गाहु—

दूजणें राउँ सब गाहु तूट । ३७।२३ उ० व्य०

सब गाहू घर बार सभारेउ । ६ मे० स०

किछु—

जा किछु कीज । १५।१५ उ० व्य०

जो कछु अहे हमारें । १ चं

निज वाचक—

आपण—

आपण पूतु हराव । ३८।१३ उ० व्य०

जाहु राज भर आपना । १५ स० क०

आपणे—

आपणे आलाप । ४४।२८ उ० व्य०

जाहु तुरत घर आपने । ५४ स० क०

नित्य सम्बन्धी—

जो, सो—

सो पूते जणि जाम जो निर्गुण हो ।१०।८ उ० व्य०

चाँद कहा सो मूरुख जो अइसहिं पतिपाइ । २७ सी० क०

२१ अव्यय—

तब—३३।१०,

जब—३३।१०

जैसें—३३।१२

कैसें—३२।१

जैसें—३३।१२

जइ—२१।१६

जणि—१०।७८

न—२०।१०

पुनि—४५ १५

उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा के विवेचन के अन्तर्गत सुनीति बाबू ने वर्तमान निश्चयार्थ रूपों की जो तालिका दी है वह इस प्रकार है—

दे० १५ उ० व्य० प्र०

	एक वचन	बहु वचन
अन्य पुरुष	करइ (करइ, बहुत कम)	करहिं
मध्यम पुरुष	करसि	करहु
उत्तम पुरुष	करउ, करौं	करहु

अवधी की रचनाओं में, उ० व्य० के अन्य पुरुष बहु वचन और उत्तम पुरुष बहु वचन के—अंति,—अहु रूप नहीं मिलते है। अन्य रूप मिलते है।

अन्य पुरुष—एक वचन

निसर न कोऊ बार। १४ लो० क०

कपट रूप परत्रिया जो देखै। २८ स० क०

मध्यम पुरुष—एक वचन

मम न जानसि पापी। २७ स० क०

मध्यम पुरुष—बहु वचन

तुम्ह काहे जूझहु। ६५ लो० क०

उत्तम पुरुष—एक वचन

जाता देखउ यह ससारू। १ मै० स०

कर्म वाच्य—

इअ,—ईज,

पढिअ। २०।२६ उ० व्य०

काह कीज। २०।२० उ० व्य०

पाइअ। १ लो० क०

कीज। ६ लोक क०

भविष्य निश्चयार्थ—

अन्य पुरुष—एक वचन

इह,

उपाव करिहृ। ६।२३ उ० व्य०

प्रान घटत घट जाइह

लै मै पारि तोरि कै खाइह। ८६ मिर (चि)

मध्यम पुरुष—एक वचन

इहसि,

काह करिहसि। २०।११ उ० व्य०

जो न देहसि मेरें। ४६ च (प)

अव,

घा मई भोजन मांगव । २२।६ उ० ड

सो मैं सौंपव तोहि गुआरा ।७ हं० च

उत्तम पुरुष—एक वचन

इहउ,

पो हउ मागिहउं । २२।५ उ० व्य०

तोरें बचन चाद जइ पइहउ । ५२ सो० क०

अनुज्ञार्थ—

मध्यम पुरुष—एक वचन

उ—

सवहिं भूत दया करु । ६।३२

करु मो मह जस परै विचारा । ५ रा० ज०

असि—

प (र) पु जणि करसि । १०।११

कहसि कोउ त लोग । २७ स० क०

उत्तम पुरुष—एक वचन

अउ—

हउ पावत उ टालउ । ६।२६

तेहि दिन करउ बधावता । मै० स०

भविष्य अनुज्ञार्थ—

ऐसु—

बम्हण इ पर निवतसु । १६।२३

प्रारम्भिक अवधी की किसी रचना म इसका कोई उदाहरण मुझे नहीं मिला है। किन्तु अवधी की परवर्ती रचनाओं में इस रूप की कमी नहीं है। देखिए इवोल्यूशन आफ अवधी, ३११।

सामान्य भूत—भूत कालिक कृदन्त

उक्तिव्यक्ति प्रकरण मे निश्चयार्थ भूत के जो रूप मिलते है उनमें से अधिकाश अवधी की रचनाओं में भी उपलब्ध हैं—

अन्य पुरुष—एक वचन—पुलिंग

आ—

बेटा काहा गा । २२।१ उ० व्य०

जेहि बाटन गा लोरक साइ । ५३ च

एसि—(अन्य पुरुष एक वचन)

भोजन कियेसि । ६।८ उ० व्य०

बाधेसि सीस मारि कै बारा । ६ च०

इसि—

नइ काहें (केन टीका) पवरिसि । २२।१० उ० व्य०

जो मागिसि सो पाइसि । १३ मिर०

ए—

कालिदास माघ कैतो एक खाति गए ।१०।१७

कौडी कौडी जोर मूए किरपन बापुरे । १ मै० सत

एसि—(मध्यम पुरुष एक वचन)

कैसें तो तो छूटेसि । २३।१७

की तै भूलि पैरसि बन आई । २९ स० क०

पूर्व कालिक—

इ,—

जेंविजा । २०।२२ उ० व्य०

मैना देखि मरइ पै चाहा । ८० लो० क०

क्रियार्थक संज्ञा—

अण—

पढण आव । ११।२३ उ० व्य०

कहन अस लागे । ८ हु० च०

अब—(विकृत रूप)

गाउ जावें किह सजव । ११।२२ उ० व्य०

सो महेस सम कहबे लीन्हा । १४ स० क०

प्रेरणार्थक—

आवा—

पढाव । १३।२६, उ० व्य०

दुहाव । १३।२७ उ० व्य०

लड़ावा । ३, स० क०

पढ़ावहि । १६ स० क०

सहायक क्रिया—

उक्ति व्यक्ति प्रकरण में आछ, हो, अह् और रह् सहायक क्रियायें मिलती हैं। दे० उ० व्य० ८८ । ये सहायक क्रियाएँ अवधी की रचनाओं में प्राप्त होती हैं।

आछे । १८ सं० क०
होई । ३७ सो० क०
आहि । ५ रा० ज०
रहही । ८ मिर०

२३ उपर्युक्त पक्तियों में प्राकृत पैंगलम् राउर बेल और उक्तिव्यक्ति प्रकरण मे से उन रूपो को प्रस्तुत किया गया जो अवधी में भी प्राप्त होते हैं। इन रूपों से और अवधी की रचनाओ में उपलब्ध इनके समान या विकसित रूपों में सम्बन्ध सूत्र जोड़ना ही हमारा उद्देश्य है। प्राकृत पैंगलम् के विवेचित छदों, राउर बेल और उक्तिव्यक्ति प्रकरण की भाषा को अवधी नाम नहीं दिया जा सकता। ये अवधी के पूर्व रूप के कुछ लक्षण प्रस्तुत करते है। इसके अतिरिक्त भाषा विशेष के रूप में १२वी १३ वी शताब्दी तक अवधी का कोई उल्लेख अब तक नही प्राप्त हुआ है।

२४ डा० चटर्जी ने उक्तिव्यक्ति प्रकरण की भाषा को प्राचीन कोसली कहना उचित समझा है। किन्तु ८वी शती में रचित कुवलय माला में कोसली के उल्लेख को ध्यान में रखते हुए १२वी शती की भाषा के रूप को प्रकट करने वाले उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा को प्राचीन कोसली कहना युक्तिसगत नही प्रतीत होता। इसके अतिरिक्त कोसली का भाषा क्षेत्र और उसकी भाषागत विशेषताओं का सम्यक निर्धारण अभी तक नही हुआ है। इसलिए हमने प्राकृत पैंगलम् राउर बेल के विवेचित अशो और उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा को कोसली न कह कर अवधी की निकटतम पूर्वजा भाषा कहा है। हाँ, इन ग्रन्थों की भाषा एक निश्चित सीमा तक 'कोसली' के लक्षण अवश्य प्रकट करती है। उपर्युक्त विवेचन का मतव्य यह है कि १४वी शताब्दी में अवधी भाषा का जो सुनिश्चित स्वरूप मुल्ला दाउद की रचना चदायन से मिलने लगता है, उसका रूप प्राकृत पैंगलम् के कुछ छदो राउर बेल और उक्ति व्यक्ति प्रकरण में मिल जाता है। अत भाषा के विकास क्रम की दृष्टि से इन रचनाओ के विवेचित अशो की भाषा और अवधी में गहरा सम्बन्ध है। और यह भाषा अवधी के कई-कई पूर्व रूपो से युक्त है।

□□

प्रारम्भिक अवधी के अध्ययन की सामग्री

१—चंदायन

२—मैनासत

३—राम जन्म

४—सत्यवती कथा

५—स्वर्गारोहिणी कथा

६—मिरगावत

७—हरि चरित



प्रारम्भिक अवधी की सामग्री

२५ भाषा रूप म उल्लिखित होने के पूव (दे० १) भी किसी न किसी मात्रा में अवधी का साहित्य विद्यमान रहा होगा, किन्तु हमें अभी उसकी पर्याप्त जानकारी नहो है। इस उल्लेख के बाद अवधी की जो प्रथम रचना हमें प्राप्त होती है वह मुल्ला दाऊद की है नीचे उस पर और प्रारंभिक अवधी की अय रचनाओ पर विचार किया जा रहा है।

चदायन*

२६ लौरिक और चादा की प्रेम कथा उत्तरी भारत में प्राचीन काल से प्रचलित है। १४वी शताब्दी मे कवि शेखराचाय ज्योतिरीश्वर की प्रसिद्ध पुस्तक वर्णरत्नाकर म नगर वणन के अतगत 'लोरिक नाचो अर्थात् लोरिक नृत्य का उल्लेख हुआ है,[1] जिससे प्रकट होता है कि जनता में लोरिक नाच उस समय प्रचलित था। इस लोक प्रचलित प्रेम-कथा का नायक लोरिक आभीर था। आज भी बिहार और उत्तरप्रदेश में 'लारिक' आभीरा का जातीय गान है। आभीरा की इस जातीय विशेषता को प्रकट करने वाली एक लोकोक्ति का उल्लेख ग्रियसन ने अपने एक लेख 'द बय आफ लोरिक' में किया है।[2] लोरिक और चादा की

१ नगर वणन (ख) प्रथम कल्लोल, वर्णरत्नाकर स० डा० सुनीतिकुमार चटर्जी, बबुआ मिश्र, रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ बगाल कलकत्ता, १६४०।

२ दि बय आफ लोरिक, लेखक ग्रियसन पृ० ६५०, माडर्न स्टडीज इन आनर आफ चार्ल्स राकवेल लानमन।

* आगे इस रचना के नामकरण पर विचार करते समय यह विचार प्रकट किया गया है कि सम्भवत काव्य का वास्तविक नाम चदावत था। डा० माताप्रसाद गुप्त ने इसे 'लोरकहा कहा है। यहाँ 'चंदायन शीषक केवल अधिक प्रचलित होने के कारण रखा गया है।

प्रेम-कथा पर आधारित काव्य की सूचना सर्वप्रथम गार्सां द तासी ने अपनी पुस्तक 'हिस्तोरे द ल' लितरेत्योर हिंदुई एत हिंदुस्तानी में दी थी।[१] इसके पश्चात् हिन्दी साहित्य के कई इतिहासकारों और लेखकों ने अपने नामों से इस प्रेम कथा का उल्लेख किया।[२] किन्तु उनसे इस काव्य पर कोई विशेष प्रकाश न पड़ सका जिसका कारण सम्भवतः यह था कि काव्य अनुपलब्ध था।

इस काव्य के विषय में प्रामाणिक सूचना सर्वप्रथम बाबू ब्रजरत्न दास ने अपनी पुस्तक 'खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास' में दी।[३] उन्होंने लिखा कि अलबदायूनी द्वारा लिखित फारसी के इतिहास ग्रंथ मुंतखब उत्तवारीख में इस काव्य की और इसके रचयिता की चर्चा की गई है। मुंतखब उत्तवारीख के अनुसार ७७२ हिजरी में मन्त्री खानजहाँ की मृत्यु हुई और उसके पुत्र जूना शाह ने वह उपाधि धारण की। मौलाना दाऊद ने उसके सम्मान में हिंदवी भाषा में 'चन्दायन' नामक मसनवी की रचना की जो लोरिक प्रेमी और उसकी प्रेमिका की कथा पर आधारित है। तवारीख के अनुसार यह काव्य अत्यन्त लोकप्रिय था और जब धर्मोपदेशक मख्दूम शेखतकीउद्दीन मिम्बर से इस काव्य के अंश पढ़कर सुनाते थे तो लोगों पर इसका विचित्र प्रभाव पड़ता था।[४]

अवध सूबे और रायबरेली जिले के गजेटियरों में डलमऊ के मौलाना दाऊद और उनकी भाषा पुस्तक चन्द्रैनी का उल्लेख है।[५] इन गजेटियरों के अनुसार

---

१ अनुशीलन पृष्ठ ११, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त द्वारा संपादित चंदायन के आधार पर।

२ (क) पृ० २४६, प्रथम भाग, मिश्रबंधु विनोद, सं० १९७६।
(ख) पृ० १४७ हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का विकास सं० १९९७, लेखक हरिऔध।
(ग) पृ० २०, २१, दि निर्गुन स्कूल आफ पोएट्री, लेखक डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल (हिंदी अनुवाद) सं० २००७।
(घ) पृ० १३१, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (द्वितीय संस्करण), १९५४ ई०।

३ पृ० ६४, खड़ी बोली हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं० १९९८।

४ पृ० ३३३, प्रथम भाग, मुन्तखबउत्तवारीख ले० अब्दुलकादिर इब्ने मलूक शाह अनुवादक जी० एस० ए० रेन्किंग, १८९८ ई०

५ पृ० १९२, भाग ३९, रायबरेली डिस्ट्रिक्ट गजेटियर आफ द युनाइटेड प्राविंसेज और पृ० ३५५, भाग १, गजे० ऑफ दि प्राविंस आफ अवध

दाऊद एक ऐसे विद्यालय में काम करते थे जिसकी स्थापना फीरोजशाह तुगलक ने मुस्लिम धर्म और सिद्धांतो के प्रचार के लिए की थी। अवध गजेटियर के अनुसार मुल्ला दाऊद ने चन्देनी की रचना ७७९ हि० में की थी।

२७ सम्पादन

काव्य का सम्पादन तीन विद्वानो ने अलग-अलग किया है। डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित संस्करण 'लोरकहा'[1] नाम से तथा डा० विश्वनाथ प्रसाद[2] और डा० परमेश्वरी लाल गुप्त[3] के संस्करण 'चन्दायन' नाम से प्रकाशित हुए हैं। नामो पर हम आगे विचार करेंगे। यहा पर तीनों सम्पादित संस्करणो का विवरण उनकी भूमिकाओं के आधार पर दिया जा रहा है—

२८ लोरकहा—(लो०क०)

लोरकहा का सम्पादन डा० माताप्रसाद गुप्त ने निम्नलिखित तीन हस्तलेखों के आधार पर किया है।

१—कला भवन की प्रति काव्य के छ पन्ने भारत कला भवन काशी में हैं, इन पन्नो के एक ओर काव्य के छन्द हैं और दूसरी ओर कथा से सम्बद्ध चित्र। चित्रों के विषय में डा० वासुदेवशरण अग्रवाल का अनुमान है कि उनकी शैली १५ वीं १६ वी शताब्दी ईस्वी की है।[4] डा० माताप्रसाद गुप्त ने डा० अग्रवाल के इसी कथन के आधार पर अनुमान किया है कि यह हस्तलेख रचना के सौ वर्ष से अधिक बाद का नहीं होगा।[5] लोरकहा के प्रारम्भिक छ छन्द इसी हस्तलेख के हैं।

२—मनेर शरीफ के खानकाह की प्रति यह प्रति पटना विश्वविद्यालय के अध्यापक सैयद हसन अस्करी को मनेर शरीफ खानकाह से प्राप्त हुई थी। इसमें कुल ३२ पन्ने हैं। प्रति में आरम्भिक १४३ पन्ने तथा १७८ के बाद के पन्ने नहीं हैं, बीच में भी एकाध पन्ने गायब हैं। लिपि फारसी है। डा० गुप्त

१ लोरकहा-क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ आगरा विश्व०, १९६२ ई०
२ चंदायन—प्रकाशक—वही
३ चन्दायन, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड, बम्बई, १९६४ ई०।
४ पृष्ठ २, भूमिका, लोरकहा।
५ पृष्ठ ३, वही

के अनुसार 'असम्भव नही कि (प्रति) सोलहवीं सत्रहवीं शताब्दी की है।[१]

३—शिमला संग्रहालय की प्रतियाँ शिमला संग्रहालय में रचना की दो प्रतियाँ सुरक्षित है। एक प्रति में ६ पन्ने और दूसरी में केवल १ पन्ना है। इन पन्नो पर भी कलाभवन की प्रति की भाँति एक ओर काव्य है और दूसरी ओर कथानक से सम्बद्ध चित्र है। ६ पन्नो वाली प्रति की लिपि अरबी है और १ पन्ने वाली प्रति की फारसी। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार चित्रो की शैली १५ वी शताब्दी की है।[२] लोरकहा के छन्द क्र० ७० से ७६ इन्ही प्रतियो पर आधारित है।

इनके अतिरिक्त भोपाल प्रति के दो पृष्ठो के फोटोग्राफ भी डा० गुप्त को भोपाल आर्कियोलाजिकल विभाग के सुपरिंटेंडेंट डा० तैमूरी से प्राप्त हो गए थे। इनमें से एक बन्द तो कलाभवन की प्रति म ज्यो का त्यो मिलता है और एक लोरकहा का अन्तिम (८०वाँ) बन्द है। इस प्रति में भी कुछ चित्र है जो सम्पादक के अनुसार १५ वी १६वी शताब्दी के लगते है।[३]

२६ चदायन (च)

डॉ० माताप्रसाद गुप्त को लो० क० का सम्पादन करते समय भोपाल प्रति के दो ही बन्द प्राप्त हो सके थे। बाद मे डा० विश्वनाथ प्रसाद ने उस प्रति को डा० मोतीचन्द जी के माध्यम से प्राप्त कर लिया। डा० प्रसाद ने काव्य का सम्पादन उसी प्रति के आधार पर किया है। उनके अनुसार काव्य का नाम चन्दायन है न कि लोरकहा।[४] भोपाल वाली प्रति के कुछ बन्द मनेरशरीफ शिमले और कलाभवन की प्रतियो में भी मिल जाते है। डा० विश्वनाथ प्रसाद ने ऐसे स्थलो का निर्देश यथास्थान कर दिया है।

३० चदायन [च(प)]

चदायन नाम से ही इस काव्य का सम्पादन डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने भी किया है। डॉ० गुप्त ने परिश्रमपूर्वक काव्य की माइक्रोफिल्म मैनचेस्टर के जान रीलेण्ड्स पुस्तकालय स प्राप्त की। इसके अतिरिक्त उन्होने अमेरिका निवासी चेसिस होफर के संग्रह से उसके दो पृष्ठ प्राप्त किए। इसके अतिरिक्त पटियाले के

---

१ भूमिका, लोरकहा।

२ वही।

३ पृष्ठ, ४, वही।

४ पृष्ठ ४, प्रस्तावना, चन्दायन, स० डॉ० विश्वनाथ प्रसाद।

पंजाब राजकीय सग्रहालय में सुरक्षित १० चित्रों की दूसरी ओर फारसी लिपि में लिखा हुआ काव्य का कुछ अश डा० परमेश्वरलाल गुप्त को उपलब्ध हो गया जिसका उपयोग उन्होंने सम्पादन में किया।

इस प्रकार हिंदी के पाठकों के सम्मुख दाऊद की रचना के तीन सम्पादित सस्करण विद्यमान है। लोरकहा और चदायन (च) में काव्य के कथानक का कोई निश्चित स्वरूप नहीं उभरता क्योंकि जिन हस्तलेखों के आधार पर इनका सम्पादन किया गया है उनमें प्राप्त छद कथानक की दृष्टि से क्रमबद्ध नहीं मिले है। डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त द्वारा सम्पादित चदायन में कथानक की क्रमबद्धता है। अत च (प) में काव्य के कथानक का स्पष्ट रूप हमें देखने को मिलता है। यद्यपि उसमें भी अंतिम अश अप्राप्त है।

३१ काव्य का नाम

ऊपर प्रसगत इस बात का उल्लेख हो गया है कि डा० माताप्रसाद गुप्त ने दाऊद की रचना को 'लार कहा' और डा० विश्वनाथ प्रसाद तथा डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने 'चदायन' कहना उचित समझा है।

डा० माताप्रसाद गुप्त ने इस काव्य को 'लोर कहा' निम्नलिखित अर्धाली के आधार पर कहा है—

लोर (लोर) कहा मइ यहि खड गाउ (गावउ)
कथा काव कइ लोग सुनाऊ (सुनावउ)।[1]

मनेर शरीफ के हस्तलेख में यह अधाली स्पष्ट नहीं है। देखने में एक नुक्ता दिया गया है।[2] ऐसी स्थिति में इसे नूर कहा पढा जाना चाहिए था। किंतु फारसी हस्तलेखों में नुक्तों के नियम का पालन पूर्णत नहीं हो पाता है। इस बात को ध्यान में रख कर इसे 'लोर कहा' भी पढ़ा जा सकता है। डॉ० विश्वनाथ प्रसाद और डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने उसे लोर कहा पढ़ा है। किंतु डॉ० माताप्रसाद गुप्त नुक्ता को सम्भवत लिपिकार का प्रमाद मानकर इसे 'लोर कहा' पढ़ना ठीक समझा है। और काव्य को लार कहा कहा है।

डॉ० विश्वनाथ प्रसाद ने इस नामकरण का खडन करते हुए अनेक प्रमाणों के आधार पर[3] और परमेश्वरी लाल गुप्त ने हिंदी साहित्य के इतिहासकारों

१ ५६ लो० क०

२ दे० पृष्ठ ३, प्रस्तावना चदायन स० डॉ० विश्वनाथ प्रसाद, पर दी हुई फोटोस्टाट प्रतिलिपि।

३ पृष्ठ ३६, वही।

और मुन्तख़बउत्तवारीख़ तथा रामपुर और बीकानेर के हस्तलेखों[1] का हवाला देते हुए काव्य को 'चंदायन' कहना उचित समझा है।

इसमें सन्देह नहीं कि ऐसे उल्लेख पर्याप्त संख्या में मिलते हैं जिनमें लोरिक और चंदा की प्रेम कथा पर आधारित इस काव्य को चंदायन कहा गया है। किन्तु रचना में काव्य के नाम का उल्लेख नहीं मिलता। डॉ० विश्वनाथ प्रसाद ने अवश्य एक ऐसे स्थल का निर्देश चं० की प्रस्तावना में किया है। उन्होंने मनेर शरीफ़ की उक्त अर्धाली वाले छंद की एक अन्य अर्धाली उद्धृत की है और लिखा है कि इसमें दाऊद कवि की रचना को चंदा कहा गया है[2] —

दाऊद कवि जो चांदा गाई
जेंइ रे सुना सो गा मुरझाई।

डॉ० प्रसाद ने लिखा है कि 'इसमें चांदा या 'चन्दायन' नाम का ही उल्लेख है। इससे स्पष्ट विदित होता है कि दाऊद कवि ने जिस ग्रंथ की रचना की थी उसका नाम 'चाँदा' या 'चंदायन' ही था।[3]

यहाँ 'चाँदा' को दाऊद की रचना का नाम समझना उचित नहीं प्रतीत होता। दाऊद की रचना को 'चांदा' अन्यत्र कहीं नहीं कहा गया है। 'चाँदा' का अभिप्राय यहाँ 'चाँदा की प्रेमकथा अधिक उपयुक्त लगता है। चं० (प) में इस प्रेमकथा या उससे सम्बद्ध गान विशेष के लिए 'चंदरावल' शब्द का प्रयोग मिलता है।[4] गोवर छोड़ने के पश्चात् चांदा के रूप को देखने के कारण उन्मत्त बने हुए बाजिर ने रूपचंद की नगरी में पहुँच कर एक सुहानी रात में तार ठोक कर 'चंदरावल' गाया जिससे पूरा नगर झंकृत हो उठा —

तिहँ रात सुहावन बाजिर ठोका तार
गाइ गीत चंदरावल नगर भयउ झनकार। ७१ चं० (प)

राजा नेमी ने यह गीत सुना और बाजिर को बुलाकर उससे फिर वही गीत गाने का अनुरोध करते हुए कहा कि आज रात तूने जो गाया उस चंदरावल से मेरे मन में लहरें उठने लगीं —

आज रात निसहैं तैं गावा
चंदरावल मन रहसा लावा। ७२ चं० (प)

---

१ पृष्ठ २० २१, परिचय, चन्दायन, सं० डा० परमेश्वरीलाल गुप्त।
२ पृ० ५, प्रस्तावना, चं०
३ वही।
४ ७१, चं० (प)।

डॉ० विश्वनाथ प्रसाद ने प्रस्तावना में लिखा है कि लोरक चदा की लोक-कथा भोजपुरी प्रदेश में बहुत प्रचलित है। वहाँ इसके लिये लोरिकायन, लोरिकी, चनैनी आदि नाम ही व्यवहृत होते हैं।[1] 'चाँदा' और 'चदरावल' को भी इन्हीं लोक प्रचलित नामों की श्रेणी में मानना उचित है। लारिक, लोरिकायन, चाँदा, चन्दरावल, चनैनी—ये सभी लोरिक और चादा की प्रेम कथा पर आधारित गान या नृत्य के नाम प्रतीत होते हैं। 'वर्ण रत्नाकर' में उल्लिखित 'लोरिक नाचो' इस अनुमान की पुष्टि करता है।

'मुन्तखबउत्तवारीख' में दाउद द्वारा रचित काव्य का नाम 'चन्दावन' दिया हुआ है।[2] सम्भवत दो नुक्ता की जगह एक ही नुक्त के कारण 'चन्दावत' या 'चन्दावत' को चन्दाबन पढ लिया गया है। सम्भवत सूफी कवियों द्वारा रचित अन्य कई काव्यों की—पद्मावत, मिरगावत—की भाँति इस काव्य का नाम भी चन्दावत था। मुझे दो मुसलमान सज्जन ऐसे मिले हैं जो दाऊद की रचना को 'चन्दावत' के ही नाम से जानते हैं।[3] लारिकायन, लोरिकी, लोर कहा, चननी या चन्दायन लोक प्रचलित नाम प्रतीत होते हैं, और चन्दावत सूफी काव्यो की परम्परा में प्रचलित नाम।

३२ कवि और रचनाकाल

काव्य में कई स्थानो पर दाऊद का उल्लेख रचनाकार के रूप में हुआ है—

ब (फि) रके चादा जूझि उपावा।
भई जूझि जस दाउद गावा। ५७ च०
सिराजदीन जो समद (खामिद) दाऊद कहे सवारि। २५ च०
दाऊद कवि जो चादा गाई। ५६ लो० क०

मुन्तखबउत्तवारीख के अनुसार ७७२ हिजरी (सन् १३७० ई०) में मलिक मक़बूल के जिसकी उपाधि खानजहाँ थी, मरने के बाद उसके पुत्र जूनाशाह को भी वही उपाधि मिली। उसके नाम से मौलाना दाऊद ने हिंदवी ज़बान में

१ पृ० ५, प्रस्तावना च०।

२ पृ० ३३३, प्रथम भाग, अग्रेजी अनुवाद, रैंकिंग, १८९८ ई०

३ इन दो सज्जनो के नाम और पते निम्नलिखित हैं —

(१) डॉ० खलील अजुम, अध्यापक, उर्दू विभाग, करोड़ीमल कालेज, दिल्ली।

(२) श्री असद, 'शोध छात्र', हिंदी विभाग, पजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़।

लोरिक और चादा नाम के प्रेमी और प्रेमिका की कथा पर आधारित 'चंदायन' की रचना की।[1]

इससे प्रकट होता है कि दाऊद मौलाना थे और उन्होंने इस काव्य की रचना हि० ७७२ के बाद की थी। रायबरेली जिले और अवध सूबे के गजेटियरों में उस उल्लेख की चर्चा ऊपर हो चुकी है, जिसमें उन्हें फीरोज शाह तुगलक द्वारा स्थापित धार्मिक विद्यालय से सम्बद्ध बताया गया है। बदाऊनी द्वारा उल्लिखित खानजहाँ जूनाशाह की प्रशंसा दाऊद ने अपनी रचना में इस प्रकार की है —

खान जहाँ खरि जुग जुग खानो। अति नागर बुधवन्त सिनानो
चतुर सुजान भाख सब जाना। रूपवन्त मन्तरी सुजाना
एक खम्भ मन्दिरि वह कीन्हा। डोल परै जो होत न दीन्हा
थकें पैरें लोग चढावइ। कर गुन खीचि तीर लइ लावइ
हिन्दू तुरुक दुहूँ सम राखै। सत जो होइ दुन्हु कह भाखै
गउव सिंह एक पथ रेंगावइ। एक घाट दुहुँ पानी पियावइ
एक दीठि देखइ सैंसारु। अचल न चलैं चलै बेवहारू
मेरु घरनि अस मारन जग भारन सस्यार
खानजहानहु कौन बड़ाई बड जो कीन्हि करतार

—११, १२ च० (प)

प्रशसित मन्त्री खानजहाँ जिनके सम्मान में दाऊद ने रचना की थी, दाऊद के आश्रयदाता मालूम पडते हैं। डा० विश्वनाथ प्रसाद का यह अनुमान ठीक लगता है कि 'खानजहाँ' की ऐसी प्रशंसा है जो किसी आश्रयदाता की ही हो सकती है।[2]

दाऊद ने शाहेवक्त के रूप में दिल्ली के सुल्तान फीरोजशाह की प्रशंसा की है। इसी के साथ साथ कवि ने काव्य का रचनाकाल दिया है और डलमऊ नगर का वर्णन किया है—

बरिस सात सै होइ इक्यासी। तिहि जाह कवि सरसेउ भासी
साहि फिरोज दिल्ली सुलतानू। जौना साहि बजीरु बखानू
डलमऊ नगर बसै नवरंगा। ऊपर कोट तले बहि गंगा।

—१७ च० (प)

---

१ पृ० ३३३, मुन्तखबउत्तवारीख।
२ पृ० ११, प्रस्तावना, च०

इस पद से प्रकट होता है कि ७८१ हि० (१३७९ ई०) में कवि ने इस सरस काव्य की रचना की। उस समय दिल्ली की गद्दी पर फीरोजशाह (तुगलक) विद्यमान था। जूनाशाह उसका वजीर था। कवि ने काव्य की रचना डलमऊ में की जो गंगा के किनारे स्थित था। मुतखबउत्तवारीख के अनुसार ७७२ हि० में खानेजहाँ वजीर की मृत्यु के बाद जूनाशाह खानेजहाँ की उपाधि और मन्त्रि पद से विभूषित हुआ और उसके सम्मान में दाऊद ने हिन्दवी ज़बान में चन्दायन की रचना की। इस पद से मुतखबउत्तवारीख के उल्लेख की पुष्टि हो जाती है। जूनाशाह के शासनकाल के ९ वें वर्ष काव्य की रचना हुई।

एक पद में कवि ने शेख जैनदी को अपना पथ प्रदर्शक कहा है।[1] जिससे प्रकट होता है कि शेख जैनदी दाऊद के गुरु थे। डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने लिखा है कि शेख जैनदी से कवि का तात्पर्य शेख जैनुद्दीन से है जो सुप्रसिद्ध चिश्ती संत हज़रत नसीरुद्दीन अवधी चिराग़ ए दिल्ली की बड़ी बहन के बेटे थे।[2] काव्य में प्रसंगतः मलिक मुबारक, मलिक बया, नयन, सिराजुद्दीन और मीर ममूद के नाम आए हैं, जो कवि के जीवन पर कोई विशेष प्रकाश नहीं डालते।[3]

३३ काव्य की भाषा

इस काव्य की भाषा का सम्यक् विवेचन तो आगे किया जाएगा, किन्तु यहाँ इसकी भाषा के विषय में मोटे तौर पर कुछ विचार कर लेना आवश्यक है क्योंकि दाऊद के काव्य की भाषा के विषय में विद्वान संपादकों में पर्याप्त मतभेद है। डॉ० माता प्रसाद गुप्त 'लोरकहा' की भाषा को अवधी और ठेठ अवधी कहते हैं।[4] जबकि डा० विश्वनाथ प्रसाद उसमें खड़ी बोली, अवधी, व्रजभाषा इन सबका सम्मिश्रित रूप पाते हैं।[5] डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त के अनुसार चंदायन की भाषा को अवध के सीमित प्रदेश में ही बोली और समझी जाने वाली भाषा अवधी का नाम नहीं दिया जा सकता।[6] डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त ने इस विषय में तनिक विस्तार से विचार किया है तथा उक्ति व्यक्ति प्रकरण और राउलवेल की भाषा का उदाहरण देकर दिखाया है कि 'दाऊद ने

---

१ ९। च० (प)
२ पृ० २०, परिचय स० (प०)
३ पृ० १३, १७, ३६०, च० (प०) २४, २५। च०
४ पृ० ६, भूमिका लो क०
५ पृ० १४, प्रस्तावना च०
६ पृ० ३२, परिचय, च० (प)

अपने काव्य के लिए ऐसी भाषा को अपनाया था जो अपभ्रंश साहित्य की दान्य परम्परा से विकसित होकर व्यापक रूप से देश के विस्तृत भू भाग में प्रचलित थी।[१] तात्पर्य यह कि चन्दायन की भाषा के विषय में डॉ० विश्वनाथ प्रसाद और डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त के विचार लगभग समान हैं। उनके अनुसार चन्दायन की भाषा का रूप मिश्रित है।

किसी कृति की भाषा का निर्णय विवेचन के आधार पर होना चाहिए न कि इस बात पर कि उसका प्रचार कहाँ था ? डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त ने डॉ० श्याम मनोहर पाण्डेय के इस तर्क को, कि दाऊद ने डलमऊ में रह कर अवधी में रचना की है क्योंकि डलमऊ अवधी क्षेत्र में पड़ता है, काटते हुए लिखा है कि अब्दुल कादिर बदायूनी ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि 'चन्दायन' दिल्ली सल्तनत के प्रधान मन्त्री जूनाशाह के सम्मान में रचा गया था और दिल्ली में मख्दूम शेख तकीउद्दीन रब्बानी जन समाज के बीच उसका पाठ किया करते थे। यह कथन इस बात की ओर संकेत करता है कि चन्दायन की भाषा वह भाषा है जिसे दिल्ली के प्रधान मन्त्री जूनाशाह से लेकर दिल्ली की सामान्य जनता तक पढ़ और समझ सकती थी।[२] डॉ० परमेश्वरी लाल का मन्तव्य है कि (१) चूंकि जूनाशाह दिल्ली के सुल्तान का प्रधानमन्त्री था इसलिये वह अवधी न जानता रहा होगा और इसलिये दाऊद ने अवधी रचना न की होगी। डॉ० गुप्त के मन में सम्भवतः यह बात बसी है कि जिस व्यक्ति के सम्मान में जो रचना की जाती है उसकी भाषा वही हो सकती है जो सम्मानित व्यक्ति की होती है। स्पष्ट ही यह धारणा अपुष्ट है। (२) चूंकि दिल्ली के जन समाज में इसका पाठ होता था और लोग इससे प्रभावित होते थे इसलिये यह दिल्ली की भाषा रही होगी। इस तर्क के आधार पर रामचरितमानस और सूरसागर की भी भाषा दिल्ली की होनी चाहिए क्योंकि दिल्ली के लोग उसे समझते और उससे प्रभावित होते है।

डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त का इससे भी अधिक भ्रामक वक्तव्य अवधी और छत्तीसगढ़ी के पारस्परिक सम्बन्ध के विषय में है। डा० गुप्त के शब्दों में 'श्याम मनोहर पाण्डेय की यह धारणा कि दक्षिण कोसली अवधी का एक पूर्व रूप है, भाषा विज्ञान और इतिहास दोनों दृष्टियों से अज्ञता का परिचायक और हास्यास्पद है। प्राचीन इतिहास में दक्षिण कोसल उस प्रदेश का नाम है जो आजकल

---

१ पृ० ३५, वही।
२ पृ० ३२, वही।

छत्तीसगढ के नाम से अभिहित किया जाता है। छत्तीसगढ़ी भाषा का अवधी के साथ किसी प्रकार का नैकट्य है, यह कहना कठिन है।'[1]

छत्तीसगढ़ी और अवधी में 'किसी प्रकार का नैकट्य' के सम्बन्ध में हम ग्रियर्सन का मत उद्धृत कर देना पर्याप्त समझते हैं—

'पूर्वी हिन्दी की तीनों बोलियाँ (अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी) एक दूसरी से अत्यधिक मिलती जुलती हैं। वास्तव में बघेली तथा अवधी में इतना कम अन्तर है कि यदि पृथक विभाषा के रूप में बघेली का अस्तित्व जनता में स्वीकृत न होता तो मैं इसे अवधी की ही एक बोली मानता। छत्तीसगढ़ी पड़ोसी की मराठी तथा उड़िया भाषाओं के प्रभाव के कारण पर्याप्त अन्तर प्रदर्शित करती है किन्तु अवधी से इसका निकट सम्बन्ध स्पष्ट है।[2]

अवधी और छत्तीसगढ़ी की निकटता के सम्बन्ध में डा० धीरेन्द्र वर्मा की पुस्तिका ग्रामीण हिन्दी भी डा० परमेश्वरीलाल गुप्त की पर्याप्त सहायता कर सकती थी। ग्रामीण हिन्दी का व्याकरण तालिका में डा० वर्मा ने अवधी और छत्तीसगढ़ी रूपों को एक ही शीर्षक 'अवधी छत्तीसगढ़ी' के अंतर्गत दिखाया है।[3]

डा० परमेश्वरीलाल गुप्त ने चंदायन और उक्ति-व्यक्ति प्रकरण की भाषा में असमानता दिखाने का जो प्रयास किया है वह भी दोषपूर्ण प्रतीत होता है। उक्ति व्यक्ति की भाषा अवधी की पूरबी भाषा का प्रतिनिधित्व करती है किन्तु वह सम्पूर्ण अवधी क्षेत्र की तत्कालीन भाषा का पूर्ण रूप नहीं प्रस्तुत करती। इसके अतिरिक्त वह जन बोली का रूप प्रस्तुत करती है काव्य भाषा का नहीं। मनो रंजक बात तो यह है कि चन्दायन और उक्ति व्यक्ति की भाषा में जो असमानता सूचक तालिकायें प्रस्तुत की गई हैं उनमें कई समान हैं। अंतर केवल यह है कि चन्दायन में रूपों की संख्या उक्ति व्यक्ति से अधिक है।[4]

चन्दायन के 'दिखावा, मरावा, हकरावा जैसे रूप उन्होंने उक्ति व्यक्ति के किएसि 'देखिसि' जैसे रूपों से भिन्नता प्रकट करने के लिये प्रस्तुत किए हैं।[5]

---

१ पृ० ३५, वही।

२ पृ० २९२, भाग १, भारत का भाषा सर्वेक्षण, १ हिन्दी अनुवाद, अनुवादक उदयनारायण तिवारी, सर जार्ज ग्रियर्सन, लखनऊ।

३ ग्रामीण हिन्दी डा० धीरेन्द्र वर्मा, इलाहाबाद।

४ देखिए पृ० ३३ च (ग)।

५ वही।

किन्तु अवधी शब्दों में—या अवधवाले रूपों का कितना प्रचलन है यह किसी से छिपा नहीं है—

कतहूँ सरहुन पैसार मारा । कतहूँ पारधि नाम भयारा ।

—३१ । पद्मावत

माँगि और कोउ आगु न पावा । ११८ बालकाण्ड रामचरितमानस

इसी प्रकार चन्दायन के माउब, बनाउब जैसे उत्तम पुरुष, सामान्य भविष्य काली रूप तथा मारहु, जाएसि जैसे भविष्य अनुज्ञा रूप अवधी के परिचित रूप हैं[1] किन्तु इन्हीं व जैसे रूपों के आधार पर डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त चन्दायन की भाषा को अवधी नहीं मानते ।[2]

प्रस्तुत प्रबन्ध में दाऊद की रचना की भाषा को प्राचीन अवधी मानकर उसे अध्ययन में सम्मिलित किया गया है ।

१, दे० भविष्य निश्चयार्थ, अनुज्ञार्थ रूप १२२, १२४

२ वही ।

मैनासत (मै० स०)

३४ श्री अगरचन्द नाहटा के अनुसार 'मैनासत' का सर्वप्रथम विवरण सन् १९०२ ई० की खोज रिपोर्ट (नागरी प्रचारिणी सभा काशी की) में छपा है।[1] डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने लिखा है कि 'मैनासत के दो पाठ पहले से प्राप्त थे एक स्वतन्त्र रचना के रूप में और दूसरा जो चतुर्भुजदास निगम की मधुमालती के कुछ पाठों में अन्तर्भुक्त मिलता है।[2] इधर मैनासत के कई संस्करण प्रकाशित हुए हैं—

(१) अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर (लि० का सम्वत् १७२४ वि०) की प्रति का पाठ जो हिन्दी विद्यापीठ ग्रन्थ वीथिका में श्री अगरचंद नाहटा ने छपवाया है।[3]

(२) मुनि विनयसागर के संग्रह का पाठ (लि० का० अज्ञात) नाहटा जी ने हिन्दी विद्यापीठ ग्रन्थवीथिका में इसे भी प्रकाशित कराया है।[4]

(३) मधुमालती में अन्तर्भुक्त मैनासत के पाठ का सपादन करके श्री हरिहर निवास द्विवेदी ने प्रकाशित कराया है।[5]

---

१ पृ० १०७ मैनासत (साधन) हिन्दी विद्यापीठ ग्रन्थ वीथिका, १९५६ ई० आगरा के आधार पर।

२ लोरकहा और मैनासत ले० डॉ० माताप्रसाद गुप्त, भारतीय साहित्य ४ २, १९५६, आगरा।

३ मैनासत साधन, पृ० १०७, हिन्दी विद्यापीठ ग्रन्थवीथिका, १९५६ ई० आगरा।

४ वही, पृ० ११८।

५ साधनकृत मैनासत, सं० हरिहरनिवास द्विवेदी विद्यामंदिर प्रकाशन, ग्वालियर १९५९ ई०।

(४) आगरे में स० १६३३ वि० में प० सोहा द्वारा उतारी गई मैनासत की प्रति जिसे नाहटा जी ने अवध भारती के सितम्बर—दिसम्बर १६५६ के अंक में प्रकाशित कराया है।[1]

मैनासत के और उससे सम्बद्ध काव्या के कई पाठ उपलब्ध हुए है जिन पर श्री हरिहरनिवास द्विवेदी ने अपनी पुस्तक साधनकृत मैनासत में विचार किया है।[2]

श्री द्विवेदी ने मनेर शरीफ की प्रति का न उपयोग किया है और न उसकी सम्यक विवेचना की है। श्री अगरचद नाहटा ने भी मनेर शरीफ की प्रति का कोई उपयोग नही किया है। उनके अनुसार (मनेर) तानवाह वाली प्रति शाहजहाँकालीन या उससे पुरानी है।[3]

३५ रचना काल—

श्री नाहटा मैनासत का रचना काल सोलहवी शती मानते है।[4] डा० माताप्रसाद गुप्त ने इसका रचना काल सम्वत् १५६१ या उसके पूर्व माना है।[5] श्री हरिहर निवास द्विवेदी के अनुसार साधन के मैनासत की रचना कभी १४८० ई० के पश्चात् १५०० ई० के पूर्व हुई।[6]

ज्ञात होता है कि मनेर शरीफ वाली प्रति का पूर्ण विवरण अभी तक विद्वानो को नही मिल पाया है। उपलब्ध प्रति का लिपिकाल शाहजहाँ काल या उसके बाद अवश्य है किन्तु जिस प्रति से यह उतारी गई है उसका लिपिकाल १६वी शता दी का प्रारम्भिक काल है। यह संकेत उपलब्ध प्रति मे मिलता है। मनेर शरीफ की प्रति का विवरण देते हुए श्री हसन अस्करी ने लिखा है—

इन सबसे कदीमतर ता वह नुस्खा था जिसकी हि० ९११ (१५०५ ई०) में किताबत हुई और जिसकी नकल मनेर शरीफ के नुस्खे के कातिब ने सत्रहवी सदी में की मैनासत भी वजूद में ९११ हि० के कब्ल आ चुकी थी।[7]

---

१ वही, पृ० १४ के आधार पर।
२ दे० पृ० १३ १४, वही।
३ पृ० १०८, साधन रचित मैनासत, हिन्दी विद्यापीठ ग्रन्थ वीथिका।
४ वही,
५ वही पृ० १०८ पर उल्लिखित।
६ पृ० ८८, साधनकृत मैनासत, स० हरिहरनिवास द्विवेदी।
७ पृ० ८४ ८५ चन्दायन अज मुल्ला दाऊद और मैनासत अज मियां साधन, मआसर १९६० ई० पटना।

मनेर शरीफ की खानकाह मे प्राप्त जिस गुटके में मैनासत का हस्तलेख मिला है उसमें मैनासत के अलावा पदमावत तथा अन्य कई काव्यों का संग्रह है। सभी काव्यों की प्रतिलिपि १७वीं शताब्दी में किसी एक ही व्यक्ति द्वारा की गई है। लेकिन मैनासत की प्रतिलिपि हि० ९९१ में भी किसी के द्वारा की गई थी और खानकाह में उपलब्ध प्रति उसी की प्रतिलिपि है इसका स्पष्ट संकेत मिल जाता है। श्री असकरी ने इसका जो विवरण दिया है। वह ज्यों का त्यों नीचे दिया जा रहा है—

'मनेरशरीफ का नुस्खा मजमूआ है जो सारा सबहवा सदी में लिखा गया। इस मजमूआ में दो जगह सन किताबत और कातिब का पता ठिकाना वेढंगे तौर पर दर्ज है। वियोगसागर के अख्तमाम पर यह इबारत है—

पायो वियोग सागर बजबान हिन्दवी बसराम गुदह फिन तारीख जुल्काद ९११ हि० मौजा न्वासरूम हुक्म मालिक बकानूं नदातू वार बतारीखे बिस्तुम रोजे जुमा जुकी मीनुमाएम।

फिर एक सफे में जायसी की अखरावट के अख्तमाम और साथन की मैनासत के आगाज के दरम्यानी हिस्से में यह इबारत पाई जाती है—

तमामशुद पोथी अखरौती बजबान मलिक मुहम्मद जायसी किताब हिन्दवी कातिबुल्मुल्क कातिब हरूफ फकीर हकीर मुहम्मद साकिन पट्टा नन्दनू उर्फ बकानू खास अमला परगना निजामाबाद सरकार जौनपूर सूबाए इलाहाबाद बवक्ते जुहर योमे जुमा जकी शहर जुल्काद ९११ हि० दर मौजा खासदमा मकाम कुंवरह अमला परगना नैहून दरसरकार मस्तूरस्त वहरीर याफ्त ज्यादह गुफ्तार इजहार नेस्त।

जाहिर है कि कातिब निहायत कमसवाद था। चूंकि सारा मजमूआ उसी के कलम का लिखा मालूम होता है और उसमें पदमावत भी है जो शेरशाह के अहद में मुकम्मल हुई। इसलिये ९११ का सन् किसी दूसरे कातिब का दिया हुआ है। अखरावट जायसी की अव्वली तसनीफ करार दी जा सकती है। इसका मौजू मुख्तलिफ और मजहबी है। यकीनन ९११ के कब्ल लिखी गई। मैनासत भी मारजे वजूद में ९११ के कब्ल आ चुकी थी। एतराज किया जा सकता है कि अहदे अकबरी के पहले सूबा इलाहाबाद का वजूद न था। जौनपुर की सरकार भी बाद की चीज है। पइयाग और इलाहाबाद आगे चल कर इलाहाबाद हो गया। अकबरी किला की बुनियाद रखी गई। एक सूबा करार दिया गया। जाहिर है कि कातिब अव्वल की दी हुई तारीख कातिब दोम के नाम और पता

के साथ खत्म मत्त हो गई है। मजमूआ तो सत्रहवीं सदी का है।[1]

अर्थात् मैनासत की रचना १५०१ ई० के पूर्व कभी हुई होगी। मैनासत के रचयिता साधन के विषय में किसी और स्रोत से कोई प्रामाणिक सूचना अब तक नहीं मिली है। सम्भवतः दाऊद और साधन के काव्यों का रचना काल आस ही पास था।[2]

इस अध्ययन में मनेर शरीफ़ की प्रति का उपयोग किया गया है। उसे परिशिष्ट में दे दिया गया है।

---

१ पृ० ८५, वही।

२ द्रष्टव्य—लोरकहा और मैनासत डॉ० माताप्रसाद गुप्त, भारतीय साहित्य, वर्ष ४, अंक २, १९५६ ई०, आगरा।

राम जन्म (रा० ज०)

३६ 'सत्यवती कथा' के लेखक ईश्वरदास ने अपनी एक अन्य रचना 'स्वगारोहिणी' में जिन पूर्ववर्ती कवियों का नामोल्लेख किया है, उनमें से एक सूरजदास हैं।[1] उन्हें 'सीतापद' का गायक कहा गया है। सूरजदास की सूचना नागरी प्रचारिणी सभा काशी की खोज रिपोर्टों में मिलती है।[2] द्वादश त्रैवार्षिक विवरण में जिस हस्तलिखित प्रति की सूचना दी गई है, उसका लिपिकाल स० १८८६ है और त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण में उल्लिखित प्रति का लिपिकाल स० १९०९ है। पहली प्रति पूर्ण है और दूसरी प्रति के प्रारम्भिक ५ पृष्ठ नहीं है।

मुझे प्रयाग विश्वविद्यालय के शोध विद्यार्थी श्री गोविन्द जी के पास सूरजदास की इस रचना की एक हस्तलिखित प्रति देखने को मिली है। प्रति अपूर्ण है और उसके लिपिकाल का पता नहीं चलता। किन्तु देखने से प्रति काफी प्राचीन मालूम होती है। लिपि कैथी है।[3] खोज रिपोट में जो विवरण प्राप्त होते है

---

१ व्यास बाल मुनि बुधि के साका, खड अठारह आगम भाखा
कालिदास अमरपद कीन्हा, लखनसेनि पडित कवि कीन्हा
तिन्ह के बस जो भयेउ हकारा। कंस बध जिन्ह कीन्ह रसारा
सुरजदास सीता पद गायो, ऊखाप्रथ हरिसिंध देव गायो
—पृ० १३९ स्वर्गारोहिणी कथा, ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ, विद्यामंदिर प्रकाशन, ग्वालियर ५८।

२ (क) स० ४१७ (सी) हिन्दी हस्तलिखित ग्रंथो की द्वादश त्रवार्षिक खोज रिपोट १९२३, २५ ई० की खण्ड प्रथम, नागरी प्र० पत्रिका, काशी (अंग्रेजी में)।
(ख) ४७१ की खोज में उपलब्ध हिन्दी ग्रंथों का त्रयोदश त्रवार्षिक विवरण सन् १९२६ २८ ई० ना० प्र० पत्रिका काशी।

३ प्राप्ति स्थान श्री गोविन्द जी, ६८ रामबाग, इलाहाबाद।

ज्ञात होता है कि दोनों रचना एक ही है। ईश्वरदास अपने समय के लोक-प्रिय कवि ज्ञात पड़ते हैं। ईश्वरदास ने जिन पुराणों कथाओं का उल्लेख किया है उसमें उ' स्वार इसी कारण किया होगा। सत्यवती कथा के अतिरिक्त इनके नाम से 'एकादशी कथा' और 'अन्य भी मार्कण्डेय' रचनायें मिलती हैं जिनका विवरण नागरी प्रचारिणी सभा काशी की खोज रिपोर्ट में मिलता है।[1]

ईश्वरदास द्वारा रचित बताये जाने वाले भरत मिलाप में कहीं-कहीं 'सूरजदास' का नाम आता है जिससे इस ग्रन्थ के रचयिता के विषय में संदेह उत्पन्न हो जाता है।[2] श्री उदयशंकर शास्त्री भरत मिलाप को सूरजदास की रचना मानने के पक्ष में हैं।[3] स्वर्गारोहण और भरत मिलाप की जो प्रतियाँ मिली हैं उनमें परस्पर साम्य है किन्तु रचनाकार के नाम में किसी में ईश्वरदास का नाम आता है किसी में सूरजदास का नाम आता है किसी में सूरजदास का और किसी किसी में तो तुलसीदास का।[4] ऐसी स्थिति में इन रचनाओं को सूरजदास द्वारा रचित समझना ठीक नहीं माना जाता है।

सौभाग्यवश 'राम जन्म' में ऐसी स्थिति नहीं है। 'राम जन्म' में सूरजदास के अतिरिक्त और किसी का नाम नहीं दिखाई पड़ता। अतः रामजन्म सूरजदास का ही लिखा हुआ है इसमें कोई संदेह नहीं रहता।

१७ सूरजदास ने रामजन्म में रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं किया है। किन्तु भाषा-शैली से ये ईश्वरदास के आसपास के कवि मालूम पड़ते हैं। कवि ने रामकथा के गायक कवि के रूप में वाल्मीकि का उल्लेख किया है।[5] किन्तु तुलसीदास का नहीं। रामकथा पर आधारित काव्य रचने वाले कवि के रूप में

---

१ प्र० संख्या ४१७, हिन्दी हस्तलिखित ग्रन्थों का द्वादश त्रैवार्षिक खोज रिपोर्ट, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, काशी।

२ देखिए—पृ० १०७ परिशिष्ट ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ।

३ पृ० ७३, ईश्वरदास या सूरजदास नागरी प्रचारिणी पत्रिका, काशी वर्ष ६१, अंक १, सं० २०१३।

४ वही।

१ वालमीक रामायेन भाखा० तीनि भुवन जे भरि पुर रासा।
२ रा० ज०।

तुलसी की उपेक्षा करना किसी के लिए असम्भव है। इससे प्रकट होता है कि रामजन्म की रचना तुलसीदास से पूर्व हुई थी। और ये सूरजदास ईश्वरदास द्वारा स्मृत सीता पद प्रति (?) के गायक सूरदास से अभिन्न हैं।

रामजन्म का प्राप्त अंश जिसका अध्ययन किया गया है, परिशिष्ट में दे दिया गया है।

सत्यवती कथा (स० क०) और
स्वर्गारोहिणी* (स्वर्गा०)

३८ यद्यपि हिंदी साहित्य के विद्वानों और इतिहासकारों को ईश्वरदास और उनकी सत्यवती कथा का परिचय पहले से था किंतु पूर्ण रचना का प्रकाशन १९३७ ई० की 'हिंदुस्तानी' के जनवरी अंक में हुआ। उसी पत्रिका में इसके पूर्व के अंक (अक्तूबर, १९३६ ई०) में लाला सीताराम बी० ए० ने 'सत्यवती कथा' पर एक नोट लिखा था। 'सत्यवती कथा' उन्हीं के संग्रह से 'हिंदुस्तानी' में प्रकाशित की गई थी।

लालाजी का नोट संक्षिप्त था किन्तु उन्होंने उसमें सत्यवती कथा के लेखक, रचनाकाल और उसकी भाषा के विषय में महत्त्वपूर्ण सूचनायें दी थीं। उन्होंने सत्यवती 'कथा' का रचनाकाल संवत् १५५८ भादों सुदी ६ दिन मंगल मेष राशि के अश्विनी नक्षत्र में जब चन्द्रमा थे माना 'उस समय सुलतान सिकंदर (लोदी) बादशाह था।' उनके अनुसार 'इस ब्योरे के साथ किसी विरले ही ग्रंथ का रचनाकाल लिखा गया होगा। सिकंदर लोदी अपने पिता बहलोल लोदी के मरने पर दिल्ली के तख्त पर बैठा और अट्ठारह वर्ष राज्य करके संवत् १५७४ में मर गया। इससे यह सिकंदर लोदी ही हो सकता है, सिकन्दर सूर नहीं।'[1]

३९ रचना का स्थान और 'सत्यवती कथा' की भाषा पर विचार करते हुए लाला जी ने आगे लिखा है 'दूसरी बात इस ग्रंथ के रचने का स्थान है।' दिल्ली बड़थाना से हम तो यही अनुमान करेंगे कि यह काव्य दिल्ली में रचा गया।

---

१ अक्तूबर १९३६ 'हिंदुस्तानी' में लाला सीताराम बी० ए० की सत्यवती कथा' पर टिप्पणी।

* ईश्वरदास कृत 'सत्यवती कथा' तथा अन्य कृतियाँ, सं० डा० शिवगोपाल मिश्र रावत ओमप्रकाश सिंह, विद्यामन्दिर प्रकाशन (ग्वालियर) १९५८।

यद्यपि यह कहा जा सकता है कि उस समय दिल्ली में सिकंदर बादशाह था। 'परन्तु दिल्ली बड़थाना लिखने का कोई विशेष प्रयोजन न रह जाएगा। लोदी वंश का मूल स्थान जौनपुर है इससे सम्भव है कि लोदी राजवंश के साथ कुछ जौनपुर के रहने वाले कर्मचारी भी दिल्ली चले गये हो। उन्ही में से ईश्वरदास भी था। इसी कारण इस काव्य की भाषा अवधी है।'[1] लाला जी के अनुसार—

१—'सत्यवती कथा' सम्वत १५५८ वि० में रची गई थी।

२—उस समय दिल्ली के सिंहासन पर सुलतान सिकंदर लोदी आसीन था।

३—काव्य दिल्ली में रचा गया था, अर्थात् रचना काल में ईश्वरदास दिल्ली में रहते थे। और

४—'सत्यवती कथा' की भाषा अवधी है।

ग्रंथ का रचनाकाल कवि ने दे दिया है अत उस पर विवाद का कोई अव काश नही है, इसी प्रकार उस समय दिल्ली में सिकंदर लोदी सिंहासनासीन था, यह भी एक ऐतिहासिक तथ्य है। जहाँ तक दिल्ली को रचना स्थान मानने का प्रश्न है लालाजी का आधार यह अर्धाली है—

जोगिनीपुर दिल्ली बड़थान्
साह सिकंदर बड सुलतान्। ५। स० क०।

लालाजी के अतिरिक्त श्री हरिहर निवास द्विवदी भी 'सत्यवती कथा' को दिल्ली में रचित मानते है।[2] लेकिन इस काव्य को दिल्ली में रचित मानने से यह प्रश्न सामने आता है कि एक दिल्ली वासी कवि ने अवधी में काव्य रचना क्यो की? लालाजी और श्री द्विवेदी दोनों ने इस प्रश्न का उत्तर देने के निमित्त यह अनुमान किया है कि ईश्वरदास रहने वाले जौनपुर अवध प्रदेश के थे किन्तु कालातर में दिल्ली आ गए थे।[3] इन विद्वानों के ध्यान में यह बात नही आई कि कवि दिल्ली का नामोल्लेख शाहवक्त के सन्दर्भ में कर रहा है और इन पंक्तियों में वह अपनी रचना का स्थान नही बता रहा है। यह बात एकाधिक प्रेम गाथापरक

---

१ वही।

२ 'यह भी सम्भव है कि जिस प्रकार मानिक अवध से ग्वालियर आया था उसी प्रकार ईश्वरदास अवध से दिल्ली आ गए हों।

पृ० १३, प्रस्तावना ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ।

३ दे० अक्तूबर, १९३ , हिंदुस्तानी में सत्यवती कथा पर लालाजी की टिप्पणी तथा सन्दर्भ क्रमांक ३।

भाषा के रचयिता कवियों के उदाहरण से प्रमाणित की जा सकती है। जायसी जायस के रहने वाले थे और उन्होंने पद्मावत की रचना जायस में की थी—

जायस नगर धरम अस्थानू तहाँ यह कवि कीन्ह बखानू।

—२३ पद्मावत

किंतु शाहेवक्त शेरशाह की वंदना करते समय वे दिल्ली का उल्लेख करते हैं।

सेरसाहि दिल्ली सुल्तानू। १३ पद्मावत

मौलाना दाऊद चंदायन में किंतु शाहेवक्त फीरोजशाह की प्रशंसा करते हुए उन्होंने दिल्ली का उल्लेख किया है।

साहि फिरोज दिल्ली सुल्तानू। १७ च० (प)

इसी भाँति ईश्वरदास ने भी सिकन्दर शाह की प्रशंसा करते हुए दिल्ली का उल्लेख किया है। सौभाग्यवश ईश्वरदास की एक अन्य रचना 'स्वर्गारोहिणी' भी मिल गई है, जिसमें कवि ने अपने पूर्वजों का परिचय दिया है। स्वर्गारोहिणी की रचना उन्होंने 'सत्यवती कथा' के एक वर्ष पूर्व की थी।[1] इस रचना में भी 'साहि सिकन्दर' और 'जोगिनीपुर दिल्ली' का उल्लेख प्रायः सत्यवती कथा की भाँति किया गया है।[2] शाहेवक्त की वंदना करने के उपरान्त कवि अपने पूर्वजों का वर्णन करते हुए कहता है कि जम्बूद्वीप में काशी है जहाँ अनेक तीर्थ हैं और जहाँ धर्म की राशि है। हमारे पूर्वज वहाँ बसते थे। वहाँ गोंगी नामक खरे पंडित थे। बाद में वे गाजीपुर परगने में स्थित तिलक सिंह के मण्डल (इलाके) में बस गए।[3] गाजीपुर में अपने पूर्वजों के बस जाने के बाद कवि उनके या अपने अन्यत्र बसने का उल्लेख नहीं करता जिससे प्रकट होता है कि कवि गाजीपुर का ही रहने वाला था। 'सत्यवती कथा' की भाषा को देखने से भी यह बात ज्ञात होती है कि कवि पूर्वी अवधी प्रदेश या पश्चिमी भोजपुरी प्रदेश का रहने वाला है। सत्यवती कथा की भाषा पूर्वी अवधी तो है ही उसमें एकाध

---

१ संवत के अब करौं बखाना, पंद्रह स सहावत जान ( )। ६ स्वर्गा०

२ संवत के अब करौं बखाना, पंद्र से सत्तावन जान ( )
चैत मास पच्छ उजिआरा, तिथि पचमी सोम की बारा
न छत्र रैवती मीन क चंदा, सोत सतो मोहि भयो अनंदा
जोगिनि पुर दिल्ली बड थाना, साहि सिकन्दर भे सुलिताना
तेहि दिन कथा अरम्भन कीन्हा रामचंद्र मोहि सुधि बुधि दीन्हा।
—६ स्वर्गा०

३ ७। स्वर्गा०

भोजपुरी प्रयोग भी मिल जाते हैं।[1] ऐसी स्थिति में हमें 'सत्यवती कथा' का रचना स्थान दिल्ली मानने और फिर स्थान से रचना की भाषा की संगति बिठाने के लिए कवि के अवध से दिल्ली जाने का अनुमान करने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। दिल्ली का उल्लेख कवि ने रचना स्थान के रूप में नहीं बल्कि सिकन्दर लोदी की राजधानी के रूप में किया था। कवि ने 'सत्यवती कथा' की रचना गाजीपुर में की थी।

४० अन्य रचनाएँ—

'सत्यवती कथा' के संपादक डा० शिव गोपाल मिश्र को एकडला ग्राम में 'सत्यवती कथा' के अतिरिक्त ईश्वर दास की तीन अन्य रचनाओं के भी हस्तलेख प्राप्त हुए थे। उन्होंने, सत्यवती कथा' के साथ उन्हें भी प्रकाशित करवा दिया है।[2] नीचे उन रचनाओं पर विचार किया जा रहा है।

४१ भरत मिलाप—

उनमें से एक रचना का नाम भरत मिलाप है। यह रामवन गमन के उपरान्त भरत का ननिहाल से लौटकर दुखित होने तथा चित्रकूट में राम से मिलने की कथा पर आधारित है। इस ग्रन्थ की सूचना खोज रिपोर्ट १९०३ ई० (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी) में भी दी गई है और इसकी एक प्रति प्रयाग संग्रहालय में भी सुरक्षित है। किन्तु इनमें कवि का नाम नहीं मिलता। डा० मिश्र द्वारा प्रकाशित संस्करण में रचनाकार के रूप में तुलसीदास का नाम आया है।[3] ईश्वरदास का नाम नहीं आया है। लेकिन ग्रन्थ के संपादक डा० मिश्र के अनुसार, अभी तक जितनी प्रतियां मिली हैं, उनमें से नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट (१९२०-२२ ई०) में 'भरतमिलाप' की प्रति जिसमें ६ पत्र हैं, और प्रति पृष्ठ ३६ पंक्तियां है और संवत १९०३ की लिखी हुई है) में ही ईश्वरदास का नाम अंतिम अंश में पास पास दो स्थलों पर आया है। इस प्रति के आरम्भिक एवं अंतिम अंश, जो उक्त रिपोर्ट में दिए गए हैं, एकडला

---

१ दे० हाथे। २६, कहल। ३५, ४४, हल। ४५, मंदिल। ५७, इत्यादि स० क०

२ दे० ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ भरत मिलाप, पृ० ६५, एकादशी कथा पृ० ११६, और स्वर्गारोहिणी कथा' पृ० १३७।

३ वैसी पूजा किया मन लाई, तुलसीदास अब कह समुझाई।—पृ० १०२, भरत मिलाप ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ।

पासी प्रति से मेल खाती है। यही नहीं, प्रयाग संग्रहालय की प्रति जो संवत् १९०९ में लिखी हुई है प्रमुख प्रमुख स्थलों पर उक्त प्रति से साम्य रखती है। अतः यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि 'भरत मिलाप' ईश्वरदास कृत है और विभिन्न प्रतियों में तुलसीदास या सुरजनदास के नामों को जानबूझ कर प्रतिलिपिकों ने प्रविष्ट कर लिया है।[1]

'प्रतियों के मेल खाने और प्रमुख प्रमुख स्थलों पर साम्य रखने' से केवल इतना प्रकट होता है कि प्रतियों के कुछ अंश समान हैं या उनमें पर्याप्त समानता है। किंतु रचना का लेखक कौन है इस निष्कर्ष से कैसे बताया जा सकता है? ईश्वरदास अपनी रचनाओं में—विशेषतः दोहों में अपना नाम देते रहते हैं। 'भरत मिलाप' में यह प्रवृत्ति नहीं दिखलाई पड़ती। इस रचना में ईश्वरदास की 'सत्यवती कथा' की भाँति न देव वन्दना है न शाहवक्त की प्रशंसा और न रचना काल का संकेत। 'भरत मिलाप' की प्रतियों में पारस्परिक साम्य के बावजूद किसी में तुलसीदास किसी में सुरजदास और किसी में ईश्वरदास का नाम आया है।[2] अतः इसको निश्चित रूप से ईश्वरदास की रचना नहीं माना जा सकता।[3]

४२ एकादसी कथा—

डॉ० शिव गोपाल मिश्र को इस रचना की भी हस्तलिखित प्रति एकडला ग्राम से प्राप्त हुई थी। इसमें कवि ने रचनाकाल नहीं दिया है किन्तु शाहेवक्त की वंदना की है।[4] जिससे ज्ञात होता है कि इस काव्य की रचना भी सिकन्दर लोदी के शासन काल में हुई थी। रचना में यत्र तत्र कवि ने अपना नाम रख दिया है जिससे रचनाकार के विषय में सन्देह नहीं रह जाता। हाँ, इसमें कवि ने एकाध स्थलों पर अपने नाम के आगे 'कायथ' भी जोड़ा है जिससे पता चलता है कि ईश्वरदास जाति के कायस्थ थे।

---

१ पृ० १०७, परिशिष्ट, वही।

२ वही।

३ दे० पृ० ७३, ईश्वरदास या सूरज, नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष ६१, अंक १ सं० २०१३ पर श्री उदयशंकर शास्त्री का विचार, इससे यह प्रतीत होता है कि इस ग्रंथ (भरत विलाप) का मूलकर्ता 'सूरजदास है न कि ईश्वरदास।'

४ पातिसाहि दिल्ली बैसे वैसे, धुसुरपुर इन्द्र सिकन्दर जैसी। १५ एकादसी क० ईश्वरदास कृत सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र को सूरजदास कृत 'एकादसी कथा' की एक प्रति प्राप्त हुई है जिसका लेखनकाल सं० १८२० है। उसका अधिकांश ईश्वरदास कृत 'एकादसी कथा' से इतना मिलता है कि उनमें परस्पर अन्तर करना कठिन हो जाता है।[1] सूरजदास ईश्वरदास के पूर्ववर्ती कवि थे क्योंकि अपनी अन्य कृति स्वर्गारोहिणी में पूर्ववर्ती कवियों का उल्लेख करते हुए ईश्वरदास ने उनका भी नाम लिया है।[2] ज्ञात होता है कि सूरजदास ने कोई एकादसी कथा भी लिखी थी जो कालान्तर में ईश्वरदास कृत इसी नाम वाली रचना के साथ घुल मिल गई। ऐसी स्थिति में प्रकाशित 'एकादसी कथा' में कितना अंश किसका है यह बताना दुष्कर है। इसीलिये इस काव्य को संदिग्ध समझ कर हमने प्रस्तुत अध्ययन में सम्मिलित नहीं किया है।

४३ स्वर्गारोहिणी कथा—

ईश्वरदास की एक अन्य कृति स्वर्गारोहण का उल्लेख अभी किया गया है। इसकी भी हस्तलिखित प्रति डॉ० शिवगोपाल मिश्र को एकडला ग्राम से प्राप्त [illegible] थी और उन्होंने 'सत्यवती कथा' के साथ इसे भी प्रकाशित कराया है।

ईश्वरदास ने अपनी इस रचना में रचनाकाल आदि का उल्लेख स्पष्ट रूप में किया है। कवि ने 'स्वर्गारोहिणी कथा' की रचना 'सत्यवती कथा' के एक वर्ष पूर्व संवत् १५५७ में की थी।[3] 'जोगिनिपुर दिल्ली वडथाना साहिसिकंदर में सुलितान'[4] वाली अर्धाली यहाँ भी है। बीच-बीच में यथावसर कवि ने अपना नाम ईसर 'ईसरदास काएथ' इस रचना में भी जोड़ा है, जिससे 'स्वर्गारोहिणी कथा' के ईश्वरदास द्वारा लिखित होने में कोई संदेह नहीं रह जाता।[5]

सौभाग्यवश, कवि ने इस रचना में अपने पूर्वजों और अपने निवास स्थान के विषय में भी कुछ लिख दिया है जो महत्त्वपूर्ण है। कवि ने लिखा है कि जम्बू द्वीप के बीच काशी नगरी है जहाँ अनेक तीर्थ हैं और जहाँ धर्म की राशि है। उस भरतखंडिका का वर्णन नहीं किया जा सकता जहाँ अनेक लोग बैठे रहते हैं। हमारे पूर्वज वहाँ बसते थे। (उनमें से एक) बड़े पंडित थे जिनका नाम गोंगो था। जाको सभी लोग जानते थे। वे परोपकारी और प्रमाण वचन वाले थे।

---

१ दे० पृ० १११ परिशिष्ट, वही।

२ सुरजदास सोता पद गायो, ऊधा प्रथ हरिसिंघ देव गायो। ८ स्वर्गा० वही।

३ दे० सन्दर्भ, क्रमांक १, पृष्ठ २८।

४ दे० छन्दक्रमांक २, ३, ४, ६, ९, २१ स्वर्गा०।

५ जंबू दीप मध्ये बसै कासी, तीर्थ अनेग धर्म के रासी,

गाजीपुर में तिलकसिंह के मण्डल में जाकर बस गये। ईश्वरदास ने गागो के अतिरिक्त अपने जिन पूर्वजों का नाम लिया है वे इस प्रकार हैं—हरदासी, रुपई, नदन, रतन, परागु, बीरभान, जुडई, गयान, देवी, भोपति, नगदू पलटू इत्यादि। अपने पूर्वजों का उल्लेख ईश्वरदास यह कह कर समाप्त करते हैं कि महापुरुषों (अपने पूर्वजों) का कहाँ तक वर्णन करूँ। सभी राम के दास थे। उनके पश्चात् ईश्वरदास ने कथा को प्रकाशित करना (रचना) प्रारम्भ किया।[1]

इस उल्लेख से इस धारणा का निराकरण हो जाता कि है कि ईश्वरदास दिल्ली गए थे और उन्होंने अपने ग्रंथो की रचना वहाँ की थी। कवि ने दिल्ली जाने का कोई संकेत नहीं किया है।

४४ कवि ने अपने समय में प्रसिद्ध कवियों—लखनसेनि, सूरजदास, हरि सिंह, जैन्देव, डडकुमार (?) का उल्लेख किया है।[2] इन्हीं सुरजदास की रचना

---

१ जनू दीप मध्ये बसै कासी, तीथ अनेग धम के रासी।
वैसे लोग तह बरनि न जाई, भरनि कहिका बरनि न गाई
ध य लासी सिरजी तिपुरारी, पर पुरुख तह कीत हमारी
पुरुव हमारि बसै तिहि ठाऊ खरे पडित तेहि गोगो नाऊ
तिन कर बास सवै कहु जाना, पर उपकार बचन परवाना
जो गाजीपुर परगना पचोत्र कहीं बखानि
तिलक सिंघ के मडन बसे लोग तह जाइ।७
तिन्ह के बस भये हरदासी, कुल के राजा गवने आओ
आनदी ब्रत कर नेवासा, बना सन्फल ति हे बिलासा
रुपई न न रतन परागु रसिक रानी खरग लागु
बीरभान औ जुडई गयान देवी भोपति हरख भवान
नगदू औ पलटू कुल तारा मान महस ऊड मति आरा
महा पुरुख बरनौं कहा सबै राम के दास
ईसरदास तेहि पाछे कथा कीन्ह परगास।
—८ स्वर्गा०

२ व्यास बालमुनि बुधि के साका, खड अठारह आगम भाखा
कालिदास अमरन्ध कीन्हा लखनसेन पडित कवि कीन्हा
सुरजदास सीताम्ब गायो ऊमा प्रय हरिसिंघ देव गायो
कीन्ह धय जै बैताल पचीसी जन्देव तिहिन कृस्न चौबीसी
बिपरीति भाँति डड कुमारा
—४ वही।

'राम जन्म' की भाषा का अध्ययन इस प्रबंध में किया गया है। 'सुरजदास' के नाम से एकादशी कथा की उस प्रति का भी उल्लेख हो चुका है जो ईश्वरदास की इसी नाम वाली रचना से मिलती जुलती है।[1] जहा तक स्वर्गारोहिणी की भाषा शैली का प्रश्न है वह सत्यवती कथा के समान है।

किन्तु यह रचना भी आद्यन्त शुद्ध नहीं है। डॉ० शिवगोपाल मिश्र ने लिखा है कि 'स्वर्गारोहण के अन्तिम अंश हमें कतिपय परिवर्तनों के साथ 'विष्णु चरित्र' नामक अन्य काव्य में मिलते हैं।[2] डॉ० मिश्र ने विष्णुचरित्र की एक हस्त लिखित प्रति से अंतिम अंश 'परिशिष्ट' में उद्धृत किया है। 'स्वर्गारोहिणी' के अन्तिम अंश से थोड़ा बहुत साम्य इस उद्धृत अंश से भी है। ज्ञात होता है कि 'स्वर्गारोहिणी कथा' का अन्तिम अंश 'कलिजुग महिमा वर्णन' प्रक्षिप्त है। यह ध्यान देने की बात है कि इस कलिजुग महिमा वाले अंश में 'ईश्वरदास' का नाम कहीं नहीं मिलता। 'कलिजुग महिमा' जहां प्रारम्भ होता है उसके थोड़ा ऊपर ही एक दोहे में ईश्वरदास का नाम आता है। इसलिये वहीं तक का अंश ईश्वरदास द्वारा रचित माना जा सकता है क्योंकि न तो किसी अन्य कवि की लिखी हुई स्वर्गारोहिणी नाम की कोई रचना मिली है और न अंतिम अंश (कलिजुग महिमा वर्णन) को छोड़कर इसका और कोई अंश किसी अन्य रचना में मिलता है।

इन तथ्यों को ध्यान में रख कर स्वर्गारोहिणी कथा को हमने ईश्वरदास की प्रामाणिक रचना माना है और प्रस्तुत अध्ययन में उसे सम्मिलित करना उचित समझा है।

---

१ दे० परिशिष्ट, ईश्वरदास की सत्यकथा द्वितीया

२ दे० परिशिष्ट, वही।

मिरगावत (मिर०)

४५ लोकप्रियता की दृष्टि से मिरगावत सौभाग्यशाली काव्य रहा है। 'अध कथानक' के लेखक बनारसीदास ने मिरगावत के रचनाकाल से लगभग १०० वर्ष पश्चात् लिखा है कि वे विपन्नावस्था में हाट बाजार न जाकर घर में बैठे रहते थे और मधुमालती मिरगावती नामक पोथियों का पाठ किया करते थे। यही नहीं रात्रि के समय दस बीस आदमी उसे सुनने के लिये आते थे जिन्हें वे बाँच कर सुनाया करते थे।[1] प० परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार 'इसकी प्रथम चर्चा (आधुनिक काल में) कदाचित् सन् १९०० ई० की खोज रिपोट में की गई थी।[2] हिन्दी के अनेक विद्वानों और इतिहासकारों ने इस काव्य की चर्चा की है।[3] किन्तु कुतबन की इस कृति पर प्रामाणिक और सम्यक प्रकाश डालने का श्रेय पटना विश्वविद्यालय म इतिहास विभाग के अध्यापक प्रो० अस्करी को है। उन्हें दिल्ली के खानकाह में सुरक्षित 'मिरगावत' की एक हस्तलिखित प्रति

---

१ तब घर में बैठे रहैं जाहि न हाट बाजार,
मधुमालति मिरगावती पोथी दोइ उदार
ते बाचहि रतनी समै आवहि नर दस बीस,
गावहिं अरु बातें करहिं नित उठि देहिं असीस
—पृ० २३५, अर्धकथानक, प्रकाशक, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड बम्बई, १९५७ ई०

२ पृ० ५६ हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान पर उल्लिखित, प्रका० वही, १९६४।

३ पृ० ९४, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पं० रामचन्द्र शुक्ल, नवाँ संस्करण।
पृ० २६८, हिन्दी साहित्य, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, प्रथम संस्करण।
पृ० ८६ भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा, प० परशुराम चतुर्वेदी, १९५६।
पृ० १३९ जायसी के परवर्ती सूफी कवि और काव्य, डॉ० सरला शुक्ल सं० २०१३ वि०, लखनऊ।

आर्कियोलाजिकल विभाग के अधिकारी श्री देसाई से प्राप्त हुई। इस प्रति में ६० पृष्ठ सुरक्षित है और प्रत्येक पृष्ठ में १७ १८ पंक्तियाँ है। प्रति का प्रथम पृष्ठ अप्राप्य है। इस प्रति का रचनाकाल भी अज्ञात है। किन्तु देखने में वह प्राचीन ज्ञात होती है। प्रति नस्तालीक लिपि में लिखी गई है।[1] प्रो॰ अस्करी ने तद्विषयक अपने लेख में कृति, कवि, उसके आश्रयदाता का विशद् विवेचन किया और काव्य का उद्धरणबहुल सार भी प्रस्तुत कर दिया है जिससे काव्य का स्पष्ट स्वरूप प्रकट हो जाता है।[2]

४६ रचनाकाल

कवि ने रचनाकाल का उल्लेख कर दिया है जिसमें यह निश्चित रूप से ज्ञात हो जाता है कि मिरगावत की रचना ६०९ हि० (१५०३ ४ ई०) में हुई।[3] कुतबन के अनुसार यह रचना पहले से जनता में प्रचलित थी। उन्होंने इसे सयोग शृंगार वीर रस से युक्त करके और इसका अर्थ खोलकर लोगों के सम्मुख सम्वत् १५६० में रखा। काव्य भादों महीने के कृष्ण पक्ष षष्ठी तिथि को समाप्त हुआ।[4] काव्य के एक प्रारम्भिक छ द के अनुसार ग्रंथ की रचना में कुल दो महीने दस दिन लगे थे।[5]

४७ कवि और उसके गुरु

मिरगावत के प्रारम्भ में कवि ने अपने गुरु का स्मरण किया है। इसी प्रसग में कवि ने गुरु का नामोल्लेख भी किया है। शेख बुढ़न जगत् में सच्चे पीर है। उनका स्मरण करते ही शरीर शुद्ध हो जाता है या शरीर में सुधि आ जाती है। कुतबन ने उनके चरण धरे। सुहरावर्दी दोनो जगत् में निर्मल हैं। शेख बुढ़न के सम्पर्क से कुतबन के पुराने और नये दोनो पाप धुल गए। उनका पीर

---

१ दे० कुतबन्स मृगावत—ए यूनीक मैनुस्क्रिप्ट इन परशियन स्क्रिप्ट द जर्नल ऑफ दि बिहार रिसर्च सोसाइटी, खड ४, १९५५ ई०।

२ वही।

३ इह के राज यहरे हम कहे, औत नो जो सवत अहे। १० मिर०

४ साहि कथा अहो आगे सिंगार वीर रस कहो।
पुनि हम खोलि अरथ सब कहा लघु दीरघ कौतुक महो रहा।
जहिय हुतै पन्द्रा से साठा, तहिया यह जो चौपई गाँठो। ४४३ मिर०

५ [redacted] रे मास दिन दस मंह जोरत यह ओराउत आइ।
एक-एक बोल माति जस पिरोवा कहता चित मन लाइ। १० मिर०

सबसे बड़ा है। इसने जिसको रास्ता दिखाया वह गन्तव्य एक निमिष में पा गया।[1] इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसी स्तुति केवल गुरु की ही की जा सकती थी।

ये शेख बुढ़न कौन थे इस विषय में मतभेद है। पं० रामचन्द्र शुक्ल ने कुतबन के गुरु के विषय में लिखा है कि 'ये चिश्तीवंश के शेख बुरहान के शिष्य थे और जौनपुर के बादशाह हुसेनशाह के आश्रित थे।[2] डॉ० सुकुमार सेन ने बांगला साहित्येर इतिहास में कुतुबन के गुरु का नाम बुरहान और उन्हें चिश्ती वंश का बताया है।[3] किंतु शुक्ल और सेन में से किसी ने अपनी सूचना के आधार का उल्लेख नहीं किया है। अपने गुरु का जो उल्लेख कुतबन ने किया है उसमें सुहरावर्दी उल्लिखित है।[4] श्री अस्करी कुतबन के गुरु को सुहरावर्दी सम्प्रदाय से सम्बद्ध मानते हैं।[5] श्री अस्करी के अनुसार कुतबन के गुरु शेख बुढ़न (?) जौनपुर के प्रसिद्ध संत मुहम्मद ईसा 'ताज' के योग्यतम आध्यात्मिक शिष्य और उत्तराधिकारी थे। संत मुहम्मद ईसा 'ताज' के भाई अहमद ईसा 'ताज' की समाधि बिहार शरीफ़ के मैसापुर मुहल्ले में स्थित है। शेख बुढ़न उत्तर प्रदेश के अजोली नामक कस्बे के रहने वाले थे और वहां उनकी समाधि बनी हुई है। उनके मृत्युकाल के विषय में कोई जानकारी नहीं है।[6]

शेख बुढन शत्तारी नामक एक व्यक्ति का उल्लेख आइने अकबरी में भी हुआ है।[7] उनके विषय में कहा गया है कि वे अब्दुल शत्तारी के वंशज थे और सिकन्दर लोदी के समकालीन थे। पं० परशुराम चतुर्वेदी का विचार

---

१ शेख बुढन जग साँचा पीरू, नाउं लेत सुध होइ सरीरू।
कुतबन नाउँ लै रे पा धरे सुहरवर्दी दुहुँ जग निरभरे।
पहिले पाप धोइ सब गए जो रे पुरानें ओ सब नए।
नौ के आउ भएउ अवतारा सब सउँ बड़ा जो पीर हमारा।
जेहि कहँ बाट दिखाई होई एक निमिख मँह पहुँचे जाई। ५ मिर०

२ पृ० ६४, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नवां संस्करण, नागरी प्र० स० काशी, सं० २००६।

३ पृ० ५६३, बांगला साहित्येर इतिहास, सन् १९५० ई०।

४ दे० सन्दर्भ, क्रमांक १।

५ दे० पृ० ६, कुतबन्स मृगावत पर्शियन स्क्रिप्ट।

६ पृ० ७, वही।

७ दे० पृ० ४७, हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान।

है कि 'आइने अकबरी' के शेख बुढन का वास्तविक नाम 'शेख बोधन' है क्योंकि 'अखबारुलअसाफिया' एवं 'अखबारुलअख्यार' में शेख बोधन नाम आया है।[१] इसके अतिरिक्त 'आइने अकबरी में उल्लिखित शेख बुढन सत्तारी थे जबकि कुतबन ने अपने गुरु को सुहरावर्दी शाखा से सम्बद्ध बताया है। प्राप्त जानकारी के आधार पर कुतबन के गुरु के विषय में केवल यही कहा जा सकता है कि उनका नाम शेख बुढन या बोधन था और वे सुहरावर्दी थे।

४८ शाहेवक्त

कुतबन ने शाहेवक्त की प्रशंसा खुलकर की है। शाह हुसेन बहुत बड़ा राजा है। छत्र सिंहासन उसी पर छाजता है। वह बहुत बड़ा पंडित बुद्धिमान और सयाना है, पोथे बाँचता है और सारे अर्थ जानता है। वह युधिष्ठिर के समान धर्मवान् है। हम तो परछाईं मात्र हैं जगत् का प्राण तो वही राजा है। वह बहुत दान देता है। दान देने में उसकी समानता बलि और कर्ण भी नहीं कर सकते। जहाँ तक गंधर्व राज्य करते हैं, वहाँ तक के लोग उसके द्वारा की और साका करते हैं। ऐसा धार्मिक सुजान कहीं नहीं देखा गया इत्यादि।[२]

कवि के समसामयिक हुसेनशाह नामक दो शासक हुए हैं। जौनपुर का हुसेनशाह शर्की जो १४५८ ई० के आसपास गद्दी पर बैठा[३] और १४९४ ई० में सिकन्दर लोदी द्वारा पराजित होकर अपना राज्य खो बैठा।[४] दूसरे हुसेनशाह का पूरा नाम अलाउद्दीन हुसेनशाह था जिसने बंगाल में १४९३ ई० से १५१९ ई० तक राज्य किया।[५] संयोग से ये दोनों हुसेनशाह एक-दूसरे से सम्बद्ध थे।[६] कुतबन ने मिरगावत का रचनाकाल ९०९ हि० अर्थात् १५०३-४ ई० बताया है। जौनपुर का शासक हुसेनशाह इससे कई वर्ष पूर्व अपना राज्य गँवा चुका था और अपने नामराशि सम्बन्धी बंगाल के शासक की शरण में चला गया था।[७] कुतबन ने शाहेवक्त की प्रशंसा जिस ढंग से की है उससे यह नहीं प्रकट

---

१ वही।

२ पृ० ४७, हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान

३ वही, पृ० ४९।

४ पृ० ७, कुतबन्स मृगावत पर्शियन स्क्रिप्ट

५ वही।

६ पृ० ९, वही।

७ साहि हुसेन आहि बड़ राजा छात सिंघासन इन्ह पै छाजा
पंडित औ बुधिवंत सयानौ पोथा बाँचि अरथ सब आना

होता कि वे पराजित आश्रयदाता की प्रशंसा कर रहे हैं। पं० परशुराम चतुर्वेदी का अनुमान है कि कुतबन ने शाहेवक्त के रूप बंगाल के शासक की प्रशंसा की है।[१]

चतुर्वेदी जी ने लिखा है कि हुसेनशाह शर्की की मृत्यु कहलगाँव में सन् १५०० ई० में हो गई थी।[२] उन्होंने इस सूचना का आधार नहीं बताया। श्री अस्करी ने कुतबन सम्बन्धी अपने लेख में बताया है कि सन् १४९४ ई० में पराजित हो जाने पर भी हुसेनशाह शर्की लगभग १६ वर्षों तक और जीवित रहा क्योंकि सन् १५०४ ई० तक उसके सिक्के मिलते हैं।[३] यही नहीं, इस बीच में उसने अपने समधी की सहायता से अपना खोया राज्य प्राप्त करने का प्रयत्न भी किया था।[४] इसके अतिरिक्त यह भी स्मरणीय है कि हार जाने पर भी वह अपने सम्बन्धी का सम्मानित अतिथि था।[५] और उसका राजकीय वैभव बना था। ऐसी स्थिति में शाहेवक्त के रूप में कवि द्वारा उसका वर्णित होना असम्भव नहीं है। अस्तु

४९ जो हो, काव्य का रचनाकाल ९०९ हि० १५०३ ई० निश्चित है और इसीलिये रचना से प्राप्त अंश की भाषा का विवेचन हमने इस प्रबन्ध में किया है। इस काव्य की भाषा का अध्ययन हमने डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित किंतु अप्रकाशित उस अंश के आधार पर, जिसका उपयोग करने की अनुमति उन्होंने मुझे दे दी थी, तथा डा० शिवगोपाल मिश्र द्वारा सम्पादित (मिर० शिव) के आधार पर किया है। डा० मिश्र का सम्पादित संस्करण हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा संवत् १९९५ में प्रकाशित हुआ है।

परम दुलिप्टल इन्द्र बड़े आजा हम परछाहि जीउ जग राजा
दान देइ बहु गिनति न आवा, बलि और करन न सरबरि पावा
राज जहाँ लगि गयरप अहही सेवा करहिं बार सब यहही
चतुर सुजान भास सब जानों अइस न देखउ कोइ।
सभा बिनव सब काम दे पुनि देखा तो सोइ। ६ मिर०

१ दे० पृ० १९० १९१, द डेल्ही सलटनट, भारतीय विद्या भवन बाम्बे, १९६० ई०।
२ पृ० ६ कुतबन्स मृगावत पर्शियन स्क्रिप्ट
३ पृ० २१५, द डेल्ही सलटनट
४ दे० पृ० ६ कुतबन्स मृगावत पर्शियन स्क्रिप्ट
५ पृ० ७ और ६, वही।

हरिचरित (ह० च०)

५० प्राप्त जानकारी के अनुसार लालचदास और उनके 'भागवत के अनुवाद' की सूचना सर्वप्रथम गिलक्राइस्ट ने अपने हिंदुस्तानी व्याकरण में दी थी।[१] इसके बाद गार्सों द तासी ने हिंदुई साहित्य का इतिहास में उसका संक्षिप्त परिचय दिया। इस परिचय में लालचनाथ को भागवत के रचयिता या उचित रूप में भागवत पुराण जिसके बारह स्कन्धों का एक हिन्दी अनुवाद मिलता है, दशम स्कन्ध के रूपान्तर या अनुवाद के रचयिता' बताया गया है।[२]

'शिवसिंह सरोज' में इनका नाम 'लालनदास' दिया गया है। और इनके विषय में यह सूचना दी गई है कि 'लालनदास ब्राह्मण डलमऊ वाले सं० १६५२ में उत्पन्न हुए। ये महाराज बड़े महात्मा हो गुजरे है। इनके कवित्त शान्त रस में है और हजारा में भी कालिदास ने इनका नाम लिखा है।' सरोज में एक दोहा इस प्रकार मिलता है—

दालिभ रिषि की दलमऊ सुरसरि तीर निवास
तहाँ दास लालन बस करि अकाम की आस

जिससे ज्ञात होता है कि ये डलमऊ के रहने वाले थे।[३]

---

१ तासी ने 'लालचदास हलवाई को गिलक्राइस्ट द्वारा हिंदुस्तानी व्याकरण पृ० ३३५ पर उल्लिखित हिंदुई कवि कहा है। दे० पृ० २७' ७३। डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय द्वारा अनूदित 'हिंदुई साहित्य का इतिहास', हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, १९५३।

२ वही।

३ पृ० ४४५ शिवसिंह सरोज, चतुर्थ संस्करण।

क्ष हरिचरित सम्पादक आचार्य नलिन विलोचन शर्मा, सहायक सम्पादक श्री रामनारायण शास्त्री—बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, १९६३।

गियसन ने 'द माडन वर्नाक्युलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान' में सम्भवत 'सरोज' की सूचना के आधार पर यह सूचना दी है—

लालनदास डलमऊ जिला रायबरेली के ब्राह्मण जन्म १५६५ ई० हजारा शान्तरस के कवि।[१]

उपयुक्त उल्लेखो के अतिरिक्त हिन्दी साहित्य के कई विद्वानो ने लालचदास और उनकी रचनाओ का न्यूनाधिक परिचय दिया है।[२] नागरी प्रचारिणी सभा काशी और बिहार राष्ट्र भाषा परिषद पटना की खोज रिपोर्टों तथा यत्र तत्र कई व्यक्तियो के पास इनकी 'रचना हरिचरित' के हस्तलेखों की सूचना मिली है।[३] इनकी एक अन्य रचना 'विष्णु पुराण' की भी सूचना मिली है।[४]

---

१ पृ० ११३ द माडन वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान का हिन्दी अनुवाद, अनुवादक किशोरीलाल गुप्त।

२ (क) पृ० २२४, कवि सख्या, १४६, मिश्रबन्धु विनोद २०१३ वि०
(ख) पृ० ११८ हिन्दी साहित्य का इतिहास, २००७ वि० प० रामचद्र शुक्ल।
(ग) पृ० ८४१, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास १९४८ ई० लेखक डा० रामकुमार वर्मा।
(घ) पृ० १९९ हिन्दी साहित्य, २००९ वि० डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी।
(ङ) पृ० २० २२ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय डॉ० दीनदयाल गुप्त।
(च) पृ० ११३, १६ वी शती के हिन्दी और बगाली वैष्णव कवि १९५६ ई० डॉ० रत्नकुमारी।

३, देखिए—(क) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का सक्षिप्त विवरण काशी नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट १९०६ ८, ग्रथ स० १८९।

४ (ख) वही खोज रिपोर्ट १९२३ २६ पृ० ९८४।
(ग) वही, अप्रकाशित त्रवार्षिक विवरण १९२६ २८, ग्र० स० ४०१ २।
(घ) प्राचीन हस्तलिखित पोथियो का विवरण (पहला खड) बिहार रा० भाषा परिषद् ग्रथ सं० १८२।
हरिचरित का हस्तलिखित प्रतियाँ नागरी प्रचारणी काशी और हिन्दी सा० स० प्रयाग के पुस्तकालयो में सुरक्षित हैं। मैने ह० च० की एक हस्तलिखित प्रति श्री गात्रिन्द जी ९८, रामबाग, प्रयाग में पास देखी है।
विष्णु पुराण की सूचना के लिए देखिए—

५१ कवि नाम

कवि का नाम सर्वत्र लालचदास मिलता है। शिवसिंह सरोज में अवश्य 'लालनदास' का उल्लेख आता है। किन्तु लालनदास लालचदास से भिन्न कोई अन्य कवि हैं जिनका नाम इनके साथ मिल गया है।[1] शिवसिंह सेंगर और ग्रियर्सन ने उनकी जाति हलवाई को उनका उपनाम समझा था और लालचदास को ब्राह्मण बताया था। किन्तु उनकी जाति के विषय में सन्देह का अवकाश नहीं है क्योंकि उन्होंने अपने को स्पष्ट रूप से 'हलवाई' कहा है।[2]

५२ रचनाएँ

विभिन्न सूचनाओं के अनुसार इनके नाम से निम्नलिखित ग्रंथ मिलते हैं—
(१) भागवत दशम स्कन्ध। तासी ने इन्हें भागवत के रचयिता या उचित रूप में 'भागवत पुराण' जिसके बारह स्कन्ध का एक हिंदी अनुवाद मिलता है, के दशम स्कन्ध के रूपान्तर या अनुवाद के रचयिता कहा है।[3] तासी ने हरिचरित्र का उल्लेख नहीं किया है।

मिश्रबन्धुओं ने लालचदास के दो ग्रंथों का उल्लेख किया। उनका दिया हुआ विवरण इस प्रकार है—

कवि संख्या १४६ नाम लालचदास हलवाई, राय बरेली, ग्रंथ (१) भागवत दशम स्कन्ध की भाष, १५८७ (२) हरिचरित्र (१५८५)[4]

हिंदी साहित्य के अधिकांश परवर्ती इतिहासकारों और विद्वानों ने मिश्र

---

(१) पृ० १४ १५, साहित्य ६ (त्रैमासिक) अक्टूबर, १९५८, प्रो० नलिन विलोचन शर्मा का लेख, 'लालचदास का हरिचरित'

(२) प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण (दूसरा खण्ड)

१ ग्रियर्सन की लालनदास विषयक सूचना (दे० सन्दर्भ क्रमांक १, पृ० ६४) पर उनके अनुवादक श्री किशोरीलाल गुप्त ने यह टिप्पणी जोड़ दी है कि लालच दास हलवाई थे ब्राह्मण नहीं। इसका जन्म १५९५ ई० में कदापि नहीं हो सकता। ये लालनदास, बरेली निवासी, तथा अवन विलास और भरत की बारह मासी रचनाकाल क्रमशः १६४३ ई०, १६३३ ई० के लेखक लाल दास से अभिन्न होते हैं। दे० ना० प्र० पत्रिका, काशी की त्रयोदश खोज विव० (१९२६ २८ ई० ग्र० सं० २६२।

२ विपिन हरन सनन्ह सुखदाई चरन गहे लालच हलुआई। १ ह० च०

३ दे० सन्दर्भ क्रमांक २, पृष्ठ ६३।

४ पृ० २२४ कवि संख्या १४६, मिश्रबन्धु विनोद २०१३ वि०

पुस्तकालय में है। शीर्षक है—व्रजविलास-व्रज भाखा'। उनके अनुसार 'यह वही पोथी है जो 'व्रजविलास' शीर्षक के अन्तर्गत उद्धृत हुई है, और जो कलकत्ता की एशियाटिक सोसाइटी के भारतीय मुद्रित ग्रंथों के सूचीपत्र में गलती से बाबूराम द्वारा रचित बताई गई है किन्तु जो हिंदी की अनेक रचनाओं की भांति इसके केवल सम्पादक हैं।[1] शर्माजी ने इस हस्तलिखित प्रति के विषय मे आगे लिखा है कि मेरी प्रति में हाथ का लिखा हुआ एक नोट है जिसमें कहा गया है कि इस रचना के रचयिता का नाम लालच भी दिया जाता है। श्री शर्मा ने अनुमान किया था कि सम्भवतः लालचदास का वास्तविक नाम व्रजवासीदास था और 'लालच उनका उपनाम या तखल्लुस था।[2]

जाहिर है कि स्वर्गीय शर्मा का यह कथन अस्पष्ट है। 'व्रज विलास' का 'हरिचरित' होना अत्यन्त संदिग्ध है क्योंकि वह भारत के पश्चिमी प्रान्तों की 'पच्छिम देस की भाखा' कही जाने वाली बोली में लिखी गई है। वस्तुतः ये व्रजवासीदास खोज रिपोर्ट १९४१-४३ में उल्लिखित व्रजवासीदास से अभिन्न प्रतीत होते हैं।[3]

५४ विष्णु पुराण

लालचदास द्वारा लिखित एक अन्य काव्य विष्णु पुराण की सूचना बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के 'प्राचीन हस्तलिखित पोथियों का विवरण' (दूसरा खण्ड) में दी गई है। श्री नलिन विलोचन शर्मा ने लिखा है कि परिषद् संग्रहालय' में इसके दो हस्तलेख सुरक्षित है।[4] विवरण के अनुसार इसमें विष्णु पुराण के आधार पर कृष्ण लीला वर्णन किया गया है तथा कृष्ण जीवन के विभिन्न अंगों पर प्रकाश डाला गया है। परिषद् संग्रहालय की एक प्रति के पृष्ठ खंडित हैं और इसमें रचनाकाल या लिपिकाल के विषय में कुछ नहीं ज्ञात होता है। हाँ दूसरी प्रति में रचनाकाल १५९५ दिया गया है।[5] रचनाकाल विषयक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

---

१ पृ० २, ह० च० भूमिका।
२ वही।
३ प्र० सं० १९४१-४३।
४ पृ० ७, हरि चरित भूमिका।
५ वही।

पंद्रह सौ पचासो जहाना, कथा आरम्भ किन्ह तहाना
मास असाढ़ कथा अनुसारी, हरिवासर व्रत उजिआरी

मुझे प्रयाग विश्वविद्यालय के शोध छात्र श्री मावित्री जी के पास सुरक्षित 'हरिचरित' की जो प्रति देखने को मिली है, उसमें भी रचनाकाल विषयक पंक्तियाँ लगभग इसी तरह है—

समत पन्दरह से सतासी जहिआ
कथा अरभन कीन्हा तहिआ
मास अषाढ़ कथा अनुसारा
हरी बासर रजनी उजिआरा

विष्णु पुराण के विषय में इससे अधिक सूचना नहीं प्राप्त हो सकी है।

५५ रचनाकाल

तासी ने लालचदास का परिचय देते हुए 'भागवत' का रचनाकाल नहीं दिया था। शिवसिंह सरोज में उनका जन्म संवत् १६५२ दिया हुआ है।[१] ग्रियर्सन ने भी उनका यही जन्म काल बताया है।[२] लेकिन शिवसिंह और ग्रियर्सन की इस सूचना का आधार क्या है यह अज्ञात है।

मिश्र बंधुओं ने भागवत दशम स्कन्ध भाषा का रचनाकाल संवत् १५८५ और हरिचरित की रचना का सम्वत् १५८५ माना है। उनकी सूचना का आधार लाला भगवानदीन की प्रति थी। अपने विवरण में उन्होंने जो पद्य उद्धृत किया है, उसमें पंद्रह सौ सतासी पाठ है।[३] हरिचरित के रचनाकाल की सूचना उन्हें कहाँ मिली, यह नहीं मिलता। प० रामचन्द्र शुक्ल, डा० रामकुमार वर्मा, डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी, सुश्री रत्नकुमारी आदि ने लालचदास की कृतियों का रचनाकाल १५८५ वि० और १५८७ वि० माना है।[४]

कई प्रतियों में हरिचरित का रचनाकाल स० १५२७ वि० मिलता है। हरिचरित की सम्पादकीय भूमिका में उदधृत एक पत्र के अनुसार डा० वासुदेव शरण अग्रवाल ने हरिचरित का रचनाकाल यही (संवत् १५२७ वि०) माना है।[५]

---

१ दे० संदर्भ, क्रमांक ३, पृ० ६३।
२ दे० संदर्भ क्रमांक १ पृ० ६४।
३ पृ० ३, भूमिका, हरिचरित पर उद्धृत।
४ दे० संदर्भ, क्रमांक २, पृ० ६४।
५ पृ० १ भूमिका ह० च०।

श्री नलिन विलोचन शर्मा ने लालचदास की मृत्यु के उपरात हरिचरित को पूरा करने वाले कवि 'आसानन्द' की निम्नलिखित पक्तियो म काव्य के रचना काल का निर्णय करने का प्रयास किया है—

अति प्रजन कथा जब भएउ, सकट प्रान लालच कर भएउ
भगिन करस प्रभु कहु लो लाएसि, सुरसरि निकट अरप जन पाएसि
वोए मन अस्तुति प्रभु लग ठावों त्रिस्न चरित्र भाखा वहु गावा
दसम सकघ भागवत होई कथबघ लहि गाएसि सोई
इहे सोच रहा जिव मोहो समस्त कथा करो पै सोई
एहि विधि विनवो भगवता त्रिस्न चरित्र लौनीन्ह तुग्वा
सवत वैतिक वीति जब गएउ षोडस सन एकोत्तर भएउ
विस्नु कथा उपजावहु भाऊ हरिपद लीन्ह आसानन्द नाऊ।[1]

इन पक्तियो की व्याख्या करते हुए श्री शर्मा ने लिखा है कि 'आसानन्द का रचनाकाल स० १६७१ वि० है। रचनाकाल के प्रसग में यह पक्ति—'सवत् वैतिक बीति जब गएउ षोडस सत एकोत्तर भएउ' यह भी सिद्ध करती कि है कि यही लालचदास का निर्वाण काल था। सवत् १५२७ वि० में लालचदास ने जिस ग्रंथ की रचना प्रारम्भ की थी उसे सवत १६७१ तक पूरा नही कर पाए और १४४ वर्षों तक लिखते रहे। यह स्पष्टत अविश्वसनीय है। १५८७ को रचना काल मान लेने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि लालचदास प्राय ८४ वर्षों तक जीवनपर्यन्त हरिचरित की रचना में लगे रह। कवि की दूसरी रचना 'विष्णु पुराण' के रचनाकाल के सम्बन्ध में १५८५ वि० भी सिद्ध करता है कि हरि चरित में १५२७ वि० अशुद्ध पाठ है'।[2]

'सवत् वैतिक बीत जब गएऊ' का अथ होना चाहिए जब कई सवत् बीत गए अर्थात् लालचदास की मृत्यु के कई वर्षों के पश्चात् आसानन्द ने उनके छोडे हुए काम में हाथ लगाया। इस पक्ति स यह अथ लेना कि लालचदास की मृत्यु भी उसी सवत् में हुई थी गलत मालूम पडता है। आश्चर्य कि शर्माजी ने 'षोडस सन एकोत्तर' से १६०० और १ अर्थात् सम्वत् १६०१ अर्थ न लेकर १६७१ अर्थ लिया।

५६ मेरे विचार से हरिचरित' के रचनाकाल का सधान हम हरिचरित की 'सभै विर्नव नाम भी तवहो' पक्ति स लगा सकते हैं। 'विलम्ब नामक सवत्सर

---

१ पृ० ८, भूमिका ह० च० पर उद्धृत।
२ पृ० ८, भूमिका ह० च०।

६० वर्षों में एक बार आता है। गणना के अनुसार उसे सं० १५८२ में पड़ना चाहिए। पुरानी कैथी लिपि में 'पच्यासी' का पच्चासी पढ़ लिया जाना असंभव नहीं है। 'सत्ताइस' और 'सतासी' पाठ लिपिकारों के प्रमाद से आ गए होंगे। लालचदास ने हरिचरित की रचना संवत् १५८२ में प्रारम्भ की और दसवध लिखने के पश्चात् उनकी मृत्यु हो गयी और कई वर्षों के उपरांत संवत् १६०१ में आसानन्द ने लालचदास द्वारा छोड़े गए कार्य को आगे बढ़ाना प्रारम्भ किया।

हरिचरित का रचनाकाल संवत् १५२७ से लेकर संवत् १५८७ के बीच कभी हो उसका रचनाकाल पद्मावत के पूर्व है, अतः प्रस्तुत अध्ययन में इसे सम्मिलित किया गया है।

खोज रिपोर्टों द्वारा सूचित अन्य रचनाएँ

५७ प्राचीन अवधी की कुछ रचनाओ की सूचना खोज रिपोर्टों मे उपलब्ध होती है। ये रचनाएँ न अभी प्रकाशित हुई हैं और न इनके विषय में कही विस्तृत सूचना मिलती है। नीचे खोज रिपोर्टों में दिए गए विवरणों के आधार पर उनका परिचय दिया जा रहा है —

५८ (१) लखनसेनी का हरिचरित विराट पव

ईश्वरदास की रचना 'स्वगरोहिणी कथा' पर विचार करते समय हमने देखा है कि लखनसेनि ईश्वरदास द्वारा स्मृत कवियो में से है।[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका की खोज रिपोर्टें देखते हुए मुझे लखनसेनी नामक कवि और उनकी रचना 'हरिचरित विराट पव' की सूचना मिली।[2] लखनसेनी की सूचना का जितना अश खोज रिपोट में उद्धृत किया गया है उससे उनकी रचना का काल, कतिपय पूववर्ती और समसामयिक कवियों तथा सामाजिक परिस्थिति इन सब का थोडा बहुत परिचय प्राप्त हो जाता है। कवि ने जौनपुर नरेश इब्राहिम के शासनकाल में काव्य की रचना स० १४८१ में की।

> बादिशाहि जे बीराहिम साही, राज करहि महि मडल माहो
> आपुन महाबली पुहुमी धावै, जउनपुर मह छत्र चलावे
> सवत चौदह सइ एकासी, लपनसेनी कवि कथा प्रग (?) सो।[3]

जौनपुर के इतिहास से ज्ञात होता है कि सन् १४०२ ई० में मुबारक शाह की मृत्यु हुई और अमीरों ने इब्राहिम शाह को सिंहासन पर बैठाया। इब्राहिम

---

१ लखनसनि पडित कवि कीन्हा। ४, स्वर्गा०

२ पृ० ५१, नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी, वष ५६, स० २००८।

३ देखिए परिशिष्ट

शाह ने १४०२ ई० से १४४० ई० तक शासन किया।[1] लखनसेनी ने उसी के शासनकाल संवत् १४८१ (सन् १४२४ ई०) में अपने काव्य की रचना की। खोज विवरण में उद्धृत अंश का प्रारम्भिक भाग थोड़ा अस्पष्ट है। विवरण का साराश इस प्रकार है—

५६ बादशाह इब्राहिम शाह जो महिमंडल पर राज्य करता है स्वयं महाबली है और पृथ्वी पर विचरण करता है। जौनपुर में अपना छत्र चलाता है। संवत् १४८१ में लखनसेनी कवि ने कथा प्रकाशित की। सभी गुणी समाप्त हो गए तो बैजलसिंह राजा के पास गए। बैजल उस प्रसन्न हुए और उनका जी वहीं रम गया। लखनसेनि ने भाषाबद्ध किया कथा को (इसकी कुछ पंक्तियों का अर्थ नहीं खुलता वे सम्भवतः काव्य की प्रशंसा में लिखी गयी है) बीलेस्वर अनुक्राम जो तेजराशि है और राजाओं के कुल धर्म को निभाने वाले हैं, लखनकुमार उन्हीं का पुत्र है। वह दुर्जन रूपी हाथियों के लिये सिंह के समान है।

कंठ में सरस्वती बसें और हृदय में गणेश। लखनसेनि उस देश में नहीं बसते है। वह देश धन्य है (व्यंग्य)। लखनसेनि कवियों के बीच आए तो बड़े बड़े कवि लज्जित हो गए। धर्म और सतयुग के राजा गए। बलि के कार्य के लिए देवीपुर गए (?) कुतीनरेन्द्र धनसेनि गए। देव गणेश भोजपुर गए। जयदेव स्वर्ग की राह चले और धर्म सुरपति के भाट (होकर) गए। नगर के नरेन्द्र उनारी गए और विद्यापति की सवारी गई। जो नगर में अमृत कुंड की थाह लेते थे वे अब निर्धनता के कुंड में नहाते हैं। उन पापियों का स्थान खोजता है जिन्होंने जन्म भर (भगवान का) नाम नहीं लिया। उन पापियों को जिन्होंने हरिनाम नहीं लिया। धर्म का प्रतिदिन ह्रास हो रहा है। जन परिजन ने वह देश छोड़ दिया जहाँ उपभवन (?) नरेश बसता है। भोंहें मन्थ जो कान के पास लगे रहते थे (कान फूकते थे (?) वे काज नहीं अकाज ही जानते थे। सभी धर्मात्मा कपटी हो गए। खोटे वैद्य रोग नहीं चीन्ह पाते। बँधा हुआ कुंजर भूखों मरता है और गधे को आदरपूर्वक सेविन करके चराया जाता है। चंदन काट कर करील लगाए जाते हैं और आम काट करके बबूल उगाए जाते हैं। कोकिल, हंस, मंजार (मजीर ?) मारे जाते हैं और कौवे यत्नपूर्वक पाले जाते हैं। ससार सारिका के पंख उखाड़कर मुर्गे पालता है। लखनसेनि वहाँ नहीं बसता चाहे उधार माँग कर भोजन करना पड़े।

चौसा नगर जगत में प्रसिद्ध है। वहाँ गोरखसिद्ध का रामराज है। वे जय

---

१ पृ० १८७ १८८ द डेलही सल्टनेट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई।

जय कह कर जब विग्रह पड़ाते है तो शेष कांपते हैं और धरनी लड़खड़ाने लगती है। वहाँ राजा बड़नदन राज करते हैं जो दूसरे राम बनकर उत्पन्न हुए है। घारा खान और चौरासी मीरा को उन्होंने गया के तीर मारा। उनके पुत्र पूरनमल है जो शत्रु के हृदय को सालने में महाबली हैं। पूरनमल के ठाट में से चरती हुई साठ गायो को बाँधा। कवि ने कौतुकवश विराट की विविधतापूर्ण कथा को सुरस काव्य में बाधा।[१]

ज्ञात होता है कि कवि ने अपनी जन्मभूमि की दुर्दशा से तंग आकर वह स्थान छोड़ दिया था और काव्य चौसा नगर में लिखा था। उद्धृत अंश में कई आश्रय दाताओं (?) का उल्लेख है। डोनेस्वर अनुकाराय, उनके पुत्र लखन कुमार तथा चौसा के राजा बड़नदन तथा उनके पुत्र पूरनमल का उल्लेख कवि ने किया है।

रचना की भाषा अवधी है। कवि जौनपुर राज्य का निवासी था। अतः अवधी में रचना करना उसके लिये अस्वाभाविक नहीं था। लिपिकाल संवत् १८८७ है।

६० हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के संग्रहालय में लखनसेनि नामक कवि द्वारा रचित 'विराज पर्व' नामक काव्य सुरक्षित है।[२] किन्तु उसमें कवि की आत्मपरिचयात्मक पंक्तियाँ नहीं हैं। शाहेवक्त का भी कोई उल्लेख नहीं है। हो सकता है कि किसी लिपिकार ने प्रारंभिक पंक्तियों को कथा की दृष्टि से अनावश्यक समझ कर छोड़ दिया हो। किंतु इस विषय में बलपूर्वक कुछ कहना तभी सम्भव होगा जब सभा और सम्मेलन की प्रतियों का मिलान कर लिया जाए।

६१ (२) भीमकवि का डगव पुराण—

नागरी प्रचारिणी पत्रिका के एक अंक में 'डगवे पुराण' और उसके रचयिता भीम की सूचना दी गई है।[३] यहाँ उसी विवरण के आधार पर रचना का परिचय दिया जा रहा है।

जब संवत् १५५० हुआ और दुमुख नामक सम्वत् बीत गया और श्रावण शुक्ला सप्तमी आई तब भीम ने डगवै की कथा सुनाई। उनका (कवि का) कौन सा ठाँव है। कौन सा उनका देस है ? और कौन सा गाँव है जहाँ ये कवि कवीश्वर विचरण करते हैं ? वहाँ कौन भूपाल बसता है ? पृथ्वी के धर्म का प्राण स्वरूप

१ दे० परिशिष्ट लखनसेनी का हरिचरित्र विराट्पर्व

२ ग्रंथ स० २१२८, वेष्टन संख्या १११० ।

३ पृष्ठ ५१, नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी, वर्ष ५६, स० २००८ ।

५

एक दश है जहाँ निमल रह ?) बसते हे। कवि नष्ट हो आए कौन उस दोष दे ? यदि वह नाम न उल्लिखित करे ? कविता का वहाँ उत्पत्ति हुई। उनका कौन नगर है उसकी क्या जाति है ? उस सब अमरपुर कहते हे। उसे वसुक इद्रदेव ने प्राप्त किया ? वहा जाति के कायस्थ करन कुवेह ? थे जो कलि में नेम आचार का पालन करते थे। उनके वखीर पुत्र नौरतन हुए जो अत्यन्त प्रचण्ड और सु दर शरीर के थे। वीर ने मत मतग को पृथ्वी पर पछाड दिया। तब सबने उसको गवरह (गौरव) लिया। उसी कुल में बरियार भीम उत्पन्न हुए वे कुछ कथा कहना चाहते है। भारत की डगवे कथा का गायन करना चाहते है।[८]

पत्रिका में विवरणकार ने लिखा है कि जान पड़ता है कि रचयिता अमर नगर के निवासीऔर वसुक इद्रदेव कायस्थ के पुत्र नौरतन के कुल मे उत्पन्न हुए थे।

उदधृत अश की भाषा अवधी है।

६२ (२) पुरुषोत्तमदास का जमिनी पुराण—

नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी के हिंदी ग्रन्थो के तेरहवें त्रवार्षिक विवरण (१६२६ २८) म पुरुषोत्तमदास के जमिनी पुराण की यह सूचना दी गयी है—

सख्या ३६३ जमिनी पुराण रचयिता— पुरुषोत्तमदास (दास) कागज देसी, पत्र २६७ आकार १५ ६ इच, पक्ति (प्रति पृष्ठ ११, परिमाण (अनुष्टुप)—४८००, पूण रूप अत्य त जीण पद्य लिपि नागरी रचनाकाल स० १८५२, १७६५ ई० लिपिकाल स० १८५८ १८०१ ई० प्राप्ति स्थान श्रीकृष्ण बिहारी मिश्र माडल हाउस लखनऊ।

उपयुक्त विवरण के अनुसार इस ग्रन्थ का रचनाकाल सवत् १८५२ वि० है। विवरणकार ने ग्रथ का यह रचनाकाल 'अन्त में उद्धृत इस वाक्य के आधार पर दिया है—'इति श्री महाभारत अस्वमेध के पवनि राजा ज य सपूर्ण वरणन नाम पट भाव सभी घ्याय ४६ इति श्री जयमुनि कथा समाप्तम सवत् १८५२ चैत्रमास कृस्न चतुर्थी चद्रवासरे लेषनीयों पितवर भाट अस्थान विरनाउ।

६३ वस्तुत विवरणकार ने लिपिकाल को रचनाकाल समझ लिया है। लिपिकार ने अपना नाम पितवर भाट बताया है और अपना स्थान 'विरनाउ'

---

८ द० परिशिष्ट भीम कवि का डगवेपुराण।

बताया है। सौभाग्यवश हमारे अनुमान की पुष्टि चौन्हवें त्रैवार्षिक विवरण (सन् १९२९ ३१ ई०) से हो जाती है। इसमें ग्रंथ का विवरण इस प्रकार दिया गया है—

संख्या २७४ जैमुनी पुराण रचयिता पुरुषोत्तमदास (दादरपुर) पत्र १६०, आकार १०$\frac{1}{2}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच पंक्ति प्रति पृष्ठ ८ परिमाण (अनुष्टुप) ३८४०, खंडित रूप बहुत पुराना, लिपि नागरी, रचनाकाल सं० १५५८ १५०१ ई० प्राप्ति स्थान प० कैलाशपतिजी तैलगुरिया पुरोहित ग्राम बिजौली डाकघर बाह जिला आगरा।

ग्रन्थ का प्रारम्भ दोनो हस्तलेखा में समान है, अत कोई सन्देह नही रह जाता कि दोनों हस्तलेख एक ही ग्रन्थ के हैं। द्वितीय प्रति (१४वें त्रवार्षिक की) खंडित है और उसमें लिपिकाल नहा दिया हुआ है। इस प्रति का विवरण अत्यन्त सावधानी से दिया गया है। ग्रथ में से ढूँढ कर रचनाकाल सम्बन्धी और कवि परिचयात्मक पक्तियाँ अलग दे दी गयी हैं। इस ग्रन्थ का रचनाकाल सवत् १५५८ है न कि तेरहवें त्रैवार्षिक विवरण में दिया हुआ सवत् १८८२। कवि ने रचनाकाल का उल्लेख इस प्रकार किया है—

सवत् पन्द्रह से अट्ठावन निमन्त्रत माल (स) का आवन
शुक्ल पक्ष प्रतिपक्षा सुहावन श्री गोविन्द कथा गुन गावन
उत्तम दिवस चन्द्रकर वारा, मेषक सुज बसत प्रगासा
हरिप्रसाद पुरुषोत्तम दासा, अश्वमेध करि कीन्ह प्रगासा[1]

यही नही कवि ने अपने निवास स्थान, शासक (सम्भवत आश्रयदाता) और उसका भी परिचय दिया है। परिचय यहा विवरण में उद्धत रचनाश के आधार पर दिया जा रहा है—

६४ जम्बू द्वीप भरत खड में का यकुब्ज की प्रचण्ड परिपाटी है। वहाँ सतपुरी नामक महास्थान है कौशल देश को सब कोई जानता है। इस देश में निर्मल नीर वाली सरयू के तीर रामपुरी अयोध्या है। अयोध्या में पापो का नाश करने वाला 'सर्गद्वार' नामक स्थान है जहा रामचन्द्र का आसन है। वहाँ से चार योजन दक्षिण, पापहारिणी आदि गोमती बहती है। वहाँ नारायणपुर नामक सुन्दर देश (इलाका या गाँव ?) है। जहाँ विकार नरेश बसते हैं। उनके राजकुमार ब्रह्म दधीच सुजान हैं। उनकी समानता करने वाला कोई अन्य राजा अन्य नहीं है। उस इलाके में दादर नामक नगर है जहाँ यतिया और

---

१ दे० परिशिष्ट, पुरुषोत्तमदास का जैमिनी पुराण।

सतियो का बहुत आदर होता है। उस नगर के राजा रुपमल्ल हैं (जिनका वश लेश्य है। वे नित्य धम की उन्नति चाहते हैं। उसी दादर ग्राम में रामभक्त पुरुषोत्तम निवास करते है। पुरुषोत्तम की प्रति वश की विभूति अपने पिता क्षेमा नन्द में बहुत है। क्षेमानन्द के पुत्र पुरुषोत्तम हैं। वे पहले जगन्नाथ गये। वहा जाकर उन्होने कमल नयन भगवान् की प्रदक्षिणा की। फिर अम्बकपुरी में जाकर गुरु किया। उन्होने अपने गुरु रघुनाथ का चरण मनाया जिन्होने उन्हें व्याकरण और निक्षुन (?) पढाया।[१]

खोज रिपोट में दिए गये अश को परिशिष्ट में उद्धत कर दिया गया है।

इतने प्राचीन कवियो का इतना स्पष्ट परिचय कम मिलता है। पुरुषोत्तम कवि अवध प्रदेश के थे, उनको रचना को भाषा अवधी है, जो उनकी मातृभाषा रही होगी।

---

१ दे० परिशिष्ट।

ध्वनि विचार

व्यंजन

६५ प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त व्यंजन नीचे दिए जा रहे है—

	क	ख	ग्	घ्			
	च	छ	ज	झ			
	ट	ठ	ड्	ढ	ड़्	ढ़	
	त्	थ	द्	ध			
	प	फ	ब	भ्			
	र	ल	ग (विरल) स				
	ह						
अर्द्ध स्वर	य	व					
अनुनासिक (अनुस्वार)	ङ	ञ	ण	न्	न्ह्	म्	म्ह

६६ विभाजन

प्रारम्भिक अवधी की रचनाओ में प्राप्त व्यंजनो की वास्तविक स्थिति क्या थी इसे ठीक ठीक प्रामाणिकतापूर्वक आज नहीं बताया जा सकता है। केवल तर्कसंगत अनुमान लगाया जा सकता है। यह अनुमान मुख्यत दो आधारो पर लगाया जा सकता है, ध्वनि सम्बन्धी ऐसे प्राचीन उल्लेखो, जिनसे व्यंजनो की स्थिति पर प्रकाश पड़ता हो तथा आधुनिक अवधी के व्यंजनो की स्थिति के आधार पर।

प्राप्त ग्रीक और भारतीय अभिलेखो तथा प्राकृत वैयाकरणो की सूचनाओ के आधार पर डा० सुनीतिकुमार चटर्जी ने यह विचार प्रकट किया है कि म० भा० आ० के उत्तर काल तक तालव्य स्पर्श व्यञ्जन सवत्र स्पर्श सघर्षी हो गए थे (दे० १३२ ओ० डी० बी० एल)। ग्रीक अभिलेखो में च् के लिए स्, त्स, त, और ज् के लिये ज द् ध्वनियो का प्रयोग हुआ है (दे० १३२ ओ० डी० बी०

एल)। इनके अतिरिक्त वररुचि से लेकर मार्कण्डेय तक के प्राकृत वैयाकरणों ने चवग ध्वनियों के द्विविध उच्चारण का संकेत या उल्लेख किया है। मार्कण्डेय ने लिखा है कि मागधी में च ज का पूर्व य होता है। (च, ज योर्उपरि य स्यात्) चटर्जी के अनुसार संयुक्ताक्षर य्च य्ज निश्चित ही सघर्षी श्रुति के साथ स्पष्ट तालव्य स्पर्श-सघर्षी उच्चारण का द्योतक है (दे० १३२ आ० डी० बी० एल)

डॉ० बाबूराम सक्सेना ने दिखाया है कि आधुनिक अवधी में च छ ज् झ का उच्चारण स्पर्श संघर्षी है (दे० १२ ए० अ)। इसलिये इस बात की पूरा सम्भावना है कि विवेच्यकाल में इनका उच्चारण स्पर्श सघर्षी था।

६७ स्वर मध्यस्थ ड और ढ ध्वनियाँ म० भा० आ० में ड़ और ढ़ में परिवर्तित हो गई थी (दे० १३३ ओ० डी० बी० एल)। प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में ड और ट से विकसित र ध्वनि मिलती है दारिउ। २८ प० (प) <दाड़िम, कुरिल <कुटिल। ट और ड ध्वनियों का ड़ [illegible] बिना र् में विकसित होना सम्भव नहीं प्रतीत होता। जहाँ तक 'ढ' का सम्बन्ध है यह फारसी लिपि में स्पष्ट है। उदाहरण के लिए 'दुगम गढ़ १ ४ मिर० मनेर खानकाह की प्रति में ‚ڑ लिखा है। इससे स्पष्ट है कि यहाँ ‚ڑ 'गढ़' के लिये है 'गढ' के लिए नहीं। इसलिये प्रारम्भिक अवधी में ड़ और ढ़ ध्वनियों का होना निश्चित है।

६८ यद्यपि प्रारम्भिक अवधी की विवेच्य रचनाओं में य और व के प्रचुर उदाहरण मिलते हैं किंतु इनका वास्तविक उच्चारण क्या था और इनकी स्थिति क्या थी यह बताना दुष्कर है। डा० बाबूराम सक्सेना के अनुसार आधुनिक अवधी में इनका उच्चारण बहुत कुछ इ और उ की भाँति होता है (दे० ६८, ६६ ए० अ)

डा० चटर्जी ने लिखा है कि ई० पू० की तीसरी शताब्दी तक 'य' का उच्चारण सघर्षी हो गया था और फिर यह म० भा० आ० के उत्तर काल तक स्पर्श सघर्षी होकर मूल ज से अभिन्न हो गया (दे० १३३ ओ० डी० बी० एल)।

अवधी में ग ण में प्रारम्भिक व प्राय 'ब' हो गया है। ज्ञात होता है कि प्रारम्भिक अवधी में आधुनिक अवधी की ही भाँति 'व' का उच्चारण 'उ' से मिलता जुलता था और उससे किञ्चित मात्र ही भिन्न था। सभवत इसी उच्चारण को प्रकट करने के लिये प्रारम्भिक अवधी के हस्तलेखों में कहीं-कहीं 'व' को 'उव' लिखा मिलता है।

६९ ऊष्म ध्वनियों में प्रारम्भिक अवधी में साधारणत दन्त्य (सभवत

वर्त्स्य) सपर्षों सा ही मिलता है। यद्यपि कभी कभार 'ण' मिल जाता है। 'ण' रा० ज० जसी धार्मिक रचना में बहुतायत से मिलता है। किन्तु ण अवधी की प्रकृति का उच्चारण नही है। 'ष' का प्राचीन उच्चारण प्रारम्भिक अवधी में नही रहा होगा। यद्यपि यह वर्ण मिलता है। लिपि चिह्न 'ष' 'ख' ध्वनि को प्रकट करता है।

शेष व्यजनो के विषय में कुछ विशेष विचारणीय नही है।

अनुनासिक

७० अनुनासिकों में ङ् ञ अपने वर्ग के स्पर्श के पूर्व शब्दों के मध्य में ही मिलते हैं। जसे—'लङ्क' (लिखित रूप लक) ।२ लो० क० पञ्च (लिखित रूप पच)। २८ मै० स०

'ण्' शब्दों मध्य में और अपने वर्ग के स्पर्श के पूर्व प्रयुक्त होता है—(क) भै हरण (भय हरण)। २।१० ह० च०। किन्तु 'ण्' का इस प्रकार का प्रयोग विरल है। (ख) कुडर (५२ लो० क० २८। ११ स० क०।)

न् और म् आदि मध्य दोनों स्थितियों मे मिलते हैं—

नरवै। २९ च०, नरिन्दन। १ मै० स०
अकुवान। ६ रा० ज० दूनहु। ५ ग० ज०
मूरख। २७ लो० क० मोती। १ स० क०
परम। ४६ लो० क० रामहि। ४६ लो० क०

अनुस्वार (–) जिस स्पर्श के पूर्व प्रयुक्त होता है उस वर्ग के अनुनासिक (पचम वर्ण) का प्रतिनिधित्व करता है—

लक। २ लो० क०, पच। २८ मै० स०
कुडर। ५२ लो० क०, बधन।३।१० ह० च०
खभ। १० च०

म् कहा-कही व, म्व या ब में परिवर्तित दिखाई पड़ता है—

कवँल। ४५ मिर० (शि), अविरत। ४२ स० क०
धाविव। ३५ मिर० (शि)

एक स्थान पर 'म्ब' का परिवतन 'म्म' में दिखलाई पडता है—

अमर। २८२ मिर० (शि०) <अम्बर=बादल

म्ह और न्ह प्रारम्भिक अवधी में सदैव शब्दो के मध्य में प्रयुक्त होते हैं। म्ह बहुत कम मिलता है—

तिन्ह। २ सा० क०, सौन्ह। २ मै० स०

दीन्ह । ५ स० म०, सम्हा । २५ प०

तुम्ह । ४ मे० स०, तुम्ह । १७ मिर०

७१ प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त व्यंजनों का रूप सम्भवतः इस प्रकार था—

	स्वरयंत्रमुखी	कण्ठ्य	कठोरतालव्य या मूर्धन्य	तालव्य	वर्त्स्य	दन्त्य	ओष्ठ्य
स्पर्श		क ग	ट ड			त द	प ब
महाप्राण		ख घ	ठ ढ			थ ध	फ भ
स्पर्श संघर्षी				च ज			
महाप्राण				छ झ			
पार्श्विक				ल			
महाप्राण				ल्ह			
लुंठित					र		
उत्क्षिप्त			ड़				
महाप्राण			ढ़				
संघर्षी	ह			श (?)	स		
अनुनासिक		ङ	ण	ञ	न		म
महाप्राण					न्ह		म्ह
अर्द्धस्वर					य		व

७२ प्रारम्भिक अवधी की विशेषता बताने वाला [illegible] कोई ऐसा उदाहरण नहीं मिला है जिसके आधार पर महाप्राण मूर्धन्य र (रह) के अस्तित्व की सूचना मिले। न्ह, म्ह और ल्ह सम्भवतः एक अक्षर की तरह न, म, ल के स्थान में प्रयुक्त होते थे।

जैसा पहले कहा गया है श् अवधी का अपना व्यंजन नहीं है, प्रारम्भिक अवधी में भी वह बहुत कम प्रयुक्त हुआ है। उसे 'इत्रुयशाना तालु' के अनुसार तालव्य ही मान लिया गया है। यों बंगाली में श को चटर्जी ने तालव्य वर्त्स्य ठहराया है (दे० १४० ओ० डी० बी० एल)।

७४ ङ, ढ, ल्ह् को छोड़कर सभी निरनुनासिक व्यंजन शब्द के आदि और मध्य में प्रयुक्त होते हैं ङ, ढ, ल्ह् शब्द के आदि में नहीं प्रयुक्त होते।

क्—कबीर। २ लो० क०	
किरपन। १ मै० सत,	कारन। ३।८ ह० च०
रकत। ४ लो० क०	लोरिक।१३ मै० सत०
अपकाल। २४ स० क०	
ख्—खोंपा। २ लो० क०	खेलहिं। २ प० प० १ ह० च०
खाइ। १६ स० क०	
सेखें। ५ लो० क०	माख।१७ मै० सत०
राखा। २ रा० ज०	
ग्—गोवार। ५ च०	गावहि। ३।८ ह० च०
गनि। १ मिर०	सोहाग। ३ च०
भुगुत। ७ मै० सत	जग। ५ मिर०
घ्—घेरेसि। २ लो० क०	मात। २।८ ह० च०
घट। ३ स० क०	मेघ। २।८ ह० च०
सिंघ। ३२ स० क०	सिंघासन। ६ मिर०
च्—चांद। १६ च०	चीन्हा। १ मै० सत
चित। १ स० क०	बकुची। १७ च०
पच। २८ मै० सत	खेंची। १२ रा० ज०
छ—छाडेउं। ३ लो० क०	छुधावत। ३।८ ह० च०
छांडि। ४२ स० क०	बिछवाई। २ ला० क०
पाछें। २१ मै० सत०	किछु। १५ मिर०।
ज्—जुगत। १३ च०	जोवन। २१ मै० सत
जम। २ रा० ज०	खजहजा। १२ च०
बाज। २।८ ह० च०	दुरजोधन। ९ स० क०
झ्—झनकारा। १२ लो० क०	मूठ। २।८ च०

भारी। ३२ स० क०	जुमी। २।८ हु० च०
साँझ। २१ स० क०	माँझ। २१ मिर०
ट—टूट। २३ च	टोना। २ मै० सत
टेका। ४५ स० क०	बाट। ८ च
कपट। मै० सत	माट। १७ स० क०
ठ—ठेला। १६ च०	ठरकाई। १।८ हु० च०
ठाढा। ९ रा० ज०	पीठा। १७ क०
झूठ। १।८ हु० च०	उठि। ५ रा० ज०
ड—डराउ। १३ लो० क०	डहकावा। ११ मै० सत
डवर। मिर०	लाड़ू। १ लो०
हिंडोला। ८ मै० सत	कुण्ड। ३५ स० क०
ड़—धाईंउ। ४८ लो० क०	गड़न्त्। ५ मै० सत बड़। ४।८ हु० च०
ढ—ढूंढि। १० च०	ढुकह। ३ मै० सत
ढाका। ३४ स० क०	गढ़। १ लो० क०
बढावा। ३।८ हु० च०	चढ़े। २३ स० क०
ढ़—गढ़। १ लो० क०	बन्दावा। ३। ८ हु० च० चढ़े। २३स०क०
त—तैहि। ५ लो० क०	तरुनी। १२ मै० सत०
तन। ३१ स० क०	उतर। १ लो० क०
नित। ११ मै० स०	जोति। २ मिर०
थ—थोरा। ३ लो० क०	पीती। ११।मै० सत
थँयत। ३१ स० क०	हाथ। १४ च०
पृथिमी। १५ मै० सत	बरथ। १२ मिर०
द—ददय। १६ लो० क०	दरब। मै० स०
दुसरे। ४ मिर०	चाँद। १ लो० क०
जदुनाथ। ३।८ हु० च०	बदला। १० स० क०
ध—धीय। ५ च०	धरतहिं। ४।८ हु० च०
धीग। ४ रा० ज०	बुधि। ३ लो० क०
धुधावउ। १।८ हु० च०	दगधि। ३१ स० क०
प—पावउ। १ लो० क०	परा। ४।८ हु० च०

पखो । २८ मिर (ख)	दिपहिं । २ लो० क०
उपरहिं । २।८ हु० च०	अलप । २ स० क०
फ—फिर । ३ लो० क०	फेरेसि । २ मै० सत
फुनि । ६ मिर०	बिहफइ । ७ लो० क०
बिफारि । मै० सत	मदफ । ४६ स० क०
ब—बसीठ । १ लो० क०	बहुरि । ४ प० प० १ हु० च०
बेद । ४ स० क०,	अब । ४ लो० क०
जबहिं । २।८ हु० च०	कबि । ५ स० क०
भ—भा । १ लो० क०	सुइ । २।८ हु० च०
भौ । ३१ स० क०	अभरन । ७ लो० क०
सभ । ४ मै० सत	आभन । २८ स० क०
य्—यहिं । ५ लो० क०	यहु । २५ मै० स०
येहिं । २६ स० क०	पाइय । १ लो० क०
हरियर । ८ मै० सत	दाया । ६ रा० ज०
र—राय । १ च०	रचि । ५ रा० ज०
रूख । २६ स० क०	हकारा । १ च०
मारि । ५ रा० ज०	सरीरा । २७ स० क०
ल्—लाज । १७ लो० क०	सौंह २ मै० सत
लेहु । ११ मिर०	निरमल । १७ लो० क०
मालिन । २ मै० सत	अकेल । १ मिर०
ल्ह—हुल्हसै । १ च०	कुल्हारी । २।६ हु० च०
काल्हि । ४२४ मिर०	
व—वाह । १८ च०	वा । ४।८ हु० च०
वोहिं । ४२४ मिर०	खावा । १ लो० क०
आवत । १ मै० सत	पँवरि । ४ मिर०
श—श्रवन । ४ रा० च०	स्वामी । १ स० क०
रीछेसर । ४ रा० ज०	दोस । ८ मै० स०
स—सरग । १ लो० क०	सामी । ७ रा० ज०
सकति । ३ मिर०	संदेस । ४ या० क०
तपसी । ५ रा० ज०	देसो । १० मिर०

ह—हाथ द । ७ लो० क०	हकराई । २ मै० सत
हम । ५ रा० ज०	नहुँ । ७ लो० क०
धोहा । १ मै० सत	करहु । ७ रा० ज०

स्वर—

७४ प्रारम्भिक अवधी के मूल स्वर इस प्रकार हैं—

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऐं ए ओं, ओ

प्रारम्भिक अवधी में 'ऋ' स्वतन्त्र या किसी व्यंजन से संयुक्त रूप में नहीं मिलता है। 'ऋ' का स्थान 'रि' ने ले लिया है जैसे—रिखि। ४६ स० क० ईश्वरदास की रचना 'स्वर्गारोहिणी कथा' में इसका प्रयोग शब्द के मध्य (हृदन। ४ स्वर्गा०) में मिलता है किंतु इसका उच्चारण प्राचीन आरोपीय न हो कर भिन्न रहा होगा। जहाँ तक अन्त्य स्वर—अ का प्रश्न है, डॉ० बाबूराम सक्सेना ने इसकी स्थिति प्रारम्भिक अवधी में स्वीकार की है (दे० ए० अ० ८६)। उ० व्य० की विवेचना करते समय डा० चटर्जी ने भी इसकी स्थिति निस्सदिग्ध रूप से मानी है (दे० ७० ५० उ० व्य०)।

मूल स्वरों के उदाहरण

७५ ये स्वर शब्द के आदि मध्य, अन्त में मिलते हैं—

अ—अमोल। ५ लो० क०	रकत। ४ लो० क०
मनुवल। १५ लो० क०	
आ—आज। १ लो० क०	अयानी। ३ लो० क०
सौंपा। २ लो० क०	
इ—इक १ मै० स०	मालिन। २ मै० स०
बिभारि १ मै० स०	
ई—ई। ५४ स० क०	दीन्ह ५ स० क०
मोती। ४ स० क०	
उ—उपर। ३।८ हु० च०	जनुआन। ३।८ हु० च०
अउ। ३।८ हु० च०	
ऊ—ऊपट। १४ लो० क०	मूड। १ लो० क०
लाडू। १ लो० क०	
एँ—एहि। १७ रा० ज०	अएँहु। १८ रा० ज०
आएँ। १७ रा० ज०	

ए—एव । ५ मिर०   देखि । २ मिर०
मुलाने । ३ मिर०

ओँ—ओँदन । १२ लो० क०   कोँउ । ८ लो० क०
जोँ । ३ ला० क०

ओ—ओदन । ८३ स० क०   रोवै । ३२ स० क०
तो । ३६ स० क०

७६ अनुनासिक स्वरो के उदाहरण—

इन स्वरो के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं—

अ   अँधियारा । ५ लो० क०
आँ   भाँभर । १६ मै० स०
इ   दिपहिँ । २ ला० क०
ई   गोसाइँ । २१६ ह० च०
उँ   आएहुँ । १६ रा० ज०
ऊँ—   ढूँढइ । २१ मिर०
एँ (ह्रस्व)—   जेँहि । ६ लो० क०
ए—   मैंटेसि । ३६ स० क०
ओ (ह्रस्व)—कोँहार । ३ स० क०
ओ—मोँटा । २६ मै० स०

अनुनासिक व्यञ्जन के निकटवर्ती स्वरो का भी उच्चारण कभी कभी अनुनासिक होता था जैसा कि निम्नलिखित उदाहरणो से प्रकट होता है—

महँ । २८ च०   मैनाँ । २, मैस०   बिनाँ । १३ मैस०
माटी । १५ मै० स०   भाँय । ४२ स० क०

स्वर सयोग

७७ प्रारम्भिक अवधी की रचनाओ में प्राप्त स्वर-सयोग नीचे दिये जा रहे हैं—

अइ—   बहुतइ । १ लो० क०
अइउ—   भइउँ । ६ लो० क०
अई—   भई । ७ लो० क०
अउ—   समउ । ४ लो० क०
अऊ—   गऊ । १० च०

आइ—	नाइ । १ लो० क०
आई—	जाई । २ लो० क०
आउ—	बइसाउ । ७ स० क०
आऊ—	राऊ । ६ स० क०
आएँ—	जाएँ १।८ हु० च०
आएँउ—	लाएँउ । ८० लो० क०
आए—	आए । ८० मिर० (गि)
इअ—	पिअहि । ४ रा० ज०
इआ—	दुनिआ । २।६ हु० च०
इउ—	रहिउ । ३४६ मिर० (गि)
इएँउ—	जिएँउ । ७ लो० क०
इए—	दिए । ८।१ हु० च०
ईऊ—	सीऊ । ८२ मिर० (शि)
उअ—	गरुअ । १६ मे० स०
उअउ—	दुओ । २।७ हु० च० (उच्चारण दुअउ)
उआ—	भुआर । ६ स० क०
उइ—	दुइ । २१ स० क०
उई—	गरुई । ३६४ मिर० (शि)
उए—	मुए । ५४ लो० क०
एँइ—	बेई । ३३ च०
एई—	लेई । ८२ मिर० (शि)
एँउ—	भएँउ । २।६ हु० च०
एउ—	देउ । ५ लो० क०
एऊ—	लेऊ । २६ च०
एएँउ—	खेएँउ । २५ लो० क०
ओंइ—	कोंइ । ४६ लो० क०
ओइ—	होइ । ५ मिर०
ओई—	कोई । १ मिर०
ओंउ—	कोउँ । ३६ च०
ओउ—	चोउ । ४५ लो० क०
ओऊ—	कोऊ । ४४ च०

ध्वनि परिवर्तन —

७८ प्रारम्भिक अवधी में मिलने वाली ध्वनि परिवर्तन की प्रमुख प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित हैं —

(१) क्षतिपूरक दीर्घीकरण—

ऊतर । १७६ च० (प)	<	उत्तर,
गाग । १० लो० क०	<	गङ्ग
चीत । १६४ च० (प)	<	चित्त

(२) क्षतिपूरक अनुनासिकीकरण—

चिंत । ९ स०क०	<	चित्त,	
मिंत । ४८ लो० क०	<	मित्त (?)	< मित्र

(३) कहीं कहीं द्वित्व रूप सुरक्षित मिलते हैं—

हुव्य । २६० मिर० (शि)
कव्य । २ मिर०

(४) कहीं कहीं शब्द के आद्य अक्षर में स्वर की मात्रा में परिवर्तन दिखलाई पड़ता है। यह परिवर्तन दीर्घ से ह्रस्व की ओर है—

दिवारी । ५ लो० क०	<	दीपावली,
अभरण । ७ लो० क०	<	आभरण,
अनदा । ५ स०क०	<	आनन्द,
अरभ । ५ स० क०	<	आरम्भ,

(५) आद्य और अनादि अक्षर में स्वर के गुण में परिवर्तन—

दॅवस । २५३ च० (प)	<	दिवस,
बॅरास । ७ लो० क०	<	विलास,
सोंरत । ३२ च०	<	शोणित,
विहून । ३०३ मिर० (शि)	<	विहीन,
लिलार । ३२ मिर० (शि)	<	ललाट

(६) ए और इ का परस्पर विनिमय—

बेरास । ८ लो० क०	<	विलास,
दवस । २५३ च० (प)	<	दिवस,
खेड़ा । २० रा० ज०	<	क्रीड़ा,
पिरम । ६७ च० (प)	<	प्रेम

(७) 'उ' का 'ओ' में परिवर्तन—

कोढर । २०७ मिर० (श) < कुहल,

गोफा । ३७ मिर (शि) < गुफा

(८) शब्दों (विशेषत क्रिया रूपों) के मध्य स्वर 'अ' का कभी क्षतिपूरक और कभी अकारण दीर्घीकरण—

भगान । १३ च० (प) < भाग्,

मगाहु । १४८ मिर (शि) < माँग्,

डेराउ । १४७ मिर० (शि) < डर

सत्यावती । १५ स० क० सत्यवती

(९) अन्त्य 'अ' का दीर्घीकरण—

बाछा । १४ स० क० < वत्स,

मता । १८ मिर० (शि) < मत,

मिगा । २२ मिर० (नि) < मृग

(१०) शब्द के आदि में 'अ' और 'इ' का आगम—

अस्तुति । ५।१ ह० च०

अकलंकित (कलंकित के अर्थ में) । ४ स० क०

अस्थान । ५५ स० क०

इस्त्री । २।२३ ह० च०

(११) उद्वृत्त अ को 'य' श्रुति—

लोयन । २१ मिर० (शि)

सायर । ७३ मिर० (नि)

(१२) स्वरभक्ति—

परकारा । १७ र० ज० < प्रकार,

सासतर । २२१ मिर (शि) < शास्त्र

(१३) आ का 'इ' में परिवर्तन—

सारस < सहरस । ४।१८ ह० च०

(१४) मूल 'य' का 'ज' में परिवर्तन—

जउ । ५ लो० क० < यदि,

अजुगुत । ३२ स० क० < अयुक्त

मजूर । २५१ मिर० (नि) < मयूर

(१५) ज और 'द' का परस्पर विनिमय—अधिकांश उदाहरण ज < द के ही मिले हैं—

दुदिदिटल । २१ स० क० < जु—युधिष्ठिर

अपन्स । २७६ मिर० (शि) < अपजस < अपयश

जलमेदव । २३० मिर (शि) < जनमेजय

सावज । ३५ स० क० < स्वापद

(१६) मध्यवर्ती ट, ड, ड का र में परिवर्तन—

कुरिल । ३४ मिर० (शि) < कुटिल,

खरग । २५४ च० (प) < खड्ग

दारिउ । १८ च० (प) < दाडिम

(१७) ड, 'र' में परिवर्तित होकर कभी कभी 'ल' बन जाता था—

तालुका । रा० ज० < ताल्का (?) < ताडका

(१८) स० क० में एक स्थान पर 'उद्धार' के स्थान पर 'उद्घाट' मिलता है। 'तस भये उद्घाट'। १४ स० क०, यह या तो लिपिकार का प्रमाद है या जिस प्रकार ट > ड् > र क ध्वनि परिवर्तन हुआ है, सम्भवत उसी प्रकार र > ड > ट का भी विकास हुआ होगा।

(१९) र् और ल का परस्पर विनिमय—

'र' और 'ल' का परस्पर विनिमय प्राचीन काल से होता रहा है। प्रारम्भिक अवधी में अधिकाश उदाहरण र < ल के हैं। यह परिवतन अनादि अक्षरो म ही दिखलाई पडता है—

बेरास । ८ लो० क० < विलास

दर । १३८ च० (प) < दल

सकर । १६३ च० (प) < सकल

मदिल । ५७ सक क० < मंदिर,

दुदिस्टिल । ५० मिर (शि) < युधिष्ठिर

(२०) 'न' का 'ल और र' में परिवतन—

जलमेश्व । २३० मिर० (शि) < जनमेजय

जरम । ३५३ प० < जन्म

सम्भवत 'न्' 'र' में परिवर्तित होने के पूव 'ल्' हुआ होगा—

(२१) 'परग । ५० लो० क०

पग में 'र' का आगम सम्भवत किसी शब्द के सादृश्य पर हुआ होगा।

(२२) विरोग ५ लो० क० < वियोग अथवा विजोग। किन्तु य, अथवा 'ब्' का 'र' में परिवर्तित होना सभव नहीं प्रतीत होता। इस शब्द का प्रयोग आज भी अवधी में होता है (लेखक स्वयसूचक) इसलिए यह लिपिकार का प्रमाद भी

नही है। पान होता है कि वियोग में रोदिन का भी भाव जोड़ने के लिये इस शब्द का निर्माण लोक में हुआ था। वियोग + रोदन = विरोग ऐसी दशा में इसे स्वतन्त्र शब्द माना जाना चाहिए।

(२३) अल्पप्राण व्यजनो का महाप्राणीकरण—
सभ। ३१४ च० (प) ∠ सब
खेडा। २० रा० ज ∠ मोडा
भभीछन। २७ स० क० ∠ वि० ∠ विभीषण,
मडफ। ३६० मिर० (शि) ∠ मडप

(२४) असयुक्त व्यजनो का अवशिष्ट महाप्राणत्व—
लिहा। २७ मिर० (शि) ∠ लिख
रुहिर। ३३ मिर० (शि) ∠ रुधिर

(२५) शब्द की रचना में एक स्थान पर 'स का परिवतन 'क म दिखलाई पडता है—
कराप। ४५ लो० क० ∠ सराप ∠ शाप

सम्भवत इस परिवतन का क्रम इस प्रकार रहा होगा—
शाप ７ श्राप ７ सराप ７ षराप ７ कराप क्योकि

(२६) 'ग का 'च' में परिवतन भी दिखलाई पडता है—
चतुरगुन। १४ रा० ज० ∠ चतुर्गुण

(२७) स छ का परस्पर विनिमय—
अपछरा। ३१ मिर० (शि) ∠ अप्सरा
परसेव। १८४ मिर० (शि) ∠ परछेव के अथ म
(जेहि लगि परसेव गध्रप देव)

(२८) 'म् का म्ब व व या उँ में परिवर्तन—
अंबित। ४२ ल० क० ∠ अमृत
अंबरित। ८८ च० (प) ∠ अमृत
चवेली। १६५ मिर० (शि) ∠ चमेली
नांव। ११८ मिर (शि) ∠ आम्र
हुवत। २८० च० (प) ∠ हेमन्त
दारिउ। १८ च० (प) ∠ दाड़िम

कभी कभी 'म्ब का परिवतन 'म्म' में दिखलाई पड़ता है—
अम्मर। २५२ मिर० (शि) अम्बर

(२९) य का व में परिवर्तन—

विवोग । ७८ मिर० (शि) ∠ वियोग

कवा । ३ । ४ हु० च० ∠ कया

अतिवत । २४१ मिर० (शि) ∠ अत्यन्त

(३०) मूल 'व' का व में परिवतन—

मूल 'व' का 'व' में परिवर्तन अवधी की प्रमुख ध्वनिगत विशेषता है।

वेरास । ८ लो० क० ∠ विलास,

वरस । ९ स० क० ∠ वर्ष

कवि । ५९ स० क० ∠ कवि

बस । ६७ मिर० (शि) ∠ वश

सुबास । ११३ मिर० (शि) ∠ सुवास

(३१) 'न' का न्य में परिवतन—

ग्यानी । स० क० ∠ ज्ञानी

जग्य । १ । २३ ह० च० ∠ यज्ञ

(३२) 'ज' का ग् में परिवतन—

खागा । ५० स० क० ∠ खड्ग

(३३) प्रारम्भिक अवधी में क्ष का विकास क, छ ख् तीनों व्यंजनों में हुआ दिखलाई पड़ता है—

राकस । ३ । १९ ह० च० ∠ राक्षस,

परतछ । २ । २० ह० च० ∠ प्रत्यक्ष

भखहि । ८० मिर० (शि) ∠ भक्ष

□□

रूप विचार

रचनात्मक प्रत्यय

७६ प्रारम्भिक अवधी की विवेचित रचनाओं में जो रचनात्मक प्रत्यय मिले हैं वे इस प्रकार हैं—

(१)—आ, स्वार्थक, लघ्वर्थ
पका । २७२ च० (प)
बाछा । १८ सं० क०

(२)—आइ, भाव वाचक संज्ञा बनाने का प्रत्यय
महुराई । ३५५ च० (प)
चतुराई । ११६ रू० च०
पहुनाई । १३६ मिर० (शि)

(३)—आई सम्बन्ध वाचक (पुल्लिंग आवा)
पराई । १०० मिर० (शि)
परावा । १० मै० म०

(४)—आउ,—आऊ 'करने वाला' अर्थबोधक प्रत्यय
पैराउ । १४२ च० (प)
पैराऊ । २४ च० (प)
बटाऊ । ३७ लो० क०

(५)—आउ,—आव—भाववाचक संज्ञा बनाने का प्रत्यय
मिराउ । २६४ च० (प)
मिरावा । १७० च० (प)

(६)—आत —भाववाचक संज्ञा बनाने का प्रत्यय
(केवल 'कुसल' के साथ प्राप्त)

फुरसात । १६१ मिर० (नि)

(७)—आन —क्रियार्थक संज्ञा का प्रत्यय

मश्रान । १३ प० (प)

मिलान । ३१२ मिर० (नि)

(८)—आनी —'वाला' के अर्थ विशेषण का प्रत्यय

गवानी । ४८ प० (प)

(मवारित के अर्थ में)

बिनानी । २५ मिर० (नि)

(विज्ञानी पंडित के अर्थ में)

(९)—आर, यार—भाववाचक संज्ञा बनाने का प्रत्यय

जेंउनार । ३२ प० (प)

चमकारा । १ प० (प)

अधियारा । ११ सो० क०

पतियार । ५३ सो० क०

बढ़ियार । १० ह० क०

(१०)—आर, आरी—वाला बोधक प्रत्यय

जुझारा । ३६ प० (प)

धनुकार । ६७ च० (प)

रतनार । ७६ प० (प)

छतनारी । ३३ प०

(११)—आल—युक्त बोधक प्रत्यय (स्त्रीलिंग–इली)

रसाल । ७८ मिर० (शि)

रसाली । ६२ मिर० (शि)

(११)—इया—करने वाला और लघ्वर्थक प्रत्यय

परवरिया । १३७ प०,

रसिया । ७ मै० स०

रोगिया । ३० मिर० (शि)

(१२)—इल –सम्बन्ध वाचक विशेषण का प्रत्यय

वनहल । १५२ च० (प)

अमरेल । २६० च० (प)

आगिल । ७।१ ह० च०

(१३)—ई —भाववाचक संज्ञा का प्रत्यय
कुरबानी । २।११ ह० च०
नटबाजी । ३।१८ ह० च०

(१४)—उ अ, उ आ—स्वार्थक प्रत्यय
गरुअ । ३३७ मिर० (चि)
गरुआ । १२ स० क०
अगुआ । ५३ मिर० (चि)

(१५)—उना, —लघ्वर्थक
मघोना । ७४ लो० क०

(१६)—ऊ, —स्वार्थक, लघ्वर्थक
धीरू, हरखू । १३५ च० (प)
गरु । २३६ च० (प)

(१७)—एरा —'करने वाला' बोधक
कुदेरा, चितेरा । २५ मिर० (चि)

(१८)—क, —'करने वाला' बोधक
धानुक, पायक । ५१ च० (प)
विषवासक । ४२० च० (प)

(१९)—कार —करने वाला बोधक
गुनिताकार । ३६ च० (प)
धनुकारा । ११४ च० (प)

(२०)—गुना—गुनी—(स्त्रीलिंग) आवतमूलक प्रत्यय
चउगुना । २२ मै० स०
दसगुनी । ११८ मिर० (चि)

(२१)—न —क्रियार्थक संज्ञा का प्रत्यय
गवन । ८ लो० क०
बाजन । १७ स० क०

(२२)—न —करने वाला बोधक प्रत्यय
मगन । ८ लो० क०
बनमाहन । ४२६ मिर०

धावन । १६ मिर० (शि)

(२३)—प —भाववाचक संज्ञा का प्रत्यय
सयानप । ७१ मिर० (गि)

(२४)—व क्रियार्थक संज्ञा का प्रत्यय
बहुव । १८ मै० स०

(२५)—यर विशेषण का प्रत्यय
हरियर । २४ च० (प)
अधियर । ६ मै० स०

(२६)—यार 'युक्त' बोधक प्रत्यय
थनियारा । ५० लो० क० (अनीवाला, तेज)
बरियार । १६ च० (प)
गुनियारे । ५६ लो० क०

(२७)—र स्वार्थक प्रत्यय
पियर । ६२ मै० स०
आघर । १५२ मिर० (शि)

(२८)—रा लघ्वर्थक और स्वार्थक
लुबुधरा । ४०६ च० (प)
जियरा । १५ मै० स०

(२९)—रु लघ्वर्थक, स्वार्थक
बछरु । २।१४ ह० च०

(३०)—वा लघ्वर्थक प्रत्यय
बेटवा । १० रा० ज०

(३१)— वाती, —वारी, 'वाली', 'वती' बोधक
पतिवाती । ४६ च० (प)
पियावारी । २५८ च० (प)

(३२)—सर —क्रम एवं आवृत्त बोधक प्रत्यय
दोसर । ४ लो० क०
चौसर । ६२ मिर० (गि)

उपसर्ग

८० प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में जो तद्भव या अर्ध तत्सम शब्दों के साथ प्रयुक्त संस्कृत के उपसर्ग मिले हैं उन्हें नीचे दिया जा रहा है—

(१) अ— श्रेष्ठ सुंदर के अर्थ में
अरूपइ। २ लो० क० अपरूप के अर्थ में

(२) अ— निषेधात्मक
अमोला। ८८ च० (प)
अयानी। ३, लो० क०

(३) अउ— अपकर्ष सूचक
औगुन। १० लो० क०
अवगुन। ५१ मिर (चि)

(४) अन— निषेधात्मक
अनजानत। ४।२ ह० च०
अनचिन ही। ३ मै० स०
अनरितु। २८ मै० स०

(५) अप— अपकर्ष सूचक
अपजस। २८७ च० (प)
अपमंगल। ५६ मिर० (चि)

(६) कु— 'बुरे' के अर्थ मे
कुमारग। २४३ प०
कुदिन। ८५ लो० क०
कुबुधि। ५।१ ह० च०

(७) नि— निषेधात्मक
निगुनर्याहि। ६ लो० क०
निलज। १७ लो० क०
नीकलंक। ३।२ ह० च०

(८) निर— निषेधात्मक
निरमलि। ५ लो० क०
निरगुन। ४।१ ह० च०

(६) पर — अयाथक)
परपुरुष । २५७ प० (प)
परनाती । ८ रा० ज०

(१०) पर— 'विशेष रूप से' के अर्थ में प्रयुक्त
परजरा । ७६ लो० क०

(११) परि— अर्धतत्सम शब्दों के साथ प्रयुक्त
परिहस । १७ मै० स०
परिहरि । ३।२ हु० प०

(१२) प्रति— अर्धतत्सम पार, पाल के साथ प्रयुक्त
प्रतिपारहु । ४७ मिर० (मि)
प्रतिपालौं १८६ मिर० (मि)

(१३) बि— विशेष रूप में' के अर्थ में प्रयुक्त
बिहसत । ८ लो० क०
बिमोहा । १६ लो० क०
बिमोहेब । ३१ मिर० मि०

(१४) बि— निषेधार्थक
बिरस । २४१ प०
बिस्रारी । ४ रा० ज० (फारसी बेकरार)

(१५) स— सहित के अर्थ में
सपूरन । ७ लो० क०
सयानी । १६ सा० क०
सभागी । २१ मिर० (मि)

(१६) सु— सुन्दर या अच्छे के अर्थ में
सुबानी । १२ लो० क०
सुरूपा । १६ सा० क०
सुरस । १।१ हु० प०

संज्ञा

८१ प्रातिपदिक शब्द—

प्रारम्भिक अवधी की विवेचित रचनाओं में प्राप्त प्रातिपदिकों के अन्त्य

स्वर नीचे दिए जा रहे हैं। डॉ० सक्सेना ने प्रारम्भिक अवधी के शब्दों में अन्त्य—अ की स्थिति स्वीकार की है (दि० १६५ ए० अ०)।

—अ

नग।२,	बिरा१,	बसीठ।१ लो० क०
कपट।६२,	नारद।२,	मालिन।२ मै० स०
आमन।२,	बिपिन।१	होम।२ रा० ज०
मन।१,	घर।६	जाप।४४ स० क०
पावक।३,	चरित।२,	कोह।२ मिर०
पुहुप।४।१	तोमर।१।१,	बैस।७।१ ह० च०

—आ

मनसा।५,	राजा।१,	बीरा।७ लो० क०
रतना।२,	बुलबुला।१,	हिंडोला।८ मै० स०
सभा।३,	राजा।४,	अजोधा।३ रा० ज०
घरचा।१३,	बाछा।१४	हीरा।६,स० क०
रसना।३,	सबेरा।२,	पोथा।६ मिर०
बथा।७।१	दाखा।२।१	भिखा।५।१ ह० च०

—इ

बिहफ्न।८,	आगि।६,	रैनि।१ लो० क०
मालति।३,	दूतिनि।३,	सउति।५ मै० स०
पाहनि।१५,	ध्रति।१७,	सेमि।१७ रा० ज०
नारि।३०,	मुकुति।३३,	कीरति।४५ स० क०
सकति।३,	दिष्टि।२,	जोति।१ मिर०
भगति।४।१,	थाखि।४।१,	रीखि।५।१ ह० च०

—ई

हियारी।६,	अगुरी।४५ (च०),	प्रिथिमी।४५ लो० क०
पुथमी।१	कुटनी।८,	कौडी।१ मै० स०
काँवरी।४,	गोसाइ।१०,	लछिमी।२० रा० ज०
आरती। १७	धनुही।३०,	नेगी, जोगी।३५, स० क०
पानी।२,	तिरी।१,	जोतिखी।१५ मिर०
प्रिथिमी।४।१,	पुहमी।५।१,	सामी।१। ह० च०

—उ

समउ ।४,	नाउ, १८,	रितु ।५ लो० क०
घाउ ।२१,	रितु ।६,	पोउ ।१२ मै० स०
धनु ।२१	सुभाउ ।१३,	राउ ।३ रा० ज०
राउ ।३६,	जिउ ।४२,	पाउ ।४५ स० क०
पसाउ ।१८,	जोउ ।६,	आसु । २१ मिर०
बपु ।३।१	राउ ।५।१,	कुबेरु ।३।११, ह० च०

—ऊ

बटाऊ ।३७,	भाऊ ।३०,	गोरू , १५ लो० क०
गुरू ।१,	नगदू	पलटू ।८ स्वर्गा०
आसू ।२१,	मिर०	
भीतू ।१।१२,	राहू ।३।११ ह० च०	

—ए

पाडे ।३८ च० (प) केवल इसी शब्द में

टिप्पणी—

विवेचित रचनाओ में प्राप्त सज्ञा शब्दो का छन्दानुरोध से दीर्घ स्वर ह्रस्व और ह्रस्व दीर्घ होता रहता है।

जैसे—

इह गुन कतहुँ न देखेउ नारी । १२ लो० क०
आभरन बहुत सो नारि सुरूपा । १६ लो० क०
बात कहै अभि के सासा । ३६ स० क०
सो सो एक कहौं निजु बाता । ३६ स० क०
तुम्ह सो बचन राउ के पेला । ३६ स० क०
हस्तिनापुर बसै सो राऊ । ११ स्वर्गा०

८२ विवेचित रचनाओ में साधारणत सज्ञा शब्दा के लघु और दीर्घ रूप मिले है। दीर्घतर रूप बहुत कम मिले है। अकारान्त पुल्लिग रूप को अकारान्त करके दीर्घ रूप बनाया जाता है जैसे—

अति रे स्याम गोबरौरा भवर कि सरवरि होइ । ७ मै० स०
भवॅरा पुनि उड छाडन कह्रा । ५७ लो० क०

आकारान्त लघुरूपों (पुल्लिग) में अन्त्य आ को 'अ' करके और वा जोड़

कर उसका दीर्घ रूप बनाया जाता है जैसे—

बेटा—लघुरूप का दीर्घ रूप बेटवा जो इस पंक्ति में दिखाई पड़ता है—

त्रिभुअन सुन्दर बेटवा सो जग जनमिहि आइ। १० रा० ज०

ईकारान्त स्त्रीलिंग लघुरूपो के अन्त्य' ई को 'इ' करके और 'या' जोड़कर उसे दीर्घ बनाते हैं, जैसे—

तुहिं जस तिरी बुवा घसि लेई। २४ लो० क०

तिरिया एक अकेली अहा। १८ लो० क०

ईकारान्त पुल्लिंग शब्दो के दीर्घ रूप स्त्रीलिंग रूपो की ही भांति बनते है जैसे—
'भाइ' पुल्लिंग लघुरूप का दीर्घ रूप 'भइया'—

मै लोरिक भैया (भइया) सुधि देती। ८ च०

इसी तरह मचौना। ७४ लो० क०—उना लगा कर बना है।

प्रारम्भिक अवधी में दीर्घतर रूपो के उदाहरण मिले है वे राकारान्त हैं।

हियरा। ४२ लो० क०

जियरा। १५ मै० स०

हियरा (दीर्घतर), हिया (दीर्घ), हिय (लघु)

जियरा (दीर्घ तर), जिया (दीर्घ) जिय (लघु)

लिंग विचार

८३ प्रारम्भिक अवधी में सभी शब्द या तो पुल्लिंग होते हैं या स्त्रीलिंग। साधारणतः अकारान्त और आकारान्त शब्द पुल्लिंग होते हैं और इकारान्त तथा ईकारान्त स्त्रीलिंग, जैसे—

कुअर। ५ च० राजा। ४ च० पुल्लिग

कुंवरि। २० लो०क० कटारी। १३ च०

किन्तु इसके अपवादो की भी कमी नही है। भाई ६ च० जिनानी। ४३७ मिर० खलिरो। २० लो०क० जैसे शब्द पुल्लिग है और तिरिया। २० लो० क० चाद। ६६ च० (प) कथा। ६६ च० (प) जैसे शब्द स्त्रीलिंग हैं।

अकारान्त और ईकारान्त शब्दों में अन्त्य स्वर के स्थान पर इनि या इन रखकर उन्हे स्त्रीलिंग बनाया जाता है—

कुरा से कुरंगिनि। ११ मिर० या सिंघ से सिंघिनि। ४२९ मिर० माली से मालिन। लो० क० पापी से पापिनि। २४ लो० क०

लिंग विशेषता सम्बन्ध वाचक परसर्गों और भूतकालिक कृद तो क्रियाओ में बनी रहती है—

जस अकलक्ति चौथ क चन्दा। ४ स० क०
राम कीन्ह के बाल सघाती। ३। १२ ह० च०
गावत ही बुधि जग की माता। २। ह० च०
केरे कुन्नि में पाइत धरा। ३६ च०
नाग मेस होइ केई धन हरी। ३७ च०

जड वस्तुओ में लिंग निर्धारण आकार प्रकार की विशालता और लघुता के आधार पर होता है जैसे—

लोआ ले के नीर कह धाई। ४ रा० ज०
लोआ लौकी, बड़ी लौकी, कमण्डल
लौकी मर्माव उठो गा सबही। ४ रा० ज०

वचन

८४ द्विवचन का प्रयोग भारतीय आर्य भाषाओं में बहुत पहले समाप्त हो गया था। प्रारम्भिक अवधी में (१) एक वचन और बहुवचन मिलते हैं। एक वचन वस्तु के एक होने तथा बहुवचन उसके एकाधिक होने का आशय प्रकट करते हैं। एक वचन और बहु वचन के रूप कारक विवेचन में मिल जाएँगे। इसलिए यहाँ उनका उदाहरण नहीं दिया जा रहा है।

आदरार्थ बहुवचन का उदाहरण—

भयाहु करहु तउ रहाहु। ३७ सी० क०

(राव करिंगा सारिंग के प्रति) मया (कृपा) कीजिए ता रहिए

गुन्त अस्त भए। ७ सा० क०

समूह वाचक शब्द लोग पच

हिरदैं आहि (हिं) हमारेउ संगू। ३८ सा० क०
लोग पच कई होहि न बानी। २८ मे० ग०

कारक

८५ प्रारम्भिक अवधी में संज्ञा के दो कारक रूप—अविकारी और विकारी मिलते हैं।

अविकारी रूप का प्रयोग साधारणत कर्ता और सम्बोधन कारकों में होता है। अविकारी रूप एकवचन और बहुवचन दोनों के लिये प्रयुक्त होते हैं—

८६ अविकारी रूप—कर्ता एक वचन—

सुनि राजा अस उत्तर दीन्हा। २९ च०
मालिन पान दूत कर लीन्हा। २ मै० स०
प्रथम पितामह स्रिस्टि उपाई। २।१ ह० च०
बाहर भीतर राउ न जाई। १५ रा० ज०
जस कोहार घर बानवे फोर राजकुमार।३ स० क०
चेरी सुनि कै फुनि फुरि आई। ४१६ मिर०

सबोधन—

अस बाद्या ! तुम्ह लाज गवाई। १७ लो० क०
अस औखर त बोलिसि धाई ! ७ मै० स०
एकामिनि ! सुन बोल हमारी। २६ मै० स०
आरे अधम ! कवन ते आहि। ५ रा० ज०
अब तें कहसि रे कन्या ! कैसे मोख होइ हमार। ३२ स० क०
ऐ करतार ! काह यह भया। ४३६ मिर०
बेगि चलहु रे भाई ! नृपति कंस के आन। १।४ ह० च०

टिप्पणी—सबोधन चिह्न मैंने लगाए हैं।

अविकारी रूप कर्ता बहुवचन—

मिरगा पथ लावि जो जाहीं। ५१ च०
दादुर पपिहा कुहकहिं मोरा। १० मै० स०
वन मो ब्रामन होन सुखी। १६ रा० ज०
तहवा कन्या करहिं धमारी। २५ स० क०
चेरी सत्र धाइ। ४३६ मिर०
चकित चित्त सखी सब धाई (ई)। २।६ ह० च०

अविकारी रूप कर्ता कारक म ही नही अन्य कारकों में भी प्रयुक्त मिलते हैं—

कर्म—

साथ काटि कीन्हा मुख कारा। ३३ लो० क०
तेहि रतना मालिन हकाई। मै० स०

सुनहु रिपे अस बचन हमारो । ६ रा० ज०
प्रनवो गनपति मन चित लाई । १ स० क०
चित्र देखि के गोजु चितेरा । २ मिर०
गनपत को मे चरन मनावो । १।१ ह० च०

करण—

जि (गि) यहि खाव हति । २४ लो० क०
सहरस सबद हियर फाटउ । १४ मै० स०
गुर उपदेश गोसाइ आए तोहरे पास । १० रा० ज०
तोहरे बल मै करउँ अनदा । १ स० क०
सवन नहिं सुने । २८ मिर० (घि)
गुरु प्रसाद कछु कहौं बिचारी ।३।१ ह० च०

अपादान—

नाक काटि तुहि देसनिसारउ । २४ लो० क०

सम्बन्ध—

पाकर रूख देखि छतनारी । ३३ च०
माटी भेद न मैना जानसि । १६ मै० स०
गए वस वैवहार । ७ रा० ज०
विधि परिपच जानि नहिं जाई । ३३ स० क०
राजा मदिर पूत औतरा । १४ मिर०
ब्राभन बचन होए परमाना । ५।१ ह० च०

अधिकरण—

नगर सोर अब अथवा । ३१ लो० क०
बरइ आग तन मोहि । ३ मै० स०
चली ओप लोका ले पानी । ५ रा० ज०
मठ बैठि जो कहइ भवानी । ३ स० क०
जो रसना ओ हि नाउँ न आवा । ३ मिर०
जननी गरभ होत हम अहिया । ६।१ ह० च०

टिप्पणी

प्रारम्भिक अवधी में कुछ ऐसे श— मिले हैं जो हकारात हैं और अविकारी रूप की भाँति कर्ताकारक में होते हैं—

जाकर पियह परदेसइ आवई। ६ मै० स० (जिसका पिउ परदेस से आता है)

जिउ जिउ मनह तवान। १ मै० स०

(जैसे जसे मन सतप्त हुआ)

लोगह कर हुतें लीह कटारा। ४३६ मिर०

(लोगो ने हाथ से कटार छीन ली)

अवधी में आज भी शब्द के अन्त में ह जोड़ देने की प्रवृत्ति पाई जाती है, जैसे—

राजह गवा सनावा खाय।

(जिला गोण्डा में गाये जाने वाले आल्हा का एक टुकड़ा। लेखक—स्वयसूचक)

अवधी में कहीं-कहीं शब्दों का आकारान्त रूप पाया जाता है, जिसका कोई स्पष्ट कारण नहीं दिखाई पड़ता, जैसे प्रारम्भिक अवधी में है—

का लोगा तुह धरहुँ पियारू। १ मै० स०

बालक बाछा कपिला गाई। १४ स० क०

'लोगा' पाद पूरयक प्रयोग हो सकता है लेकिन 'बाछा' आज भी जनता में प्रचलित है। इसी तरह से 'मना' 'मन' के लिए बोला जाता है—चाहे जउन मना होए जाय (चाहे जो मन हो जाए, मन चाहे जिसकी इच्छा कर ले) लेखक स्वय सूचक।

अनुमानतः प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त 'मनह' 'लोगह' रूप 'मना' और 'लोगा' के पूर्व रूप के सूचक है। 'पियह' भी बहुप्रयुक्त 'पिया' का ही पूर्व रूप प्रतीत होता है।

नीचे प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में प्राप्त सज्ञा शब्दों के विकारी रूप दिए जा रहे हैं—

८७ विकारी रूप—एक वचन

(१) इ, हि, ए, इ, ए, ~ (केवल अनुनासिक)

रहा नाव परदेसइ जाइ। १६

लेन न देइ सुखहि सो सौंसा। ८

परगट मारि कटारइ मरउ। २५

का होइ कुवरू दूतें तोरें। १६

सरगहि चाद उतर जनु देखि लोर बिहसान। ५५

अभरन पहिरा अउ गिय हारू। ७
खोपा गियइ बैठि सहराई। २
सुरुज सेज अधियारें लावहि। १७
घरहि माँझ होइ उजियारा। २८
परम आच जेहि हियरे लागइ। ४६
—लो० क०

(२) पुनि का लोरहि मुख दरसाऊँ। १७
जाकर पियह परदेसइ आवइ। ६
कुटनी कइ बोलहि पतियानी। ४
मैं बारइ तोहि अस्यन दीन्हा। ३
सवरहु (हु) सपने सेज अनवन भाँति सवारिए। १७
—मै० स०

(३) सो नर सदा बैकुण्ठहि जाई। १४
एक दिन राजा अहेरहि जाई। ३—रा० ज०

(४) कपट रूप पर त्रियहि देखे। २६
एते रूप में सीतहि देखी। २६
नगी नारि जो देखे सो नर नरकहि जाइ। ३०
हिये भई सुग्यान कै जोती। १
नयन नरायन मुखहि मुरारी। १—स० क०

(५) कुँअरहि तजि के आगे धावा। ४३६
कुअरहि परत पारधी धावा। ४३२
हिए समान हुई जनो तागा। ४२८
सारग बान फोक लै हाथहि। १८—मिर०

(६) अवहो कस न देवकिहि मारो। ७।१
दाते (तें) चापि जोभि अनुसारो। २।११
चरनोदक ले सिरहिं चनावा। १।६ ह० च०

टिप्पणी

१—ऊपर दिए गए विकारी रूप के उदाहरणों में से ऐसा कोई नहीं है, जिसे निस्सन्दिग्ध रूप से सम्बन्ध कारक का रूप कहा जा सके।

...हि चाँद। ५५ लो० क०, सोतहिं। २६ स० क०, कुअरहि परत।

४३२ मिर० में विकारी रूपों को सम्बन्ध कारक का रूप कहा जा सकता था किन्तु इन्हें अपादान (सरगहिं चाँद उतर जनु), कर्म (एक रूप में सीतहिं देखी), भाव सप्तमी (कुँअरहि परत पारथो धाया) के रूप मानना अधिक उचित लगता है।

२—सम्भवतः सम्बन्ध कारक के ए० व० रूपों में परसर्ग युक्त विकारी रूपों का ही प्रचलन प्रारम्भिक अवधी में अधिक था। उक्ति-व्यक्ति प्रकरण में भी सामान्यतः इस कारक में 'कर' परसर्ग युक्त रूपों का प्रयोग होता था।[1]

साधन के मैनासत में सम्बन्ध कारक एक वचन में—अह प्रत्ययान्त रूप का प्रयोग मिलता है—

पियह भोग बिन रहइ न कोई। १२

(प्रिय के भोग के बिना कोई नहीं रहता)

नरकह कुण्ड आन सो मलसि। २

(नरक के कुण्ड में लाकर डालती है (तू)।

पियह प्रीत न छाडियइ। १०

(प्रिय की प्रीति न छोड़िए)

विकारी रूप बहुवचन—

(१) हिं, इ, नि, ना, न, न्ह

खिन खिन राज दुवारहिं जाईं। २२ च०

सुनि बातइ खुइलिन तस रोवा। ४ लो० क०

ले गई चाँदा बातनि ताही। ४ लो० क०

सोरह करीं सपूरन भई। ७ लो क०

---

1 Commonly the genitive is formed by compounding the bose with the adjectival affix 'kara'

—पृ० ३८, स्टडी उ० व्य० प्र०

—हिं हिं प्रत्यय उ० व्य० प्र० में प्रधानतः कर्म, सम्प्रदान और अधिकरण तथा करण कारक रूपों में प्रयुक्त होते थे।

दे० It indicates the acccusative and dative, generally and at the locative instrumental as well

—पृ० २७, स्टडी, उ० व्य० प्र०

जे हि भाटन गा लोरक साइ। ५३ ज०
सरग तराइन माझि बसावउ। २६ लो० क०
हाथन्ह मिहदी किएउ सिंगार। ७ लो० क०

(२) यहि बातनि तें ओखर पावसि। ६
नयन ह हँस मुख रोइ। ४
नयन गग कोसन्ह भरे। ६

(३) कैसे खाउ भतीयही बाँची। १२
बेटवन्हि दोन्हि जनेऊ अस बोले भतिमान। १५
तिन्हि रिखि अन्ह के दाजा सुफल भए सब काम। १८

—रा० ज०

(४) बात कहा भाइन्ह समुझाई। १५ स्वर्गा०
गिरिहि सहित चले त्रिपुरारी। ४८ स० क०
सभा पुरी तहँ बैसे भाइन सहित। ५६ स० क०
पाट मैं धोतिन्ह माडौ छावा। ५२ स० क०
दब दान विप्र ह कह दीन्हा। ३६ स० क०
कहै रिपिन के राज। १३ स्वर्गा०
कहु स्वामी रिस ह के नाहा। २१ स० क०
हाथ ह फूलन्ह कै गेडुआ। ५ स० क०

(५) राजैं धायन्हि आएस दीन्हा। १६
राजैं पंडित ह कहा बोलाई। १६
सोरठा चापाइन्ह कै सजा। १०
पुरखन्ह महि पुरुषारथ हारों। ४२६
हाथि ह ऊपर परी अबारी। ४३४ —मिर०

(६) विधिन हरा सतह सुखदाई। १। १
नैनन्हि छूट रकत के धारा। ४। ८
नेस छोरि कै चरनह लागे। ५। ४ —ह० च०

८८ विकृत रूपो का प्रयोग कृदन्ती भूतकालिक क्रियाओ के साथ कर्ता के अर्थ में भी होता है—

एक वचन—

चाँदहि आछर मनहि लजाई। २० प०
मैनइ मालिन धरि झकमोरी। २८ मै० स०

अपरित राजे उजगुत कीएउ। ५। १ हु० च०
तवहि रिखै अस कहा बखानो। ५ रा० ज०
पुरविल लिखा बिधाते (तें) मेटहु मेटनहार। ६ स० क०
महथे (थे) नगर सुनी यह बाता। २०५ मिर० (शि०)

बहु वचन—

महरें मन्दिर सब ज्योति बुझाई। ११ चं०
तोर पितइ घाइ मोहि कीन्हा। ३ मै० स०
इक छन राज नरिन्दन कीन्हा। १ मै० स०
रसिकन्ह जाइ कही अस बाता। १। ८ हु च०
बिप्रन्ह वेद पढ़ें मन लावा। १७ रा० ज०
सभ रानिन्ह कीन्ह पाधारी। १७ स० क०
देवतन्ह आएस इन्ह कर मानीं। ८ मिर०

विभक्तियाँ

८१ अकारान्त अविकारी शब्द कभी कभी उकारान्त हो जाते हैं जैसे रजायसु। १४०, बीजु। १, बजोरु। ७ च० (प, बुधवारु, आ औतारु। १। १३, मातु ३। १३ हु० च, पन्नु। ३७ स० क०, चितु। ३, परागु। २ स्वर्गा० ये उकारान्त रूप प्रयोग की दृष्टि से अधिकारी शब्दों से अभिन्न है।

जैसा कि ऊपर देखा जा चुका है अधिकारी शब्द एक वचन बहुवचन तथा कर्ता और अन्य कारकों के लिये भी प्रयुक्त होते हैं।

अवधी में अकारान्त तथा आकारान्त पुल्लिंग अविकारी शब्द बहुवचन में कभी कभी एकारान्त हो जाते हैं (दे० एवोल्यूशन आफ अवधी १६०) प्रारम्भिक अवधी में इस रूप के उदाहरण विरल हैं। दाऊद और कुतबन की रचनाओं में ऐसे एकाध उदाहरण ढूँढे जा सकते है—

बहुरुपिये बहु भेस बनावा। २६ च० (प)
सेवा करहिं राउ औ रानें। ७ मिर०

अविकारी के अतिरिक्त—अइ, ए, ए —(केवल अनुनासिक)—हि, हिं प्रत्ययान्त विकृत रूप ए० व० में प्रयुक्त होते हैं।

विकृत रूप बहु० व० में—हिं, न, न्ह, नि, न्हि, आँ प्रत्ययान्त रूप प्रयुक्त होते हैं।

आकारन्त और ईकारान्त शब्दों का अन्त्य दीर्घ स्वर विकृत होने पर ह्रस्व हो जाता है जस—

पिता का पितइ। ३ मै० स०, और चाँदा का चाँदहिं। ५८ लो० क०

सत्तावन । ६ स्वर्गा०
साठ । २१ च० (प)
अरसठ । २४ स० क०
असी । ४२ च० (प)
इक्यासी । १७ च० (प)
चौरासी । १२ च०
सौ । ४७ च०, स । १३ च०
लाख । ३७ लो० क०, लप । २४ स० क०
सहस । ७२ लो० क०
कडोर । १ मै० स०, कोटि । १५ रा० ज०

(९३) २—क्रमात्मक सख्या वाचक
परथम । ११ लो० क० पहलें । ५८ च०, पहलें । १ मै० स०
दुतिआ । २ । ८ ह० च०, दोसर । ५ लो० क०, दुसरे । ५८ च०
तीसर । १४ लो० क०, तीज । ४६ स० क०
चौथें । ३७ च० (प)
पचवें । ७ स० क०
छठए । ७ स० क०, छठी । ३५ च०
अठएँ । ७ स० क०, अठउ । ५७ लो० क०
नवमी (तिथि) । १४ रा० ज०
दसम । ७ । ११ ह० च०
बरह । ३६ च० (प)
चौदह । ३३ च० (प)

(९४) अपूर्ण सख्यावाचक—
आधि राति । १० लो० क०

(९५) आवृत्तिमूलक
चवग्गुना । ११ मै० स०

टिप्पणी—

दोनों अथ में 'तिवि' का प्रयोग मिर० और ह० च० में मिलता है ।
तिविकर । १४६ मिर० (ग), बीवीकुच । १ । ६ ह० च०

सर्वनाम

(९६) प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त सर्वनामों के रूपों का विवरण नीचे दिया जा रहा है ―

उत्तम पुरुष	एक वचन	बहुवचन
अविकारी रूप	हउ	हम
	मइ	
विकृत रूप	मुहि मोहि	हम
	मों, मा	हमहिं, हमैं (विरल)
सम्बन्ध वाचक	मोर	हमारा
विशेषण	मोरैं	हमरैं
स्त्रीलिंग रूप	मोरी,	हमारी

टिप्पणी―

१―दाउद और कुतबन की रचनाओं में कुछ स्थलों पर 'हउ' का प्रयोग कर्मकारक ए० व० में हुआ है ―

आखि काढि क तोता धावा, लोर कहा हउ एइ पइ खावा ६४ लो० क०
(तोता जोगी आँखें निकाल करके दौड़ा। लोरिक ने कहा कि यह मुझे खा लेगा (इसने तो मुझे खाया)

सेख जन दा हौं पथि लावा। ६ च० (प)
(शेख जैनुद्दीन मुझे रास्त पर लाए)
तेहि हौं गा बेसमार। ३१ मिर (शि)
(वह मुझे बेहोश कर गई)

२―मिर० में हम का विकृत रूप 'हमाह' दो स्थलों पर मिलता है―

काहे तजिसि हमाह। १२८ मिर० (शि)
करवट सीस देइ जा कोई बैस हु जाय हमाह। २६१ मिर० (शि)

सम्भवत रूप हमह या हमहि रहा होगा। शब्दो के मध्यवर्ती 'अ' को दीर्घ करने की प्रवृत्ति प्रारम्भिक अवधी में मिलती है (दे० ७६ क्रमांक ८)।

(९७) अविकारी रूप एक वचन

हउ अस बोलिउं चतुर सयानी। ३ लो क०
सुरुज कहा मइ चाँदा बुलाउब। १० लो० क०

भा हुउँ सती सोर घर आनी। २७ मै० स०
भई बारह मोहि अस्पन दोहा। ३ मै० स०
पशु धोखे मैं कीन्ह जो घाउ। ५ रा० ज०
जेहि सुमिरत मैं मनि गति पाई। १ स० क०
सवन सुनहु चित लाइ करि कहौं बात हौं एक। ६ मिर०
हसी मुररि मैं तबही जाना। १६१ मिर० (शि)
गनपत को मैं चरन मनावो। १। १ ह० च०

रा० ज० और स० क० तथा स्वर्गा० और ह० च० में 'हुउ' के उदाहरण नहीं मिले हैं।

अविकारी रूप बहु वचन—

हम जीते मन मह जनि हारहि। ३५ लो० क०
मिला बहुत हम दूनहु प्रानी। ५ रा० ज०
हम गोनव द्वारिका दिन दस लागिहि जात। १० स्वर्गा०
इह मे राज यह रे हम कहे। १० मिर०
भननी गरभ होत हम जहिया। ६।१ ह० च०

मै० स० में अविकारी 'हम' का कोई उदाहरण नहीं मिला है।

विकृत रूप : एक वचन—

मुहि तजि सुरुज चाद लै भागा।। ४ लो० क०
राजा भया मोह कइ हिरदइ पठवहु मोहि। ३६ लो० क०
पाय लागि के सुरजन भो पति जाइ मनाइ। ५ लो० क०
तोर पितरं थाइ मोहि को हा। ३ मै० स०
अब मोपह कत मैना जाइ। ४ मै० स०
जिन्ह मोहि निरमल ग्यान सिखाऊ। १ रा० ज०
कह मोन्ह जस परे बिचारा। ६ रा० ज०
सो स्वामी मोहि कहहु बुझाई। ६ स० क०
गरुअ साप तैं मोकहु दोहा। ३२ स० क०
सेज बैठि अब बिरसहु मोही। मिर० (शि)
होइ मो मन साति। ५६ मिर० (चि)
करो क्रिया मोहि देहु मुरारी। ३।१ ह० च०
मो कह भए ब्रह्म बरबानी। ७।१ ह० च०

विकृत रूप बहुवचन—

काहू भया हम कहू चिन चन्ी । ६ लो० क०
हम हुक विछु कीज दाया । २ ह० प०
हम कहु विधि ऐसी रचि राखा । । ५ रा० ज०
गरुअ कस्ट विधि हम कहँ दीन्हा । ४५ स० क०
क्रिस्न पास हमैं जान देहू । १६ स्वा०
यह रे चोर हम जी उ चोरावा । १८३ मि० (श)
हमहूँ कह आहे यह पथा । ४३२ मिर०
हमहिं बिछोह सखी सो कीन्हा । ४२ मिर० (शि)

मै० स० में उत्तम पुरुष सर्वनाम के विकृत बहुवचन का कोई उदाहरण नहीं मिला है ।

सम्बन्ध वाचक विशेषण एक वचन—

नाँह मोर हौं बारि बियाही । ४ लो० क०
लावइ आगि बीच मोरें । ६ लो० क०
अब बुधि देउ सुनहु तुम मोरी । ८ चं०
पिता मोर जनु काहु न राजा । ५ मै० स०
पिता राज मोरे कउने काजा । ५ मै० स०
सुरज दास कवि बरना प्राननाथ मोर । १ रा० प०
दीन्ह तोरि जो मोरि गति आई । ६ रा० ज०
कौन पाप है पुरबिल मोरा । १३ स० क०
हिर्दै मोरे लेहु निवास । २ स० क०
देस देस मोरि चर्चा होइ । १३ स० क०
(भर्मि) पाउ मोर सूब न परइ । ४२४ मिर०
उठहु चलहु घर साथ होइ मोरे । २२ मिर० (शि०)
कस न मोर मुख देखहु आई । ८।६ ह० प०
जस मोह की गति तैसी मोरी । १।१५ ह० प०

सम्बन्ध वाचक विशेषण बहु वचन—

भाई हमार जो बाढ़ि बटाऊ । ३७ लो० क०
मलिन नयन सुनु बोल हमारे । ५६ लो० क०
नयरहु केर जो हमरे आए । १ प०
एक मास सुन बोल हमारा । २५ मै० स०

एकामिनि सुा बोल हमारी । २६ मै० स०
पिअहि नीर रहे प्रान हमारा । ४ रा० ज०
हठ ना रहि हैं हमरे आगे । २१ रा० ज०
कहे राजा अब सुन्नि हमारो । १८ रा० ज०
ईसरदास कवि प्रनवो हरखित चित हमार। २ स० क०
गरू हमारे भाग । ८ स० क०
पर पुरुख सहें कीत हमारी । ७ स्वर्ग०
सबसेउँ बडा जो पीर हमारा । ५ मिर०
हमरौं कह कहाँ कहि जाई । ६ मिर०
जो तैं बात सुनि (न) सि हमारी । ४६ मिर० (शि)
धिक जीवन धिक जन्म हमारा ।५।४ ह० च०
हमरे कहत बहुत दिन लागहि । १।५ ह० च०
सुनु राजा तै विनय हमारी । ७।१ ह० च०

६८ मध्यम पुरुष

प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में प्राप्त मध्यम पुरुष सर्वनाम के विविध रूप नीचे दिये जा रहे हैं—

	एक वचन	बहु वचन
अविकारी रूप	तू, तूँ	तुम, तुम्ह, तुम्ह
	तैं, तै	तुहि, तुह तुहु,तोह
विकृत रूप	तुहि, तोहि, तोह, (हँ)	
	तो	तुम्ह तुम, तुह (?)
		तुम्हह, तुम्हहि
		तुम्हहि, तोहहि (विरल)
सम्बन्ध वाचक विशेषण	तोर, तोहार,	तुम्हार
	तोहर, तोरे	तुम्हर
स्त्रीलिंग रूप	तोरा, तोहारि	

अविकारी रूप एक वचन

तू रनि जो कीन्हा हम पायू । ६ लो० क०
बारह मन्दिर रैनि तूँ पावसि । १७ ला० क०
यहि मारग तें दसी कोई । २० लो० क०
अस औसर तें बातिसि धाई । ७ मै० स०

आरे अधम क्रम तै आही। ५ रा० ज०
भो सहाय तें जालपा क्था कीह अनुसार। २ स० क०
अब राजा तै तपसा जीता। १२ स० म०
तूँ चढ रुपु देखु अस कहा। ५२६ मिर०
पूछिसि को रे कौन तें नाउ तोर का आहि। १८८ मिर० (शि)
तोह सो उह सग गइसि बिलाई। ४३ मिर० (शि)
सुनु राजा तै विनय हमारी। ७।१ ह० च०

अविकारी रूप बहुवचन

मोर गनित तुम लोरिक जानहु। १० ला० क०
कहउँ बोल सबही तुम्ह मानहु। १० लो० म०
कहेसि लोर तुम्हें भला न किया। १५ लो० क०
मइ करि जउ तुहि (तुहें) इहवाँ रहहु। ३७ लो० क०
मालिन बचन सुनहु तुम जनम कि नित नित होइ। मै० स०
मैल चोर तोर देखउँ कि तुम्हें दहुँ एहि जोग। ४ मै० स०
का लोगा तुह परहु पिमारू। १ मै० स०
कहै भवन तुम तुरित सिधावहु। ८ रा० ग०
राम रूप तुम्ह मति गति जानी। १ रा० ज०
कहाँ चले तुम पाछो कहहु आपन सविभाउ। ७ स० क०
बनखड जो आधी तहवाँ तुम्ह जाव। ३८ स० म०
सभै देवता तुह बाटौ क्रिति एक अस लेहु। ४६ स० क०
पूछिसि कौन रहहु तुम कहाँ। १३५ मिर (नि)
तुम्ह सब एहि कहँ गुन सिखरावहु। १६ मिर०
जहि सरवर तोह गइहु नहाई। १५५ मिर० (शि)
देवी गति तुम्ह कस न जानी। ७।१ ह० च०
खेम कुसल घरहि सिधावहु। २।५ ह० च०
तुह सो कस करी लरिकाई। ८।१ ह० च०

विकृत रूप एकवचन

नाक काटि तुहि देउ निसारउँ। २४ लो० क०
चाँद लेउ ताहि सरग चलावउ। २६ लो० क०
तौ कह बरहि न आवइ काऊ। ४० च० (प)

तोहि मानिन चूदर पहराऊ। २ मै० स०
तो कह मैना बहुत बिचारू। १४ मै० स०
एक पुत्र जो तोहि मा पावो। १० रा० ज०
कहु रिखि इह के राजा पूछन हो सो तोहि। ६ स० क०
तो कह प्रसन भये मरनाहा। १२ स० क०
हौं पुनि तोहि लागि हौ आई। ४४ मिर० (शि)
मैं रस बात कही रस तो सो जो रस कीजे बात। ४७ मिर० (शि)
तच्छक जाइ उसे नृप तोही। ५।१ ह० च०

विकृत रूप बहुवचन—
दिन दस तुम्ह कह पथ चलावइ। १० लो० क०
तुम ते वेद ब्रह्मा अनुसारा। २।१ ह० च०
तुम्ह ते बुधि जन करहि के बारा। २।१ ह० च०
तुम्ह गति स्वामी जानि न जाई। १६ स० क०
तुम्ह देखे मन हरस हमारा। ८ स० क० (ऋषि के प्रति)
बरस साठि मैं तुम्हे मन लावा। १६ स० क०
से उपकार कहौं तुम सेती जिहि घट रहै परान। २३ मिर० (शि)
के मिनु ताहहि साथ ले गई। १५५ मिर० (नि)
तुह त नारदादि गुन गावहि। २।१ ह० च० (ईश्वर के प्रति)
जो रूप हम तुम्हतो (हि) देखावा। ३।३ ह० च०
धारवन तुम कह नीर पठावा। ६ रा० ज०

सम्बन्ध वाचक विशेष एक वचन
कहसि चेर तोर होइ अवसरि। २६ लो० क०
तू (तो) हर पूयो चाँद सपूनी। ३८ च०
का हाइ बुवरू दूतें तोरें। १६ लो० क०
तोर निठइ धाइ मोहि कीन्हा। ३ मै० स०
एह प्रसाद प्रभु दोज दरसन देखो तोर। १।११ ह० च०
मैं मारा तोर श्रवन पूता। ६ रा० ज०
जनम जनम तोहार गुन गावा। १० रा० ज०
तोर जोय आपन के जानौं। ४८ मिर० (नि)
तारे बिना नाव है काहा। ६४ मिर० (नि)
कह तोहारे जोग उतारौं। १०६ मिर० (नि)

मम तोहार का जान गवारी । ६।८ ह० च०

सब तजि तोहरे सगहि लागी । ५।१६ ह० च०

सम्बन्ध वाचक विशेषण बहुवचन

लोर लागि जित बाचेउ कुवरू भाइ तुम्हार । १६ ला० क०

तुम्हरे देस यह तोता जोगी रहा होइ बट पार । ६६ ला० क०

कहब तुम्हार न फाबहि मैना । १८ मै० स०

कहत डेराउ पास तुम्हरे वैसे । २१ स० क०

कहा तुम्हार न अहै भला । १६ मिर० (शि)

कालि कहहु जो जोय तुम्हारे । १३४ मिर० (शि)

सो राजा छै करै तुम्हारा । ८।१ ह० च०

जो तुम्हरे लघु बालक आही । २।१६ ह० च०

९९ अन्य पुरुष और दूरवर्ती सकेत वाचक

अन्य पुरुष तथा दूरवर्ती सकेत वाचक —अन्य पुरुष वाचक सवनाम दूरवर्ती सकेतवाचक सवनाम के रूप में भी प्रयुक्त होते है। नित्य सम्बन्धी सवनाम के रूप भी इसी तरह होते हैं। नित्य सम्बन्धी सवनाम के रूप सम्बन्ध वाचक सवनाम रूपो के साथ दिए जाएगे। नीचे अन्य पुरुष और दूरवर्ती सकेत वाचक सवनाम रूपों का विवरण दिया जा रहा है—

	एकवचन	बहुवचन
अविकारी रूप	सो, से, सेइ, इ	ते,
	यह, उह, उवह, क	तिन्ह, तेन्ह, तिन
	ओहि (ओ ?)	उन्ह,
		ओइ, बोइ, बोए, वइ
		तिन्ह हि
		तिन्हहि, ति है (विरल)
विकृत रूप	तेहि, तिह, हि	उन्ह उन
	ओ, ओहि, वोहि	उन्हहि
	ता, ताहि, तासु	

टिप्पणी—

तेइ, वेइ, (ए० व) और तिन्ह तेन्ह तिन, उन्ह (ब० व०) वस्तुत विकृत रूप हैं जो कर्ता रूप में प्रयुक्त होत है।

अविकारी रूप ए० व०—

(क) सो सिगो पूर मन्त्र सो लावा । ३७४ च० (प)

अउ सो गारहि मागि कइ लीन्हा । ५३ लो० क०
फिरइ भाग दिन ओछे मीत सो वैरी होइ । ५ मे० स०
तबही सो धन लडावे । १५ रा० ज०
ओ नर सदा बैकुंठहि जाई । १४ रा० अ०
दया धम सो सदा अचारा । ६ स० क०
सो नर नरकहि जाहि । ३० स० क०
बरिस पाच मह भएउ सो आई । १६ मिर०
कहाँ सो हरिचद है सतवती कत रावन कत राम ।
४३० मिर०
बघो बैर समूझि सो आवा । १।१३ ह० च०
सो नर पार न पावे । ३।२ ह० च०

(ख) से

स० क०, रुक्मा और मिर० में 'सो' के साथ 'स' का भी प्रयोग मिलता है, यद्यपि ऐसे प्रयोग विरल है—
सेउ न पावहु सम (स) कर मता । १६ स० क०
सेउ—वह भी
से उपदेस करव मैं भारी । १८ स्वर्गा०
से हक कह दे गएउ वियोगा । ७० मिर० (शि)
(राजकुमार)
से उपकार कहाँ तुम सेती । २३ मिर० (शि)

(ग) तइं,—इ

चोर चोर कह मारत छूटेउ
तइ धान लिएउ (उ) छुड़ाइ । ८७ लो० क०
तइ नृप प्रान लीन्ह सिर नाइ । १।६ ह० च०
तेइ नहि चीन्हा छनिक बिमारा । ६ स० क०

(घ) वह उवह, उह, ऊ

हुउ याहि में वह जिय बस मोरें । १६ लो० क०
उहो आइ पुरोहित आई । ३८ प (प)
हौं र मिरगा उवह पारध भई
वह रे गात सब हाड़ सिसि टाढा । २६३ मिर० (नि)
उह धनि मिरगावति पह आई । २२२ मिर० (नि)
उह तो हरिचद सग वियोगी । ४।७ ह० च०

उहे कथा हरि नारद पाई। ४।१ ह० च०
ऊ फिर चेर न होइ। ३०८ च० (प)

(ङ) ओहि (ओ ?)
कोहि परान ओहि जीवन मोरा। २१ मै० स०

टिप्पणी

सम्भवत ओहि में—हि समेतायक अव्यय है। ओहि अर्थात् वही। अन्य पुरुष वाचक सर्वनाम शब्द 'ओ' है।

'सो' और 'वह' (विरल) का प्रयोग अप्राणिवाचक कर्म के रूप में भी होता है—

दइय का लिखा होत सो पाइअ। २३ लो० क०
माखन होत सो अगम न खावा। १।१० ह० च०
सो लेइ राउ चले पुनि कैसे। ११ रा० ज०—सो प्रसाद
सो कछु कहहु गोसाइ। ८ स० क०
करौं सोइ रहै अकथ कहानी। ४३६ मिर०
मैं वह माग चीर तर दोठी। ७५ च० (प)

मिर० एक जगह 'सो' का प्रयोग प्राणिवाचक कर्म के रूप में भी हुआ मिलता है—

एक न पूत रहा घर ओहि के सो विधि लेउँ लिए माँगि। १३ मिर०

अविकारी रूप बहु वचन

(क) ते तीर बैठि ते लेहिं भर आहें। २१ च० (प)
धनि ते बोल धनि लेखन हार धनि त आखर अरथ
विचारा। ५६ लो० क०
जहिं घर कत ते करहिं बैरासू। ६ मै० स०
सुरजदास कवि बरनो सुन ते राम पुरान। २ रा० ज०
ते पाडौ कत लेहिं निवासा। ६ स० क०
लेत साँस उसमहिं ते काना। ५२ मिर० (शि)
ब्रिच भयेउ आवहु पंडर भये ते कंम। ३०७ मिर० (शि)
ते बिखभरे परे जल मोही। १।१७ ह० च०
(वे-पन्नी) विषभर जल में पडे।
ते हरि जरत उबारेउ तहि आ। ६।१ ह० च०

(ख) तिन्ह, तेन्ह, तिन

जिन्ह देखा तिन्ह गयउ पराना । ११९ च० (प)
ऐसे सत तिन्ह उघटा रैनि रहे ससार । ४७ स० क०
तिन देखेउ दिखेसुरि समदि राउ बैसाउ । ७ स० क०
पथी आवहिं तिन्ह पानि पिया बहु । ११९ मिर० (शि)
तेन्ह आप महँ कीन्ह विचारी । ४४२ मिर०
गोकुल आइ जनम तिन्ह लीन्हा । २।२ ह० च०

(ग) उन्ह, वाह, ए, वे, उइ

उन्ह मनुसेश्वर भारी पावा । ४० मिर० (शि)
व रे चलहिं यह धावइ मिला कोस दस जाइ । ३०९ च(प)
गवनि करहिं उइ सबद सुहाई । ३८ मिर० (शि)
नील जलद वोइ दूनौ भाई । ३।११६ ह० च०
वोए गोकुल होए प्रगटे जन लालच के स्वामी । २।४ ह०च०

टिप्पणी

लो० क०, च०, च० (प), मै० स०, ह० च , रा०ज० में 'उन्ह' का अविकारी प्रयोग नहीं प्राप्त हुआ है ।

तिन्ह, तिन, व, उइ सज्ञा के साथ प्रयुक्त रूप नहीं मिले हैं । 'उन्ह' का ऐसा प्रयोग एक स्थल पर ह० च० में मिला है—

उन्ह विप्र ह बड़ अवगुन कीन्हा । १।२२ ह० च०

वोए, वोन्ह, वे, का भेद केवल लिपिगत प्रतीत होता है । अवधी ध्वनि प्रवृत्ति के अनुसार इन सबका उच्चारण वइ रहा होगा ।

ते छु नीलड गावहु आ , त लारिक तुम्ह कहवाँ पाई । '
२४२ च० (प)

में त अप्राणिवाचक बम क रूप में प्रयुक्त ज्ञात होता है ।

विकृत रूप एक वचन

(क) तहि, जिहि ह—द

तहि पर कामिनि गज विद्यावहिं । ५ लो० क०
तहि वाटे से बनिज पसारा । ५३ च०
तहि रतना मानिन हकराई । २ म० स०
तहि मह तीनि पाट की राना । ३ रा० ज०
तहि दिन राम लीन्ह अवतारा । १४ रा० ज०

तेहि पाछे आलपा कै माया । ३ स० क०
तहि सरवर कर करौं बखाना । २० स० क०
पाछे तेहि क जता (चिंता) लीन्हा । ३ मिर०
तहि सम प्रिथिमी और न केऊ । ५।१ ह० च०
तेहि मारग नारद रिषि आए । ३।११ ह० च०
अरु तिहि लाइके वियाहैं जाई । ३६ च० (प)
तिंह दिन हुत महि (मुहि) अउर न भावा । १८६ च० (प)
दूत लखन तिहु पास साधन आप समारि । ४ मै० स०
तिहु जोवन सो कउन पिरीती । ११ मै० स०

(ख) ओहि, वाहि, ओ, उहि

ओहि कइ हाक न हस्ती सहइ । १५ लो० क०
ओहिकै करत सभै वा दुखी । १६ रा० ज०
जो रसना ओहि नाउ न आवा । ३ मिर०
मैना धाइ ओहर मुख चहा । ७ मै० स०
हमरे बात उहि सौं अस सुनी । ३६ मिर० (शि)
जदुनाएक वोहि निकट बोलाए । २ । ११ ह० च०

(ग) ता, ताहि, तासु

ताकर धरम दुहूँ जग धारा । ४० च० (प)
ताकौ बार न बाल्यिहू । ३ मै० स०
ताकर रूप मैं बरनौं काहे । १६ स० क०
सती होई सत ताकर गनिअे । ४३६ मिर०
लै गइ चाँदा बावन ताहो । ४ लो० क०
चा (जा) रउँ नार ताहि कर हिया । ७ मै० स०
मते हकारि न पूछहु ताही । ? । १२ ह० च०
तब रावन अस पूछा ताही । ५ रा० ज०
ताहि देस भल बसइ न कोई । ४ स० क०
पेसर अउर देखावहु ताही । ११ मिर०
भगिनी तासु देवकी नाऊ । ७ । १ ह० च०
बर्हिहु काहु कम कीजै तासू । १६ मिर० (गि)
प्रथमहि चरन चीतवौं तासू । १ । १।१ ह० च०

टिप्पणी

दाऊद और साधन ने अन्य पुरुष सर्वनाम के एक व० विकृत रूप में 'तिस' का प्रयोग किया है। प्रयोग विरल है—

निरहत पयरें तिसके बाँधे। २४ च० (प)
जुगजुग फूटइ पानव ति ह निति तिसको जाइ। १५ मै० स०

ह० च० में अन्य पुरुष एक वचन विकृत रूप में 'वा' का प्रयोग हुआ है—

वाको काल आए निअराना। ४। ८ ह० च०

विकृत रूप बहु वचन

(क) तिन्ह, — हि, तिन्हहि, तिन्हे (विरल)

जनु तिन्ह भीतर धरे। २ लो० क०
उन्ह दुख तिन्ह सुख रैन दुहेली। ८ मै० स०
तिन्ह के दोग भले जीव लेई। ६ रा० ज०
तिन्ह से गम रहो मन जानी। १८ स० क०
तिन्ह कह आहि न मोख। ११ मिर०
तिन्ह कर कहा झूठ करि जानहि। १। ८ ह० च०
तिन्हहि रुचइ जिन पास पियार। २३ मै० स०
तैंतिस कोटि देवता तिन्हहि भौ अपार। ४७ स० क०
बना सभा पन तिन्हें बिलासा। ८ स्वर्गा०
तिन्हहि रोआए दिन्हीं दुख भारी। ३। ७ ह० च०

(ख) उन्ह उन उन्हहि

बहुत लोग हम उन्ह के मारे। २७ च०
मुगिया सारी उन पहिराई। ५८ च०
उन्ह दुख तिन्ह सुख रैन दुहेली। ८ मै० स०
अउर बहुत उन्ह केरि बड़ाई। ६ मिर०
जमेहु जोउ हुन गात। ४८० मिर०
आ उन्हहि निसारिन्हि मारि। ३३६ मिर० (नि)
लगि उन्ह रंगा जाइ। २। ८ ह० च०

टिप्पणी

१—तिन्ह तिन्हे तिन्हहि उन्हहि का प्रयोग गद्य के साथ में नहीं मिला उन्ह का ऐसा प्रयोग रा० ज० में एक स्थान पर मिलता है—

उन्ह तरसी बहु पानी पिआवहु। ५ रा० ज०

२—मै० स० में एक स्थान पर नित्य सम्बन्धी विशेषण 'तवन' का प्रयोग मिलता है—

तवन नेह नित बेरसम कामिनि यह ससार। १८ मै० स०

३—उहहि केवल मिर० (दि) में एक स्थान पर मिलता है। दे० पृ० १६० (ख के अन्तर्गत दिया गया उदाहरण)

नित्य सम्बन्धी सर्वनाम—

अन्य पुरुष तथा दूरवर्ती संकेतवाचक सर्वनाम तथा नित्य सम्बन्धी सर्वनाम के रूपों में कोई अन्तर नहीं मिला है। इनका प्रयोग सम्बन्ध वाचक सर्वनामों के साथ होता है। सम्बन्ध वाचक सर्वनामों का उदाहरण देते समय इनके उदाहरण भी सामने आ जाएँगे।

१०० सम्बन्ध वाचक सर्वनाम—

प्रारम्भिक अवधी की विवेचित रचनाओं में प्राप्त सम्बन्ध वाचक सर्वनाम के विविध रूप इस प्रकार हैं—

	एक वचन	बहु वचन
अविकारी रूप	जो, जेइ, जे	जेइ, जे
		जिन्ह, जिन
विकृत रूप	जेहि, जेहि, जेह	जिन्ह, जिन
	जिंह, जिह	जेन्हि, जिनहि
टिप्पणी—	जा	

जेइ, ए० व० जिन्ह, जिन वस्तुत विकृत रूप हैं जो कर्ता रूप में भूत कालिक कृदन्ती रूपों के साथ प्रयुक्त होते हैं।

अविकारी रूप एकवचन—

चाँद कहा सो मूरुख जो अइसहिं पतिपाइ। २७ लो० क०
जेइ रे सुना सा घाहहि रोवा। ४१ लो० क०
जो आवा सो रहा न कोई। १ मै० स०
कोटि तीरथ जो कीन्हा पहले दीन्हा दान
सुरजदास कवि बरनों सुन ले राम पुरान। २ रा० ज०
सभा लोग जो करइ मदाई। जनम जनम सो नरकहि जाई। ४ स० क०
पुन कथा जे यह सुनै ताकर होइ सिध काज। ५७ स० क०
जीय दान जो चाहै न्हि दस सेवा करउ सौ बार। ७ मिर०
जेइ सिरजा वेहू से धका। ४७६ मिर०

इह के प्रम जो होइहि बारा । ७।१ ह० च०

'जो' का प्रयोग अप्राणिवाचक 'कर्म' के रूप में भी होता है—

परम (पेम) कहानी कहो जो बाता । २३ लो० क
पहलें पुनि जो दई उपाने । १ मै० स०
जो मागिसि सो पाइसि विधि सउ । १३ मि०
सो कीजु कहहु जो मनुसहि भावै । ५।८ ह० च०

अविकारी बहुवचन—

जे रहे मान सो आगें हारे । १२६ च० (प)
जेइ आए सो समदि चलाए । ४७ च०
जिन सिरजा इह देवस बयारा । १ च (प)
जिन कलि बेलसेउ एह । १ मै० स०
चा (जा) रउँ नार ताहि कर हिया, एक छाँड जिन दोसर किया ।
ज ७ मै० स०
सो न कहहि जे जरत उबारब । ४ । ११ ह० च०
जिन्ह हरि कौरव सेन सघारा । ६ । १ ह० च०
तीन भुवन जे भरिपुर राखा । २ रा० ज०
जिन्ह मोहि निरमल ग्यान सिखाऊँ । १ रा० ज०
कीन्ह ग्रन्थ जे बैताल पचीसी । ४ स्वर्गा०
असन जिन्ह विधि लिखा होई लिलाट । १४ स० क०
जे जन जिमै बियोग के मारे, ते तन कला पंच बस मारे ।
६३ मिर (शि)
जिन्ह पावा तिन्ह दारिद भागा । १३ मिर०

टिप्पणी—

'जे' के कुछ ऐसे प्रयोग मिले हैं जो अप्राणिवाचक और प्राणिवाचक कर्म के रूप में प्रयुक्त हुए प्रतीत होते हैं—

जे महरें जेउनार जिवाये । सगरें बीरन काजें आये ।
११६ च० (प)
(जिनको महर ने जेउनार जिमाया था व सकल बीर काम नहीं आए)
अउर पखि जे मारे ताकर नाउ को लेहि । १५४ च० (प)
(और जिन पक्षियों को मारा उनका नाम कौन ले)

जे छद नोखड गावहु आइ, ते लोरिक तुम्ह कहवा पाई ।

२४३ च० (प)

(जिन छदो को नोखड में गाते हो ऐ लोरिक ! तुमने उन्हें कहाँ पाया)

छद छ*, धोका

विकृत रूप एक वचन—

(क) जेहि, जेहि, जिह, जिह, जिहि

जेहि लगि तजेऊ सम घर बारू । तेहि बिन कम अउ जिवन अधारू ।

८१ लो० क०

जेहि कारन हउ जोउ न पारउ देखेउ पल सताप

तेहि सेतें पथि बाहे । ४४ लो० क०

गयी (यउ) सो जान जिह मैला । ६९ च० (प)

बात कहत जिह बिस चढहि । ७६ च० (प)

जेहि घर मत ते करहि बेरासु । ६ मै० स०

जिह राखइ करतार । ताकउ बार न वाकियइ । २ म० स०

जेहि सुमिरत मै मति गति पाई । १ स० क०

आपनि स्रिस्टि जाइ जेहि केरी । २ मिर०

जेहि मारग सिसु आवहि जाहो, बदन पसारि बैठ मग ताहो ।

१ । १३ ह० च०

जा—

जा कह कछु हाथ कै देई । ३८ लो० क०

सुन मालिन सावन तेहि भावइ, जाकर पियहु परदसर आवइ ।

—६ मै० स०

जाहि देस ठाकुर मद होई ताहि देस भल बसइन कोई । ४ स० क०

जा कहँ भौंह होइ चरन मैलो सो रे होइ जरि छार । ≡ मिर०

प्रथमहि चरन चीतवो ताके सरव लोर बोदर बस जाके १ । १ ह०च०

टिप्पणी—

कहो कहीं 'जिससे' के अथ ये 'जे' का प्रयोग मिलता है—

सादर कथा कहौं कर जोरी । मै न कहावो जे मति भोरी ।

१ स० क०

(मैं आदरपूवक हाथ जोड कर कथा कहता हूँ जिससे मति का भोरा न कहलाऊँ)

सो न करहु जे मुकुति हमारी । २ । ११
(यह न करो । जिससे हमारी मुक्ति हो)
सो उपकार करो अपने जिय जे पारो बहि याह । ६१ मिर० (गि)
(अपने जी में वह उपकार (?) करो जिससे उसको खबर पाऊ)

विकृत रूप बहु वचन

जिन्ह, जिन—
जिन्ह रूपवन्ति यह धन माडी । तेहि क पाँव न बांधा साड़ी ।
२१ ग०
जिन घी होइ सो नाउ न लिये । १०६ प० (प)
जिन्ह विधि रासइ सत औं । २ मै० स०
तिन्हहिं रुपइ जिन पात पियार । २३ मै० स०
जिन देवतन सुरिजन रिपु भये । ३३८ मिर० (गि)
जिन्ह कहु सो पति अग्या दीन्हा । ३।११ ह० प०

जनहि, जिनहिं—
और हु दीन्ह जैनहि जस जाना । ४७ प०
जिनहि पंथ दिखराइ दीन्ह है तिन्ह कहें जरम न भून ।४ मिर०

१०१ निकटवर्ती संकेतवाचक सर्वनाम

निकटवर्ती संकेतवाचक सर्वनाम विशेषण का भी काम करते हैं । प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में प्राप्त निकटवर्ती संकेतवाचक सर्वनामों के विविध रूप इस प्रकार है—

	एक वचन	बहु वचन
अविकारी रूप	यह, एह	इन्ह
	इह ई	एह, ए
विकृत रूप	यहि, हिं, इ	इन्ह, इन इन्हहि
	इह,ह हि	इनहि,
	ए	

टिप्पणी—

'इन्ह विकृत रूप बहु वचन है जो भूतकालिक कृदन्त के साथ कर्त्ता रूप में प्रयुक्त हुआ है ।

अविकारी रूप एकवचन

(क) यह, एह—

बइठ तोतइ यह जब तव रहा। ६६ लो० क०
पाछे तो पछताए भूठा यह ससार। २१ मै० स०
एह जग के है एह बेवहारा। ८ रा० ज०
हमहूँ कह आहे यह पथा। ४३२ मिर०
एह बालक अदुवस उघारब। २।६ ह० च०

(ख) इह, ई—

लगि जस इस आहि दुखकारी। ६४ च० (प)
इ सब लोरि लोरक के अपकारा। २७ च० (प)
की इह तपसा को नारी अहई। २६ स० क०
चित अनते घर इह फुसिलावै। १२१ मिर० (शि)
इहै देत जानेउ जदुराई। ४।८ ह० च०

टिप्पणी—

१—अविकारी रूप ए० व० का प्रयोग अप्राणिवाचक कर्म के रूप में भी होता है—

राहु केतु यह दखत अहा। ४० लो० क०
जिन सिरजा इह देवस बयारा। १ च० (प)
दयी लिखा जो ई आहा। ३६ च० (प)
जाता देखउ यह ससारा। १ मै० स०
तोहि अस सुदरि यह बन दीन्हा। ३६ स० क०
जाहु तुरत घर आपने ई सभ लेहु गिनाइ। ५४ स० क०
अनि यह रवि के चरित पसारा। २ मिर०
एह कुबुधि राजे बड कीन्हा। ८ ह० च०

२—एह, और यह का अतर केवल लिपिगत है।

अविकारी रूप बहुवचन

इन्ह, इन, ये, एइ—

स्रवन लागि मन्तर इन्ह कहे। ४२ लो० क०
अबाबक्र उमर उसमान अली सिघ ये चारि। ७ च० (प)
इन्ह हमार सब देखु सरीरा। २७ स० क०
उत्तिम जन्म धन्य ऐ (ए) इ लोगा। १६ स्वर्गा०

जो इह पथ दिखइ दीह है । ५ मिर०
इन न मोह काहू कर माना । १२६ मिर० (पि)
येइ अस कहा कुवर हारावा (?) । ११६ मिर० (शि)
ए आपुस मह कहूँ लराई । ३६३ मिर० (शि)

टिप्पणी

(१) 'एइ' और 'येइ' का अन्तर केवल लिपिगत है ।

(२) मै० स० की एक पंक्ति में 'यह' का प्रयोग बहुवचन के रूप में हुआ है—

अब यह बारह मास तुलाने । २७ मै० स०

डा० सक्सेना ने 'यह' को बहुवचन के रूप में प्रयुक्त रूप माना है (दे० एवोल्यूशन आफ अवधी) ।

विकृत रूप एक वचन

(क) एहि हि, इ—

यहि बिरोग जउ नाह न आवा । ५ ला० क०
सुनहु कान दइ यदि गुन यारे । ५६ लो० क०
पाँच भूत की हथिया एहि मो । १६ म० स०
एहि रग रहे राजा बारह बरस तुलाना । १५ रा० ज०
एहि विधि धम निवाहे जाई । १६ स० क०
कहेसि बान हनि का एहि मारौं । १८ मिर०
अम्रित कथा भागवत प्रगटित एहि ससार । ४११ ह० च०
लोरकहा हउ एह पइ खावा । ६४ लो० क०
(लोर ने कहा इसने मुझे खाया)

(ख) इह, ह, हि—

इह कबिलास अउर को आवा । १६३ चं० (प)
आ कछु होइ धम इह माहा । १६ स० क०
इहि आ जनम न मिलितिउ काऊ । ३६७ मिर० (शि)

(ग) ए—

एकर रूप न जाइ बिसेखी । २६ स० क०
अग भग कछु एकर करऊ । ३१७ ह० च०

विकृत रूप बहुवचन

(क) इह इन—

जउ इन्ह महँ एकउ मरि जाइहि । ७३ लो० क०

भरन सनेह हिये उर इनवै रहे न पास । ११३ च० (स)
प्रीति जाइ इन वातनि सरग होइ सुख कार । १३ मैं० स०
इन्ह के कथा कहो रिपि रामा । १३ स्वर्गा०
दुग्गम गढ इन्ह सेउँ नहिं रहा । ४ मिर०
आदि अंत इन्ह कह भ (I) नाहो । २।९ ह० च०

(ख) इन्हहि, इनहि—
वयो (केव) कोउ इनहि मारे पारा , १० स्वर्गा०
इन्हहि देखे वड कुमगुन तेली चिकरा मोन । ५६ मिर० (शि)

इन्हहि का प्रयोग केवल मिर० (शि) और इनहि का केवल स्वर्गा० में मिला है ।

टिप्पणी

मिर० मे एक स्थल पर 'एतिन्ह' का प्रयोग मिलता है—
जे एतिन्ह कर ली ह सोभावा । १८३ मिर० (शि)

१०२ प्रश्न वाचक सवनाम

प्रारम्भिक अवधी की विवेचित रचनाओं में प्राप्त प्रश्न वाचक सवनाम के विविध रूप इस प्रकार है—

	एकवचन	बहुवचन
अविकारी रूप	को कउन केइ, के (विरल)	किन्ह, के, किनि

विकृत रूप केहि, का (प्राणिवाचक)
का काह, काहे } अप्राणिवाचक

विशेपण कउन

टिप्पणी

किनि और किन्ह बहुवचन विकृत रूप है जो कर्तारूप में प्रयुक्त हुए हैं ।

अविकारी रूप एक वचन

(१) को, कउन
निष्टि अपार देखि को पारइ । ३४ लो० क०
गिनत न आवइ कउन सो लेखा । ४७ लो० क०
तिन्ह मित को आपन्ह डहकावा । ११ म० स०

जि ह विधि रासइ सत सा कउन डोलोव पार । २ मै० स०
जिन्ह का जन्म अंत को पावा । १७ रा० ज०
आरे अधम पवन ते आही । ५ रा० ज०
अपनी मति को ओरइ पारा । ३ स० क०
को उपाय रस वचन सुनावे । ३० मिर० (नि)
सुरआ सबहू गो को पारा । ७।१ ह० च०

(२) केइ, के—

केइर (रे) निपूती माता कोसी । ४५ लो० क०
पुरविल लिखा विधाते के दहु मेटनहार । ९ स० क०

अविकारी रूप बहुवचन

के, किनि, कि ह—

प्रारम्भिक अवधी की विवेचित रचनाओं में इस रूप के केवल तीन उदाहरण मिले हैं। वे नीचे दिए जा रहे हैं—

अम्रित सोचे के रे सँवारी । १६ मिर० (नि)
कलजुग माह ऐस किनि किया । ४३६ मिर०
कौआ कैसे मुआ (कि ह मारा) कर तारा ४।८ ह० च०

(इस पंक्ति में कैसे मुआ और कि ह मारा दोनों दिए गए हैं। 'किन्ह मारा' का पाठ मान लिया तभी यह उदाहरण सगत है)

विकृत रूप एक वचन

(१) केहि

अइस न जानउ केहि कह धरा । २७ लो० क०
सो पाडो कहवाँ गे केहि सो छाँड़े राज । १३ स्वर्गा०
कहिसि काहु केहि कारन रोवहु । ६१ मिर० (शि)

(ख) का—

काकरि धिय यह कहँवा जाई । ६८ लो० क०
काकर धरम पाप कह केरा । २१ म० स०
काके टीका सारो काके सौंपो शहन भडार । ७ रा० ज०
कहो कासो घर पठवो सदेसा । ३१ स० क०
का कर बाप काहे कर बारा । ४३७ मिर०
सेवक वपुरा काहो (हि) पुकारे । २।१७ ह० च०

अप्राणिवाचक रूप

का, काह, काहे—

का होइ कुँवरू दूतें तोरे । १६ लो० क०
काह कहउँ कस ऊतर देऊँ । १६ लो० क०
काहे कह विधि कीन्ह बिछोवा । ६२ ला० क०
पोस मास का करिहे मोरा । १६ मै० स०
काह भएउ सम भोग । ४ म० स०
नेह काहे कर पाप पियह कारन सिर धोनियइ
फिरति अहो मंदिर अपने मह का करिहैं करतार । ४३८ मिर०
आपि क मटक काह दहु होई । ४३५ मिर०
काहे कहें पिहना मुह दिहा । १३५ मिर०
जूझी जात का करतोउ (करतिउ) भाई । ११८ हु० च०

टिप्पणी

१—'जे प्रानी गुनवो करे जम का कहा बसाइ । १' स्वर्गा० में 'कहा' 'काह' का ही परिवर्तित रूप और समानार्थक ज्ञात होता है। अर्थ है—जो प्राणी गुनते हैं (भगवान् का नाम) यम का उन पर क्या बस है?

कर्त्ता रूप में प्रयुक्त रूपों के अतिरिक्त प्रश्नवाचक सर्वनाम के विकृत रूप बहुवचन का कोई उदाहरण प्रारम्भिक अवधी की किसी विवेचित रचना में मुझे नहीं मिला है।

प्रश्न वाचक विशेषण

कउन, कवन—

कउनि नारि कहवाँ हुति आई । १८ लो० क०
कवन मास जउ सो जिय मारा । १७ मै० स०
कवन बोल तुम बोलन लागे । २१ रा० ज०
कौन मुख ते भयेउ वियाहा । २१ स० क०
जइहु कौने बाट पराई । १४५ मिर० (शि)
कौन देव हरि लीह गोपाला । २१८ हु० च०

१०३ निज वाचक सर्वनाम

प्रारम्भिक अवधी की विवेचित रचनाओं में प्राप्त निजवाचक सर्वनाम के विविध रूप इस प्रकार हैं—

अविकारी रूप आप, आपु

विकृत रूप आप, आपु, आपहि
आपुहि
विशेषण आपुन,
आपन, आपना
अपने, आपने
आपु

अविकारी रूप

आप, आपु—
कै पहिया के आप जनावै। १८ च०
(कर्त्ता लोरिक)
आपु लहि (मैथलाघव)
सब धन सब आपुही सोई। ४ स० क०, आपु+ही (मैथलाघव)
आपु आप कह लागि गोहारी। ४३४ मिर०
आपुहि सो प्रभु त्रिभुवन भोगी। १।२३ ह० च०

आपु या आप का प्रयोग प्राणिवाचक रूप की भाँति भी होता है—
फिर फिर चादर आपु दिखावइ
मोहि देखे मुकु बैवट आवइ। १८ लो० क०
दूत लखन तिह पास साधन आप सँभारि। ४ म० स०
भर नृप आपु सँभारहु कहि अम्बिका जाई। ४।४ ह० च०

विकृत रूप—
जस कीरति आपु कहँ लेई। ३८ लो० क०
तैं आपहि काहे ओडेरसि। १२ मै० स०
तिन्ह नित को आपहि डहकावा। ११ म० श०
आप आपु कहँ लागि गोहारी। ४३४ मिर०
या तेहि लगि आपुहि परगटा। ३ मिर०
तेन्ह आप महँ कीन्ह बिचारी। ४४२ मिर०
आपुहि अगम अगोचर आपुहि प्रगट देखाव। १।२३ ह० च०

निजवाचक विशेषण—

करिया लोर आपुन कर गहा। १६ लो० क०
बहुरि जाहि घर अपने बावन कहा सुनहि तू मार। २३ लो० क०
कहाँ चले तुम पाछौ कहहु आपन सतिभाउ। ७ स० क०

जाहु राज घर आपना। १५ स० क०
अपने घर तें जासि। २६ स० क०
जाहु तुरत घर आपने। ५४ स० क०
आपन आनि दिहिसे एक खीरू। १५६ मिर०
आपुन क्रिस्न करावहि पूजा। १।२३ ह० च०
जिन्ह जाना अपने घर माह्रीं। १।२४ ह० च०

टिप्पणी—

१—प्राणिवाचक रूप (अविकारी) के जो उदाहरण ऊपर दिये गये हैं वे परसग रहित विकृत रूप भी हो सकते हैं।

२—ह० च० और रा० ज० में 'आपु' के केवल ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनसे प्रतीत होता है कि निजवाचक विशेषण के रूप में 'आपु' का भी प्रयोग होता था।

आपु परार जो सभ कै देख। १।२४ ह० च०
(जो सबका अपना और पराया देखे)
आपु परार न चीन्ह भुआरा। २२ रा० ज०
(भूपाल (दशरथ) अपना पराया नहीं पहचानते)

'परार' निश्चित रूप से पर (अन्य) का षष्ठी या सम्बन्धवाची विशेषण रूप है जिससे प्रकट होता है कि इन स्थलों पर प्रयुक्त 'आपु' निजवाचक विशेषण है।

१०४ अनिश्चय वाचक सर्वनाम

प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त अनिश्चयवाचक सर्वनामों की तीन श्रेणियाँ हैं—

१—'अउर' तथा इसके समानार्थक 'पर' तथा 'आन'
२—कोई
३—सब

नीचे इनके विविध रूपों का विवरण दिया जा रहा है—

	एक वचन	बहु वचन
(१) अविकारी रूप	अउर, अवर आन	औरन्ह
विकृत रूप	औरहि आन	औरन्ह
विशेषण	परा, परार पराइहि	

अविकारी रूप—

अवर बचन हर मुखहि न आवै । १८ प०
यह सिरु देहउ लोरकहि अउर न देखइ पार । २५ मै० स०
ओरो देव चले समभारी । ४८ स० क०
एहि सरि अउर न पूजै कोई । १५ मिर०
तेहि सम प्रिथिमी और न कोऊ । ५।१ ह० प०
आन होइ तउ मरइ लजाई । १७ लो० क०
आन कथा को कहे है भारी । ६ प०
आन अवर तोह मैखउ । ८ मै० स०
राम छाडि नहिं आन आधारा । १६ रा० ज०
आन की भीच आन ना भरई । ४३६ मिर०

'आन' का प्रयोग अप्राणिवाचक रूप की भाँति भी होता है—

मैं का करब अब आन । ३४ प०
आन भवर तोह भेखउँ । ८ मै० स०

अविकारी रूप बहुवचन (विरल)—

औरन्ह कहा न मारी बहुरि चढ़े तिरहूट । २४६ मिर० (शि)

विकृत रूप एकवचन

तोह देखत औरहि लइ गयऊ, । १४ मै० स०
आन का सरबस आपु हरि लेई । २८ स० क०
आन की भाव आन ना भरई । ४३६ मिर०

विकृत रूप बहुवचन (विरल)—

औरन्ह दीन्ह जेनहि अस जाना । ४७ चं०

विशेषण—

परार, परा, पराइहि—
तोर बैर अउ सिर पहुचावउ धीय परारी आनि
आपु परार न चीन्ह गुआरा । २२ रा० ज०
हतिया लागिहि दस पराइहि । ७३ लो० क०
आपु परार जो सम कै देखै । १।२४ ह० प०
परा धन हरै चोर चतु जैस । २।१० ह० प०

(२) 'कोइ' वाचक रूप

इसके विविध रूप इस प्रकार हैं—

अविकारी रूप—

कोइ, कोउ, केउ, केहू, काहू

अप्राणिवाचक—

कछु, किछु

विकृत रूप—

काहू—

अविकारी रूप—

दुखी होइ जनि कोइ । ४८ लो० क०
अइस चलहु नहि सुधि कोउ पावा । ८ लो० क०
दोसर न केउ जो कर उपकारा । ४६ लो० क०
कइ केहूँ कछु इह मग लावा । ४५ लो० क०
धूर्त्ता केर पौराहर पृथमी कोइ न रहा निदान । १ मै० स०
सभ कोउ खेलइ परम घमारी । १४ मै० स०
सभ काहू घर बार सँभारेउ । ६ मै० स०
तोहि समतूल पूजै नहि कोई । १७ स० क०
जानि कोउ जाने जो मति भारी । ६ स्वर्गा०
सभ केउ लीन्हा सावज गए लोग ग्रिह माह । २३ स० क०
चतुर सुजान माख सब जाना अइस न देखेउ कोइ । ६ मिर०
चेरी चाहू वहि केउ न कहाई । १५४ मिर०
दारिद दत काहु नहि चाखो । ३५ मिर० (मिर)
अतरगति नाही कोउ दूसर । ११९५ ह० च०
ग्रिह गोपी केहु जानि पावा । ४१८ ह० च०
अन धन कह चो है सभ कोई । ८ रा० ज०

अप्राणिवाचक रूप—

कछु—

कछु, अनिश्चयवाचक सर्वनाम का अप्राणिवाचक रूप है । यह अविकारी और कमवत् (अविकारी रूप) प्रयुक्त होता है—

जो कछु अहै हमार सोंफिन जान तुम्हार । १ च०
सपनें वहुतक मैं कछु देखा । ६ च०
मोग भुगुत माहि कछु नहि भावइ । १६ मै० स०
आन भँवर तोह मखउ लेन (लेत) जगन कछु जाव । ७ मै० स०

राम कथा किछु भाखो कहत न लागे खोर। १ रा० अ०
जोग जतन तप किछु नहिं होई। १५ स० क०
सो कछु कहहु गोसाईं सुनत ग्यान जेहि जाग। ८ स० क०
औ सब कथा न आहहिं भली
किछु रे भली किछु जैसी जेसें जाली। ११ मिर०
रावइ बहुत आसु पर आसु किछौ न समुझ सरीर। २१ मिर०
गुरु प्रसाद कछु कहौं बिचारो। ३।१ ह० च०

टिप्पणी—

ह० च० में अनिश्चय वाचक सर्वनाम के लिये 'कवनिउ' का भी प्रयोग हुआ है।

कवनिउ राई लोन उतारहि। ३।६ ह० च०
(कोई (गोपी) राई लोन उतारती है)

विकृत रूप

सुखी न जान दुख काहू केरा। ४६ लो० क०
काहू क ग्रिह पैठहि धाई। ३।६ ह० च०
काहू कह न रहो सुधि गात। ३८ मिर०

३—सब, सभ

अविकारी रूप सब

विकृत रूप सब, सबहि, सभै

अविकारी रूप—

अपवा सुक सुरुज परगासा जानइ सभ ससार। २६ गो० क०
विदवास पडित सभ आहिं। ३४ लो० क०
अन धन कह चो है सभ कोई। ८ रा० अ०
जाहि सुने सब पातक जाहिं। ८ स० क०
औ सब कथा न आहहिं भली। मिर० ११
पछिले पाप धोइ सब गए। ५ मिर०
यह सब धाय जन लालच सग बसत भगवान। १।१५ ह० च०

विकृत रूप—

सबहो सिधि आइ पडित पाई। १० लो० क०
सभे लोग कहँ देतिस पाना। ४७ च०
सब कह राजा वैसेक दोन्हा। १५ स्वर्गा०

कर उठाइ सभन्हो देहु पाना । ५७ स० क०
सब सेउ बडा जो पीर हमारा । ५ मिर०
सब कह परोहन बोतिन्ह आनी । १७ मिर०
सब मह व्याप रहे तुम सामी । १।१ ह० च०

विशेषण—

सगरी (स्त्रीलिंग)
सगरिइ रैन खोज मह कीन्हा । ६६ ला० क०

टिप्पणी—

सब के अतिरिक्त 'सरब' का भी प्रयोग मिलता है—
सरब लोक वोदर बस जाके । १।१ ह० च०

संयुक्त सर्वनाम—

१०५ प्रारम्भिक अवधी में संयुक्त सर्वनाम जो, सो सब, कोउ, कोई, कुछ के संयोग से बने मिलते हैं।

जो कुछ । १ च०	सब कोई । ५६ च०
सभ कोई । २१६ च० (प)	जो कोई । २२६ च० (प)
सब कोउ । ४४३ च० (प)	सभ कोई । १४ मै० स०
सभ केहु । ८ मै० स०	सो कछु । ३।८ स० क०
जो कछु । १६ स० क०	सभ केउ । ५८ स० क०
जो किछु । १२ मिर०	जो कोई । ६६ मिर० (शि)
सभ कोई । ८ रा० ज०	सब काहु । २।२ ह० च०
सो कछु । ३।८ ह० च०	

टिप्पणी

सब का संयोग सो, ते, तुम्हँ, ई के साथ मिलता है—
सो सब । १६ स० क०
ते सब । ३६ मिर० (शि)
तुम्ह सब । १६ मिर०
ई सभ । ५४ स० क०

१०६ सर्वनाममूलक विशेषण

प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में सर्वनाममूलक विशेषणों के विविध रूप इस प्रकार हैं—

(१) रीति वाचक—

अस तिरिया । १६ सो० क०

अइसी तिरिया । २८ सो० क०

यहि (इ) सर धाँच । ५७ प०

वैस (कस) मेयुहारा । ७८ प० (प)

तसि सावरि । ६ सो० क०

अस दुग । १ मै० स०

कस पाप । १६ मै० स०

तैस फल । २६ मै स०

अस ठाकुर । ४ । २ ह० प०

जस चोट्ट की गति वैसी मारी । १ । १५ ह० प०

सोहि अस सुदरि । ३६ स० क०

जस निमल मोती । १ । स० क०

तस विवेक । ४ स० क०

अइस न देखेउँ कोइ । ६ मिर०

पडित अस का । १६ मिर०

ऐसेहि लागि । १५८ मिर० (नि)

तस वान । १६५ मिर० (शि)

कस नेह । १८७ मिर० (शि)

परिमाण वाचक

एत रूप । १२ सो० क० अत वड । ४५ सो० क०

एतनइ वोल । १८ मै० स०

जत भाआ । ४ । १४ ह० प०

कतै दुख । ३ स० क०

जत (सम्पत्ति) आहे ससार । १३ स० क०

एतना नोके । ३३ स० क०

एत बोल । १७८ मिर० (शि)

तस पछताव । २३० मिर० (शि)

बुधि जेती । २३३ मिर० (शि)

ऐस (अइस) रूप । २७४ मिर० (शि)

अस सरूप । २७४ मिर० (नि)

जस दिन । ३०३

सख्या वाचक

केते यहि मारउँ । ४३ लो० क०
केतिन्ह दिवस । ८ । १ हृ० च०
जत बालक । ६ । ४ हृ० च०
मुनि जेते । ४ । २५ हृ० च०
जेत अछर । १ स्वर्गा०

परसर्ग

१०७ प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में प्राप्त परसर्ग नीचे दिये जा रहे हैं—

सम्बन्ध वाचक

के । १३, कह । २, कै । ६, केर । ८०, कर । १५, क । ३, का । २३ लो० क०
केर, कई । २, की । २, कर । ६, के ।१३, क । २२ मै० स०
की । १, के । २, के । ३, को । १४ रा० ज०
कर । ११, के । ६, कह । १, क । ४, केर । ४३, कह (ह) । ३ स० क०
क । १, केरी । २, के । ४, की । ४, कै । १०, कर । ११ मिर०
के । १ । १, को । १ । १, की । २ । १, कै । ५ । १, क । १ । ७, कर । ३ । ७ हृ० च०

कर्म, सम्प्रदान

कह । ६ लो० क०, कहुँ । ४ च, किह । ८४ च० (प)
कह । ५ मै० स०
कह । ४, के । ७ रा० ज०
कह । १८, कह । ५५, स० क०, कै । १३ स्वर्गा०
कह । ४, कहु । ४३०, को । १३ मिर०
को । ३ । १, कह । ७ । १, केह । ७१, क । २ । १,
के । ८ । १ हृ० च०

करण

सेंती । १२, सेतें । ६, सिउँ । २२, सन । २३, लो० क०
सों । ४६ च० (प)
सों । २, सउँ । १७ मै० स०

सों । १० रा० ज०

सें । २८, सै । २८ सो । १२, सों । ५३, सै । ५५, तै । २१ प० क०

सों । २, सेउं । २, सें । ४३३, गे । ४६ मिर० (गि)

सा । १ । १, सों । १ । १, त । ३ । ६ ह० च०

अपादान

हुतें । १७, हुत । १, हुति । १८, तै । ३, तें । ५७ लो० क०

से । रा० ज०

ते । १२ स्वर्गा०

सै । ४२६ सेउ । ४१२, हुनै । ४३६ मिर०

तें । २ । १, हुतें । ४ । ४ ह० च०

अधिकरण

पर । ५, मह । १२, माझ । १३, माहृ । ३८ लो० क०

मैं । ३, मह । १६, मो । १६, मै० स०

माह । २, मह । ३, पर । ६, मा । ११ मो । १६ रा० ज०

माह । ११, माह । २३ स० क०

मह । ५, माझ । २१, महि । ४२६ मिर०

ऊपर । ६ । १, मो । ५ । १, माहो । २ । ८, उपरहि । २ । ८

मह । १ । ७, महभारि (भारि) । १ । १२ ह० च०

परसर्गों की भाँति प्रयुक्त होने वाले कुछ अन्य शब्द—

१०८ उपयुक्त परसर्गों के अतिरिक्त कुछ अन्य शब्द ऐसे हैं जिनका प्रयोग प्रारम्भिक अवधी में परसर्गों की भाँति हुआ है। नीचे उन्हें दिया जा रहा है—

(१) पइ, पह ('से' 'द्वारा' के अर्थ में)—

तू पइ बोल जाइ जस पावसि । २४ लो० क०

तू पइ—तोपै तुझसे

अब मो पह मैना कत जाइ। ४ मै० स०

मोपह—मुझसे

मोपह जाय करहु अस बातें । ६ । ९ ह० च०

(२) पहँ (पास, निकट के अर्थ में)—

बिहँसत चाँद लोर पहँ गई । ८ लो० क०

चली भीम नारायन पाहीं । १८ स्वर्गा०

समुझि सभारि राइ पहँ आए । ४३७ मिर०

(३) लागि, लगि ('के लिये' के अर्थ में)—

लोर लागि मालिन घर गई । ७ लो० क०

जेहि लगि इहवाँ आइहि । ६ लो० क०

माँटी लागि जिव आप बिछ्ठारउँ । १५ मै० स०

तेहि लगि आपुहि परगटा । ३ मिर०

काहे लागि हतसि सुकुमारी । ७ । १ ह० च०

(४) लहि, लगि (तक, पर्यन्त के अर्थ में)—

तउ लहि लोरिक कोस दुइ गएऊ । २१ लो० क०

जहि लगि सयै पिरियमी सिरी । ६ च० (प)

जउ लहि लोर न हम घर आवइ । १६ मै० स०

तब लगि अन नखाइ । १६ । स० क०

जब लगि हौं न कुरंगिनि पावौं । २१ मिर०

(५) नित ('के लिये' के अर्थ में)—

तिन्ह (तिन्हँ) नित को आवन्ह कहुकावा । ११ मै० स०

तिह नित कौन मिटारइ आपू । ११ मै० स०

तिह नित का तैं झुरवसि । १२ मै० स०

(६) लगाँ (पास, निकट के अर्थ में)—

पुरुख लगाँ तिरिया दिखरावा । २० लो० क०

(७) सग ('के साथ' के अर्थ में)—

रुन औ परब लोर सग मानी । १५ मै० स०

व्रजकुल सत सग रहू । ३ । १ ह० च०

(८) पास—

पुरुख एक आइह वोहि पासा । २८ लो० क०

दूत लखन तह पास । ४ म० स०

धावन पठइय राजा पासू । १६ मिर० (छि)

(९) समेत

सुरुज समेत बिरस्पनि पावा । ८ लो० क०

(१०) तर ('तले, नीचे' के अर्थ में)—

जेहि तर बसे परा मुहि दूखा । ४३ लो० क०

चपर सकट तर लय वढाए । १ । ८ ह० च०

(११) बिच—

नैन स्रवन बिच तिल एक परा । ३ ज०

(१२) ओर—

पर ओर घाने। २० पं०

(१३) सम ('समान' के अथ में)—

तेहि सम प्रियमो और न केऊ। ५। १ ह० प०

(१४) हेतु—

व्यासदेव सुत हेतु विचारा। ७। १ ह० प०

(१५) कारन ('के लिये' के अथ में)—

गावहि रिखे सत सुख कारन। १। ८ ह० प०

(१६) उपर, उपरि—

ताहि उपर घ्रति सुवासित डारी। १७ रा० ज०

कोरे करिहि हम ऊपर छाँहा। २४२ मिर० (शि)

(१७) सहित—

गिरिहिं सहित चले त्रिपुरारी। ४८ स० क०

(१८) सरि (बराबर)—

एहि सरि अउर न पूजे कोई। १५ मिर०

एहि सरि—इनके बराबर

(१९) पटतर (समान, बराबर के अथ में)—

महासती तो सीता तेहि पटतर सत तोर। ५० स० क०

टिप्पणी

१—के और 'कइ' का अन्तर केवल लिपिगत प्रतीत होता है। उच्चारण में दोनों 'कइ' रहे होंगे।

२—डॉ० सक्सेना का मत है कि सम्बन्ध कारक का परसग 'को' वस्तुत 'कउ' रहा होगा। (दे० ए० अ० दे० टिप्पणी २७१) इसी प्रकार अधिकरण कारण का परसग 'मो' मउ रहा होगा (दे० ए० अ० टिप्पणी २९१)।

□□

क्रिया

क्रिया

१०९ धातु

प्रारम्भिक अवधी को धातुयें अर्थ की दृष्टि से या तो भाव वाच्य है या कर्म वाच्य। कर्मवाच्य धातुयें अकर्मक या सकर्मक होती है, जबकि भाववाच्य धातुयें केवल अकर्मक होती हैं। धातुओं के साधारण और प्रेरणार्थक प्रकार होते हैं जैसे 'चलहिं। १३ लो० क० और 'चलाउब'। ८० लो० क०। नामधातुयें अकर्मक होती हैं जैसे खोया गियइ बैठि लहराई। २ लो० क०।

११० सहायक या अस्तिवाची क्रियायें

प्रारम्भिक अवधी में क्रियाओं के साथ सहायक क्रिया का संयोग अपेक्षाकृत कम मिलता है। सहायक क्रिया का संयोग केवल अपूर्ण कृदन्ती निश्चयार्थक वर्तमान, अपूर्ण कृदन्ती निश्चयार्थक भूत, पूर्ण कृदन्ती निश्चयार्थक वर्तमान तथा पूर्ण कृदन्ती निश्चयार्थक भूत रूपों में ही हुआ है। अन्य स्थानों पर ये अस्तिवाची रूप में ही दिखाई पड़ते है। प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में प्राप्त सहायक या अस्तिवाची क्रियाओं के रूप नीचे दिये जा रहे है—

१११ वर्तमान

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	अहौं। ५ च०	हहिं। ६६ लो०क०
	आछौं। २४६ च० (प)	अहहों (हिं)। १ मै०स०
	हउ। ६ मै० स०	
	हौं। १६ रा० ज०।	
मध्यम पुरुष	*होसि। ६१ च०*	*होहु। ३१ मिर० (खि)*
	आहिसि। ५ रा० ज०	आछहु। ३६ स० क०
	आहि। ५ रा० ज०	बाटहु। ४६ स० क०

अन्य पुरुष	आछे। २६१ प० (प)	आहिं। ६१ प०
	हुइ। २ लो० क०	आछहिं। १८५ पं० (प)
	आहि। १५ लो० क०	हैं। १० मै० स०
	अहइ। १६ मै० स०	बाटैं (टइ?) ७ मै० स०
	अहा (इ) १८ लो० क०	आहहिं। ११ मिर०
	आहहि। ६६ लो० क०	अहहो (हिं)। ६ मिर०
	बाट। ३८ स० क०	हहिं। २ मिर०
	या। २६ प० (व)	

टिप्पणी—रा० ज० । ८, स० क० । २८, मिर० । ७० शि० में होसई का प्रयोग वर्तमान निश्चयार्थ और अनुज्ञाप में मिलता है।

११२ भूतकाल

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	भइउ। ६ लो० क०	होत (ते?) ६।१ हु० प०
	भएउ। १३ स० क०	
मध्यम पुरुष	भइस। १४ मै० स०	
अन्य पुरुष	हुत। १ लो० क०	भए। ५ लो० क०
	होत। ५५ लो० क०	भए। १४ रा० क०
	भवा। ६५ लो० क०	होत। १६ रा० ज०
	भएउ। ६० लो० क०	अहे। १२७ मिर० (शि)
	भवा। ६५ लो० क०	
	अहा। १४ लो० क०	
	भौ। २२ मै० स०	
	भइ। १३ रा० ज०	
	भा। १४ मिर०	

११३ भविष्य

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	होइहउँ। ५२ लो० क०	
मध्यम पुरुष	होइहइ। ५ लो० क०	
अन्य पुरुष	होइहि। ५ लो० क०	
	होत। ८० प०	

११४ अनुज्ञार्थ

	एक वचन	बहु वचन
मध्यम पुरुष	होहि। १४३ मिर० (थि)	होहु।२ स०क०
अन्य पुरुष	होइ। ६ लो० क०	
	हो। १३ लो० क०	
	होहि। ६ रा० ज०	

११५ भूत सम्भावनार्थ

उत्तम पुरुष एक वचन
चोर होतेउ तोर अभरन लेतेउ। २१० च० (प)

मध्यम पुरुष बहुवचन
बारक होतेउ। १६७ च० (प)

अन्य पुरुष एकवचन
लोग पच बइ होति न कानी।
सरसो आजु उतरतेउ पानी। २८ मै० स०

११६ पूर्व कालिक

होइ। २०३ च० (प)
भै। (मैं बावन भै छर बलि तहिआ)। ३।२५ हु० च०

टिप्पणी—(क्रिया सयोग)—

प्रारम्भिक अवधी में कुछ ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहाँ क्रिया सयोग के लिये अस्तिवाची क्रिया रूप 'हो' का प्रयोग न करके 'भा' रूप का प्रयोग हुआ है। परवर्ती अवधी में ऐस सयोग नहीं दिखलाई पड़ते—

देस देस भुरि (मोरि) भइ गइ लाजा। ४३ लो० क०
चलत चलत जो भै गै साभा। ३३ च०
रहुवा भै के करहिं पुकारा। २३ स० क०

काल रचना

११७ प्रारम्भिक अवधी में तीन प्रकार दिखलाई पड़ते हैं—(१) निश्चयार्थ (२) *अनुज्ञार्थ और (३) सम्भावनार्थ। निश्चयार्थ के रूप तीनों कालों में होते* हैं। अनुज्ञार्थ के दो रूप—वर्तमान और भविष्य के मिलते हैं। सम्भावनार्थ का एक ही रूप भूत सम्भावनार्थ मिलता है।

इनके अतिरिक्त कुछ रूप कृदन्तों और सहायक क्रियाओं को मिलाकर बनते

हैं। प्रारम्भिक अवधी में इस प्रकार के रूप निम्नलिखित हैं—

(१) अपूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयार्थ

अपूर्ण कृदन्त + वर्तमान निश्चयार्थ सहायक क्रिया

(२) अपूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयार्थ

अपूर्ण कृदन्त + भूत निश्चयार्थ सहायक क्रिया

(३) पूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयार्थ

पूर्ण कृदन्त + वर्तमान निश्चयार्थ सहायक क्रिया

(४) पूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयार्थ

पूर्ण कृदन्त + भूत निश्चयार्थ सहायक क्रिया

इस प्रकार प्रारम्भिक अवधी की क्रियाओं के काल भेद निम्नलिखित हैं—

१—वर्तमान निश्चयार्थ

२—भूत निश्चयार्थ

३—भविष्य निश्चयार्थ

४—अनुज्ञार्थ

५—भविष्य अनुज्ञार्थ

६—भूत सम्भावनार्थ

७—अपूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयार्थ

८—अपूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयार्थ

९—पूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयार्थ

१०—पूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयार्थ

कृदन्त

११८ अपूर्ण कृदन्त

अपूर्ण कृदन्त तकारान्त होते हैं। स्त्रीलिंग रूपों में वे तिकारान्त हो जाते हैं। अपूर्ण कृदन्त रूप दोनों वचन और तीनों पुरुषों में समान व्यवहृत होते हैं। उनमें परिवर्तन नहीं होता।

उत्त। १ लो० क०

जनियत (कर्मवाच्य)। ४० लो० क०

विलसत। १० मै० स०

कहत। १ रा० ज०

सुमिरत। १ स० क०

देति। २९ स० क०

लखउ। १ मिर०
फिरति। ४३८ मिर०
करावति। २१८ ह० च०

कही कही अपूर्ण कृदन्त वर्तमान निश्चयार्थ का काम करते हैं—

अउ तू कहत चाद मुरि (मेरि) जोई। ६४ लो० क०
दिन दिन चौगुन होत बधाई। १५ रा० ज०
जाहि देस अस बरते अतजत सदा बुधिवान। ४ स० क०

भूत सम्भावनार्थक रूप अपूर्ण कृदन्तो से बनते हैं—

जिउ देतेउ। ५३ लो० क०

११६ पूर्ण कृदन्त

प्रारम्भिक अवधी में पूर्ण कृदन्त के निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं। इनमें से १, २, ३ और १५ का प्रयोग कभी कभी विशेषण और साधारणत भूतकालिक क्रियापदों के रूप में होता है। शेष का केवल क्रियापदों के रूप में।

१—आ, २—ई, ४—ए, ३—इ, ५—एउ, इउ, ६—एन, ७—एसि, इस, इसि, ८—एहु, इहु, ९—इन, इनि, एंहि, १० एउ, ११—अउ, १२—ईत, ईता, १३—ईतेसि, ईतिसि, १४—एन्हि, ईतिन्ह, १५—अल।

विशेषण रूप में—आ—रूप का प्रयोग पुल्लिग एकवचन संज्ञा के साथ, ई रूप का स्त्रीलिंग एक वचन संज्ञा के साथ, ए रूप का पुल्लिग बहुवचन संज्ञा के साथ होता है—

पूछा केवल परम (पेम) भुलाना। २० लो० क०
माह मोर हो बारि बियाही। ४ लो० क०
बसिठ वचन बिसमरे सुनावा। लो० क०

अल वस्तुत पूर्वी भाषाओं का प्रत्यय है। विशेषण रूप में इसका प्रयोग रा० ज० में मिला है—

मत्र ■ मारल विसिधर जेवै। २२ रा० ज०

आ, ई और ए प्रत्ययान्त रूपो का प्रयोग सभी पुरुषो के साथ हो सकता है। आ प्रत्ययान्त रूप दोनो वचनो में प्रयुक्त होता है। साधारणत अकर्मक धातु होने पर ये (आ, ई, ए रूप) कर्ता के लिंग वचन का अनुसरण करते हैं और सकर्मक धातु होने पर कर्म के लिंग वचन का—

(१) बसिठ वचन बिसमरे सुनावा। १ लो० क०
आज रात निसहे लै गावा। ७२ च० (प)

चाँद लागि मइ बहु दुख देखा। ४७ लो० क०
बहुरूपिये बहु भेस भरावा। २६ च० (प)
कहेसि लोर तुम्ह भला न किया। १५ लो० क०
चाँद जइस अपनहि तुम पावा। १८५ च० (प)
हम जाना यह सखी तुम्हारी। २७४ च० (प)

(२) सोह करा सपूरन भई, लोरि लागि मालिन घर गई।
७ लो० क०

यहि मारग तें देखी कोई। २० लो० क०
अस चाल्ह तुम्ह लाज गवाई। १७ लो० क०
एक ईछी मैं पीता। १५० च० (प)

(३) महुँ नरवत लखि पाए गरह जो फबै निसक। ७ लो० क०
तुम्ह भनि नरवई भए आपा (या) ने। ३१ लो० क०
हम जीते मन मह जनि हारहि। ३५ लो० क०

(१) दूती दूत बवन जिव कहा। ७ मै० स०
जासउ भई आपन जिइ हारा। १७ मै० स०

(२) तेहि रतना मालिन हकराई। २ मै० स०
लीत दरब मालिन पुनि गई मैना के बार। २ मै० स०

(३) मूए किरनपन बापुरे। १ मै० स०

(१) बालमीक रामायन भाखा। २ रा० ज०
तइ पापी मोहि मारि गिरावा। ५ रा० ज०
मै मारा तोर श्रवन पूता। ६ रा० ज०
भीखा बहुत हम पावा। ५ रा० ज०

(२) पाछे लागी खाई। १२ रा० ज०
तब नृप दसरथ मनहिं बिचारी। ४ रा० ज०
(इसमें 'बिचारो' क्रिया का कर्म 'बात' निहित प्रतीत होता है)

(३) तहवा राजा गए भुलाई। ३ रा० ज०
कवन बोल तुम बोलन लागे। २१ रा० ज०
तीनि भुअन फिरि आए कतहु न पूजी आस। १० रा० ज०
(कर्ता हम)

(१) पुत्र लागि राजा श्रम छाँडा। १० स० क०
अब राजा तै तपसा जीता। १२ स० क०

पुत्र लागि मैं तजा तेज भडारा। १५ स० क०
तेहि पाछे तिन्ह मगल गावा। १७ स० क०
बहुत दुख तुम देखा। ५४ स० क०
करि तीरथ केसव मन लावा, अब स्वामी तुह दरसन पावा।
७ स० क०।

(कर्ता हम)

(२) अस कथा जग जनी। १६ स० क०
तुम मोरी होइया पुरई आसा। ५५ स० क०
जेहि सुमिरत मै मति गति पाई। १ स० क०
(३) असुह पलानि चले त्रिपुरारी। ११ स० क०
कहा चले तुम पाडो कहहु आपन सतिभाउ। ७ स० क०
तो कह परसन भए नर नाहा। १२ स० क०

(कर्ता हम)

(१) आगे चला दिगवर आवा। ५६ मिर० (शि)
केहि कारन तोह तोह जोग सँवारा। ६६ मिर० (शि)
मै तो उहि लगि बहु दुख देखा। ६४ मिर० (शि)
गति गुन देखा पडितन्ह। १ मिर०
राजा एक सवन हम सुन। १२ मिर०
(२) कुवर देखि वह गई वैसभारा। १०० मिर० (गि)
तो हम एक कथा यह कही। ११ मिर०
(३) जे रे मुहम्मद अढए सिखे। ४ मिर०
इन्ह के राज यह रे हम कहै। १० मिर०
(१) उपजा क्रोध स्राप रिखि दीन्हा। ८। १ ह० च०
अरे अधम ते उह का कीन्हा। ३। ७ ह० च०
जाके कछु प्रभु मे आएसु पावा। २। २ ह० च०
भगति देखि विप्रन्ह सुप माना। ३। २२ ह० च०
आजु कलेवा हम नहि खावा। २। २२ ह० च० २
(२) उहे कथा हरि नारद पाई। ४। १ ह० च०
तुह तो कस करो लरिकाई। ८। १ ह० च०
(३) चरन गहे लालच हनुमाई। १ १ ह० च०
हमहो तोहरे पास सिधाए। २। २२ ह० च०

टिप्पणी

छन्दानुरोध के कारण कहा कहो स्वर दीर्घ या ह्रस्व रूप हो जाते हैं। अवधी में अन्त्य 'व' का उच्चारण प्रायः 'उ' की तरह होता है। जैसे 'समदि राउ बइसाउ। ७ स० क० में 'बइसाउ' छन्दानुरोध के कारण 'बइसावा' हो सकता था। उद्धृत पंक्ति में 'बइसाउ' भूतकालिक कृदन्त रूप है आज्ञार्थक नहीं।

—ईन,—ईह,—ईनी,—ईहो, — ईने,— ईन्हे,—आना, — आनी,—औने प्रत्ययांत रूप (१), (२), (३) रूपों से अभिन्न हैं। एकारान्त पूर्ण कृदन्ती रूप का प्रयोग मध्यम पुरुष ए० व० पुल्लिङ्ग कर्ता के साथ भी होता है जैसे बिनु अपराधु हते घर नारी। १४ स० क०

(४)—ई—

ई प्रत्ययान्त पूर्ण कृदन्त रूप अन्य पुरुष बहुवचन स्त्रीलिंग कर्ता रूप के साथ मिले हैं। इसके उदाहरण विरल हैं। अनुमानतः इस रूप का प्रयोग उत्तम पुरुष कर्ता के साथ भी होता रहा होगा—

सखी सहेलिन देखन धाइ, हुस हँस चाँद बदिरि कै लाइ
। ५२ च० (प)

घेरी सब धाइ, पथरि बार पूँछे कहँ आई। ४३६ मिर०

(५)—एउ, – एहुँ,—इउ—

एउ (कहीं कहीं—एहुँ) प्रत्ययान्त उत्तम पुरुष एक वचन पुल्लिङ्ग के साथ और—इउ प्रत्ययान्त रूप स्त्रीलिंग के साथ प्रयुक्त होते हैं।—एउ रूप कहीं कहीं स्त्रीलिंग कर्ता के साथ भी प्रयुक्त मिलता है—

राउ रूप धद बीडा मारेउ। १३ ओ० क०
हउ अस बोलिउ चतुर सयानी। ३ ला० क०
भोग भुगत सभ धरउ उनारी। ६ मै० स०
आएहु राजा भेंटन तोही। १६ रा० ज०
पुत्र लागि मै भयेउ (उं) बिवोगी। १३ स० क०
तेहि पथ में लाइउ ब्याधी। ४६ स० क०
अइस न देखेउँ कोई। ६ मिर०
एहि रे मान हौं गइउ बिलाई। १५५ मिर० (शि)
मैं कत छोड़उ परम अयागी। २। ८ हु० च०

(६)—एन—

प्रत्ययांत पूर्ण कृदन्त, अन्य पुरुष बहुवचन कर्ता के ही साथ प्रयुक्त प्राप्त

हुआ है। इसका केवल एक ही उदाहरण मुझे मिला है—

तब पाछौ उठि बिनती लाएन। २० स्वर्गा०

(७) एसि, इसु, इसि—

ये रूप मध्यमपुरुष एक वचन तथा अन्यपुरुष एक वचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होते हैं। मध्यमपुरुष कर्ता के साथ—एसि साधारणतः पुल्लिंग के और इसि तथा इसु स्त्रीलिंग कर्ता के साथ प्रयुक्त होते हैं। अन्यपुरुष कर्ता के साथ इन रूपों के प्रयोग में ऐसा कोई अन्तर नहीं दिखलाई पड़ता है—

मध्यम पुरुष

वचन तोर मोहि ओषद कहेसि न ओउ हमार। १६ च०
ता अफरे (?) बोलिसि गाँठ हाई। २१ च०
अस ओखर तें बोलिसि धाई। ७ मै० स०
तें पह भइस माग मैं ताता। १४ मै० स०
अरे अरे अधम हतेसि सतापी। ६ रा० ज०
की तै भूलि परेसि बन आई। २६ स० क०
जो तें बात सुनिसि हमारी। ४५ मिर० (शि)

अन्य पुरुष

काका (?) तजि नहि बोलेसि बोलू। १२ लो० च०
बूझिसि टाउ कहवा हुत आवा।
धौत किहिस तुहु ऊपर तोरी मीत न कानि। १२ मै० स०
तहवाँ देखसि बन अंधियारा। २४ स० क०
पन रावत सग लिहेसि बुलाई। १७ मिर०
जो मागिसि सो पाइसि विधि सेउ। १८ मिर०
मन मह कहेसि दाव भलि भएउ। ३। ७ ह० च०
कुप बिख लाए पिआएसी पाए सीघ निसान। २। ६ ह०च०

(८) एहु, इहु—

एहु, एउ और इहु (स्त्रीलिंग) प्रत्ययान्त पूर्ण कृदन्ती रूप मध्यम पुरुष बहु वचन रूप में प्रयुक्त होते हैं—

भलें सोर आएहु इहवाँ राखेहु चित्त हमार। १ च०
आय्या वचन गोसाई आएहु कवने काम। १८ रा० ज०
सवा वहुत किएहु तुह मोरी। १५ स० क०
कहा खाइ के रहेहु मोटाई। १३५ मिर० (शि)

तोह अगमनि घर आइहु हौं डह परिउ भुलाई। —१५४ मिर० (शि)

भगती जुगती तुम्ह कीन्हेउ सेवा, मुकुती न भागेहु तुम्ह वसुदेवा। ३। ३ ह० च०

(६) इम, इनि, एन्हि, इह—

ये रूप अन्य पुरुष बहुवचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होते हैं। उपलब्ध रूपों में लिंगभेद का कोई आधार नहीं ढूंढ़ा जा सका है। यहाँ उद्धृत पंक्तियों में 'बैठाइन्ह' क्रिया का कर्ता बहुवचन स्त्रीलिंग है। किन्तु इह प्रत्ययान्त रूप स्त्रीलिंग कर्ता के साथ ही प्रयुक्त होता था यह नहीं कहा जा सकता।

कै वेहू कछु दे मगराइन्ह भुवगहि लाग। ३६ च०

नैन नीर देह मोहि धिरकेन्हि आए लोग जेंहि पास। ६६ च० (प)

आदर के सुमिनिहि पास बैठाइन्ह आइ। १२ रा० ज०

(कर्ता कौसल्या कैकेयी)

आदर के सब समदा लै बैसाएन्हि पाट। १७ स० क०

जदव विहिनि करन चौवासी। ४ स्वर्गा०

दै रे असीस जोतिसा बहुरे पाएन्हि बहुत पसाउ। १५ मिर०

(१०) एउ—

एक प्रत्ययान्त पूर्ण कृदन्ती रूप अन्य पुरुष एकवचन पुल्लिंग कर्ता के साथ प्रयुक्त होता है। इसे—एउ रूप (क्रमांक ८) से भिन्न समझना चाहिए। मध्यम पुरुष बहुवचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होने वाला—एउ प्रत्ययान्त रूप वस्तुतः एहु का ही 'हु' का अल्पप्राण बना हुआ रूप है।

जिउ कुंवर कर एएउ छटाई। १५ सो० क०

साधन भए तै सेह पुथमी कीन्हा न रहेउ। १ मै० स०

वन वन फिरत पथ न पाएउ। ३ रा० ज०

चन्द्र हस कर लीन्हेउ खांडा। १० स० क०

दुहर मास दिन दस मह जोरत यह औरानेउ जाइ। १० मिर०

अपरित राजे अजगुन कीएउ, विनक भुअंग कंठ मो दीएउ। ५। १ ह० च०

(११) अउ—

उ प्रत्ययान्त पूर्ण कृदन्ती रूप अन्य पुरुष ए० व० कर्ता के साथ प्रयुक्त

होता है। यह रूप केवल 'भउ' और 'गउ' क्रियापदों में दिखलाई पड़ता है जो छंदानुरोध से 'भवा' या 'गवा' रूप में बहुप्रयुक्त हुए हैं। 'भउ' का उदाहरण अस्तिवाचक या सहायक क्रिया के प्रकरण में दिया जा चुका है।

लोकौ ममकि उठि गो तवही। ४ रा० ज०
कोस साठि गौ अधिक भुलाना। २४ स० क०

(१२) ईत, ईता—

ये रूप अन्य पुरुष और उत्तम पुरुष ए० व० कर्ता के साथ प्रयुक्त मिले हैं। इनका प्रयोग केवल दाउद की रचना और मिरगावत में मिलता है। असम्भव नहीं कि ई या ईता प्रत्ययान्त कृदन्ती रूप का प्रयोग मध्यमपुरुष कर्ता ए० व० के साथ भी होता रहा हो।

उत्तम पुरुष एक वचन

कहिसि सुरुज धन छाँडिजो मैं भोता दोस। ५८ च०
भेंट भुगुटि मैं मोहि की कोती। २६५ मिर० (शि)

अन्य पुरुष एक वचन

मानु सम्मान न कीत बयारू। कैसें आहु सो चाँद दुलारू।
५१ च० (प)

(१३) एतिस, ईतिसि—

ये पूर्ण कृदन्ती रूप अन्य पुरुष एक वचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होते हैं। ये रूप दाउद की रचना और मिर० में ही मिलते हैं—

सीस नाय कै लोरिक लेतिस
धसि कव (कै) कान एक फुमि देतिस। २ च०
सत सै धम पथ पगु दीतिसि
सत सामी आगे कै लीतिसि। ७२ मिर० (शि)

(१४) ईतिन्ह—

यह रूप केवल कुतवन की रचना में मिला है। यह अन्य पुरुष बहुवचन कर्ता के साथ प्रयुक्त होता है—

सत पन लै चौडोल तुलोन राजहि ली तिन्ह वाहि। ४३४ मिर०
आपन आपन लीतिन्हि चोर। ४० मिर० (शि)

(१५) अल—

अल प्रत्ययान्त पूर्ण कृदन्ती रूप वस्तुतः मागधी (भोजपुरी, मथिली बंगला आदि) भाषाओं के हैं। इसका प्रयोग साधारणतः अन्य पुरुष एक वचन कर्ता के

साथ होता है। स० क० १५ में इसका प्रयोग मध्यम पुरुष आदरार्थक कर्ता के साथ हुआ है। यह विशेषण का भी काम करते हैं। अवधी में यत्र तत्र ऐसे रूप भोजपुरी प्रभाव के कारण दिखलाई पड़ते है। वे मिले भी ऐसी रचनाओं में हैं जिनकी रचना पूर्वी प्रदेशों में हुई थी—

महथे कह भल कहल गोसाईं। ३५ स० क०
(महथा (मन्त्री) ने कहा है गोसाईं आपने भला कहा)
मंतर मारल विषधर जैसे। २८ रा० ज०
बदन चाँद जनि उदिनल आहा। ६२ मिर० (शि)

१२० वर्तमान निश्चयार्थ

वर्तमान निश्चयार्थ के निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं—

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	अउँ, औं	अहिं
मध्यम पुरुष	असि, अहि,	अहु, अउ
अन्य पुरुष	अइ, अहि, अ	अहिं, अइ

उत्तम पुरुष एकवचन

एक हउँ काल जइस मह देखउँ

तजि जिउ सोक न मरहि लजाई । १७ लो० क०
अनचिन्ही कस बोलसि बैनाँ । ३ मैं० म०
मर्म न जानसि पापी कहसि कौन तैं लोग । १७ स० क०
अबहूँ ढीठ बातें तें कहही । अवग होय कै चुप नहिं रहही ।
११० मिर० (दि)
काहे लागि हतसि सुकुमारी । ७ । १ ह० च०

मध्यम पुरुष बहु वचन

खिस कहहु तुम्ह काहे जूझहु
करहु गियान अब मन महँ बूझहु । ६५ लो० क०
जाउँ भरनि बस फिरहु भुलाने । ३ मिर०
कोटि अठ उपराजहू छिन मोकरउ सवार । १ । १ ह० च०
मिया हतउ तुम्ह कौने काना । ७ । १ ह० च०

अन्य पुरुष एक वचन

पाछें देखइ चाँदा आई । १५ लो० क०
कहहि लोर सुनहु तुम चाँदा अइसन भुहि न कराउ । १३ लो० क०
बीजु लवै घन गरजै निसर न कोऊ बार । १४ लो० क०
हँसि के पूछइ मैनाँ रानी । ३ मैं० स०
रावहि पुरुख सेज चढि नारी । २४ मै० स०
कह दूतिनि सुन मालति मैना । ३ मै० स०
राम के जनम पढ जो सुनई
सहस होम सो दिन दिन करई । २ रा० ज०
राजा बैठि तब अँखहि साथ लिए धनु बान । ३ रा० ज०
राम रंग रस लावहु सुरजदास कवि भान । १८ रा० ज०
कहै दूत सुनु कन्या राजा अब नहिं खाई । ३६ स० क०
सहवा सप सो करहि मुआरा । १० स० क०
तुह देख भए हरख हमारा । ८ स० क०
दान देइ बहुत गिनति न आवा । ६ मिर०
रावल चलहि रूहइ पै कया । ४३२ मिर०
सिथिनि एकै पूत जन बम भौउन रन ढीठ । ४०६ मिर०
गँठे सवारै मज सोई । १ । १ ह० च०
चरन सरन जन लालच गावहि गुन विस्तार । ४ । १ ह० च०

बहुरि रिखे राजा सो कहई
दानव एक चरित कस करई। ४।८ हु० च०
हृदय हरख जग लालच, सुमिरहु सारंगपानि। १।८ हु० च०

अन्य पुरुष बहु वचन

तेहि पर कामिनि सेज बिछावहिं
कत अमोल भेंटि गिय लावहिं। ५ लो० क०
दादुर पपिहा कुहुकहिं मोरा। १३ मै० स०
एहि बिधि लोग करइ जेव मारा। १८ रा० ज०
मसा मखी तन खाहिं पतगा। ४३ स० क०
जै करतार बड़े करि सिरजे तै रे छपावहिं दोस। ११ मिर०
तुम्ह ते नारदादि गुन गावहिं
गन गधरप तुम्ह चरन मनावहिं। २११ हु० च०

टिप्पणी

१—अवधी में उच्चारण की दृष्टि से कहउ और कहौं (कहीं कहीं लिखित रूप कहों) तथा कहइ और कहै में अन्तर नहीं होगा। कहौं और कहै का उच्चारण क्रमशः कहउ और कहइ ही होगा। इनमें अन्तर केवल लिपि का है।

२—मिर० में अन्य पुरुष ब० व० कर्ता के लिये एकाध स्थलों पर—अन्ति प्रत्ययान्त प्रयोग मिलते हैं, जैसे रचति, दगधति। १७८ मिर० (खि)

१२१ भूत निश्चयार्थ

इससे निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं।

	एक वचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	एउ, एहुँ (पुल्लिंग)	
	इउ (स्त्रीलिंग)	
	ईंग	
मध्यम पुरुष	एसि,	एहु, एउ (पुल्लिंग)
	इसि (स्त्रीलिंग)	इहु (स्त्रीलिंग)
	इस (स्त्रीलिंग)	
		हुनि
अन्य पुरुष	एसि, इस	एहि, इन, एन
	इसि,	ईतिन्ह
	एतिस,	ई (केवल स्त्रीलिंग)

एउ, अउ,
ईउ, ईआ, ईतिसि

जैसा कि कहा गया है, पूर्ण कृदन्तों के विवेचन में आ, ई, ए, प्रत्ययान्त रूपों का प्रयोग सभी पुरुषों और दोनों वचनों में होता है। पूर्ण कृदन्तों का विवेचन करते समय इनके उदाहरण दे दिए गए हैं। द० ११६

१२२ भविष्य निश्चयार्थ

निश्चयार्थक भविष्य के जो रूप प्रारम्भिक अवधी में मिले हैं वे इस प्रकार हैं—

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	आउब, अब, आइब, ब इहउ	ब अब, बइ
मध्यम पुरुष	इहसि, आब	आउब, इहउ, हु अब
अन्य पुरुष	इहि इहइ, आउब अब	इहहिं, इहइ आब

उत्तम पुरुष एक वचन

सुरुज कहा मइ बाचा बुलाउब
सक बाज दे पुरुब चलाउब। १० लो० क०
तुम्हहि तजि जाइब परदेसू। १६ लो० क०
तोरें वचन चांद जउँ पइहउ। ५२ लो० क०
सोरस होइ लोसों उतर देब तब काहु। १० म० स०
घरमहि मालिन करिहेउ घाउ। २१ म० स०
से उपदेस करब मैं भारी। १८ स्वगा०
मन होइ या में पुरइब तोरी। १२ स० क०
बहे काहु मैं मुख देखराउब। ३८ मिर० (त्रि)
साथ गए तुम्हरे दुख पइहीं। २३ मिर० (त्रि)
सो मैं सौंपब तोहि मुआरा। ७१ ह० च०

उत्तम पुरुष बहु वचन

लोरिक कहा सुनहु दहुँ चाना रतन भरब अउ माँन्ह।
८ लो० क०

सो देवै जो तोरे मन माहा। १२ स्वर्गा०
काह उतर हम देब। १२७ मिर० (शि)

मध्यम पुरुष एक वचन

जो तू जेहसि मैकें आगे पठौ स देस। ४९ च० (प)
जीवन जात न जानव गए बार पछताव। ८ मै० स०
चलत चलत पथ पै हसि औ तें संत सौं जाय।
—१२४ मिर० (शि)

मध्यम पुरुष बहु वचन

जउ तुम्ह बरु यह बनिज चलाउब। ८० सो० क०
सहरस सबद हियर फाटउ अब जल देखिहउ जागि
जेहहु कोने बाट घराई। १४५ मिर० (शि)
जौ तुम्ह निकट करब रखवारी। ७। ६ ह० च०

अन्य पुरुष एकवचन

चाँद कहा अब लोरिक जाइहि
मन उतरें फिरि फिरि नहि आइहि। २ सो० क०
बिरथ होइ यह जीवन मोरा। ४० च०
पोसमास का करिहइ मोरा। १६ मैं० स०
त्रिभुअन सुंदर बेटवा सो जग जनमिहि आई। १० रा० ज०
दिन दस लागिहि जात। १० स्वर्गा०
का करिहइ करतार। ४३८ मिर०
सो कै पारि तोरि कै खाइह। ८६ मिर० (शि)
रवन एक माह कुवर जो आउब। ६५ मिर० (शि)
इहु कै यह जो हारिहि बारा। ७।१ ह० च०
एह बालक जदुबंस उधारव। २। ६ ह० च०

अन्य पुरुष बहु वचन

बारि बूड़ि दोउ मरिहहिं घरु न जियउ मनुहारि। १५ सो०क०
हठ ना रहि हइ हमरे आगे। २१ रा० ज०
बाप सिघ ताहि खाइहहिं। ८१ स० क०
सउ सौं सउ सघाती होइहि बाप सिघ नहि खाव।
१२४ मिर० (शि)

जे जरत उबारव। ४। ११ हु० च०

१२३ अनुज्ञार्थ

अनुज्ञायक क्रिया के निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं—

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	अउ, अहुँ	अहिं
मध्यम पुरुष	उ, असि, असु अहि, (केवल धातु)	अहु अह आहु
अन्य पुरुष	अइ, अहि अउ, अ	अहिं

उत्तम पुरुष एकवचन

दइय ठाव जो मागा पावउँ। ३ लो० क०।
दूत बचन जेउँ मैना पावहुँ। २ मै० स०
आनि देहुँ तोहि तोहिं प्रेम पियारा। २४ मै० स०
कैसे खाउँ अतिथही बांचो। १२ रा० ज०
जस चाहो तस देउँ बिस्तारा। १५ स० क०
दरसन देहु न पापो किहेहु मद बहून। २० स्वर्गा०
कहेसि बान हनि का एहि मारउ उतरि धरउँ हठि जोर। १८ मिर०
राम क्रिस्न कै फोरौं आखी। ४। ८ हु० च०

उत्तम पुरुष बहु वचन

हम फुनि देखि नियाव निवारहिं पूछहिं तुम्हरे तात। ६८ लो० क०

मध्यम पुरुष एकवचन

तोगि बोगि चलु चांद गुवारी। ११ लो० क०
गुनी कहा अनि जीउ डुलावसि। ५५ लो० क०
बामन कहसु महरसों। ५० च० (प)
चलहि लोर पुनि हो मिनुसारा। १३ लो० क०
पायन ठेल बिरस्पति हौं तो चेर तुम्हार। १६ च०
कह दूतिनि सुन मालति मैनां। मै० स०
तोर दुख सुनत मरत हौं मैना बोल छाडदे मोहि। ६ मै० स०
एक मांस सुनु बोल हमारा। २४ मै० स०
कह मो कह जस परे विचारा। ५ रा० ज०

ब्यास रिसिय सुनु विनती मोरी । ६ स० क०
मर्म न जानसि पापी कहसि कौन ते लोग । २७ स० क०
वासुदेव सुन कहा हमारा । २० स० क०
तूं चढु रथ देगु अस कहा । ४२६ मिर०
भुगुति देव जहु मिछ्या ले रे इहाँ सो । जाहि । १२८ मिर० (घि)
सुनु राजा कुल वस उधारन । १।८ ह० च०
बुधि दे सारद माई । २।१ ह० च०
चलि जा मित्र कहा समुझाई । ४।८ ह० च०

मध्यम पुरुष बहुवचन—

मोर गनित तुम लोरिक जानहु
कहउ बोल सबहो तुम्ह मानहु । १० लो० क०
पया करहु तो रहाहु । ३० च०
अगहन छल बैरासहु मोरे हुत तुम्ह जाइ । १७ मै० स०
कहा चले तुम पाडो कहहु आपन सति भाउ । ७ स० क०
विनती मोरि करब मै राजा भव तुह खाउ । ३७ स० क०
जैमुनि लगन निरुतहु दुलह क करहु बिआहु । ५१ स० क०
हिदय हरख जन लालच सुमिरहु सारग पानि । ११८ ह० च०

अन्य पुरुष एक वचन—

होइहि देउ उठान पिय पूजइ मनसा आइ । ५ लो० क०
लारिक जउ तुहि पीरा परहो । ५६ लो० क०
सीस टूट ऊपर जो हेरा । २३ च०
अब मो पह मैना कत जाइ । ४ मै० स०
तेहि दिन करउ बधावना जब लोरिक घर आउ । २३ मै० स०
और न देखै पार । २५ मै० स०
पिअहु नीर रहै प्रान तोहारा । ६ रा० ज०
बैठि बैठि जो कहइ भवानी । ३ स० क०
कन्या एक जन्महि ग्रिहि तोरी । १५ स० क०
सो कछु कहहु गोसाइ सुनत ग्यान जेहि जाय । ८ स० क०
सहस नाम जो सुने कहन कथा फल पाउ । ५५ स० क०
तउ रे बड़ाई करइ जो कोई । ६ मिर०
आउ बन्उ हुसेन शाह के आहि जगत मैं टेक । ६ मिर०

एक न पूत नाउ जेहि रहा। २ मिर०

(छंदानुरोध से)

तछक जाए डसे नृप तोही। ५।१ ह० च०

अन्य पुरुष बहु वचन—

बोला सभा कहहि दुहुँ आई। ६६ लो० क०।

सुन पावहि तउ भार अढाई। ६ मै० स०

ते पाढो क्त लेहि निवासा। ६ स० क०

जे करतार बडे करि सिरजै तेरे छपावहि दोख। ११ मिर०

१२४ भविष्य अनुज्ञाथ—

आज्ञाथक भविष्य के उदाहरण विरल है। इसके केवल मध्यम पुरुष ब० व० में मिलते है। इसके निम्नलिखित रूप प्राप्त हुए हैं—

बहुवचन

एहु, एह

बहु वचन

आधि राति जब जानेहु तब उठि चालेहु वीर। १० ला० क०

का हु लगाम खरग चमकाएह। च०

बरजेहु पिते मरइ जनि रोई। ४० स० क०

हरख सहित दिन आगे जाएहु। १।२२ ह० च०

१२५ भूत सभावनाथ

भूत सम्भावनाथ मे उदाहरण केवल एक वचन में ही मिले है। वे इस प्रकार हैं—

उत्तम पुरुष एकवचन

जिउ देतेउ भरत न लसात बार। ५३ लो० क०

बर उतर तिन्ह भरतिउ बारी।३६ च०

सर सों आज उतरतें हुँ पानी। २८ मै० स०

करमहुँ भरम न कहतेंव तोही। ६७ मिर० (शि)

जूझि जात का करतिउ भाई। १।८ ह० च०

मध्यम पुरुष एकवचन

जो यह सपत न देतिसि मोहीं। ६७ मिर० (शि)

अन्य पुरुष एकवचन

मरत न सागन बार । ५३ सो० म०

१२६ अपूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयार्थ

अपूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयार्थ के निम्नलिखित उदाहरण प्राप्त हुए हैं—

उत्तम पुरुष एकवचन

विरह दगध हौं मरत सनेहा । ३ च०

कुरवे मान सजाती अहौं । ५३ च०

तोर दुख देख मरत हुउ मना । ६ मैं० स०

ताहि बधे के कारने माँगत हौं श्रीराम । १६ रा० ज०

कहु रिखिइन्द्र के राजा पूछत हौं सो तोहि । ६ स० क०

दारुन साप तोहि देति हौं । २६ स० क०

उत्तम पुरुष बहुवचन (अत्यन्त विरल)

आइ चहूँ मिलि कीन्ह जुहारू

जूझि मरत है करहु विचारू । ६६ लो० क०

(हम जूझे मरते हैं विचार (निर्णय) कीजिए)

मध्यम पुरुष एक वचन (अत्यन्त विरल)

से इ फल अब देति हसि मोही । ३६ मिर० (शि)

मध्यम पुरुष बहुवचन (अत्यन्त विरल)

जानत हहु जिप कस की रचना । २ । ५ हु० च०

अन्य पुरुष एकवचन

कनक बरन चमकत हइ देहा । २ लो० क०

वह देखु आवत आवत अहा । २२ लो० क०

निति उठि दान देत है राजा । १३ रा० ज०

कौन जात हेरे पापी ते मोर हरे ग्यान । ४६ स० क०

देख सोवत है वन निसका । ४२६ मिर०

लालच के प्रभु सामी जनमत है ससार । २ । २ हु० च०

अन्य पुरुष बहुवचन (अत्यन्त विरल)

कैति भवर बिलसत हैं केवल फूल दरभाइ । १० मै० स०

१२७ अपूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयार्थ

उत्तम पुरुष एक वचन (अत्यन्त विरल)

आवत बहिर्ते कुमर ओक देखा। १५५ मिर० (शि)

उत्तम पुरुष बहुवचन तथा मध्यम पुरुष का कोई रूप नही प्राप्त हो सका है। अन्य पुरुष के रूप अवश्य प्राप्त हुए है—

अन्य पुरुष एक वचन

पूनेउ जइस मुख मुख दीपत अहा। गयी सो जोति खीन होइ रहा। ४३१ प० (प)

जस निरास आवत हुत राजा अस न होए जग कोउ। १०७ मिर० (शि)

अन्य पुरुष बहु वचन

फिरति अहो मंदिर अपने मह का करिहै करतार। ४३८ मिर०

पलना सोवत होत मुरारी। १। ८ ह० प०

१२८ पूर्ण कृदन्ती वर्तमान निश्चयार्थ

इस रूप के उदाहरण विरल हैं।

अन्य पुरुष एक वचन

जहाँ बरजहि ठाड हुइ तहाँ। ५७ लो० क०

बदन चाँ जनि उदिनल आहा। १२ मिर० (नि)

सीरे ताहि जो देखिसि अहा। २६ मिर० (शि)

औंपर भवा बैठ वह अहा। ३१५ मिर० (शि)

मध्यम पुरुष बहु वचन

बचन पुर तुम्ह देनेहु आहा। ८० मिर० (शि)

अन्य पुरुष बहु वचन

वैस देवता आछहि तहि ठाऊँ। ४४ स० क०

१२९ पूर्ण कृदन्ती भूत निश्चयार्थ

इस रूप के केवल निम्नलिखित उदाहरण प्राप्त हुए हैं—

अन्य पुरुष एक वचन

भरि दुइ रात चाँद हुत डसो। ४२ लो० क०

जाके मुदि हुता अँधियारी। २६४ प० (प)

मरे चीर हम लोहुइ अहा। १८४ मिर० (नि)

उँ मांहि उदिआ रानेश अही। २०५ मिर० (शि)

राजकुँवर जहँ हुआ सुराता । ३६ मिर० (नि)

मध्यम पुरुष बहु वचन

जब रे उठाय बठारेउ अहा । १६५ मिर० (नि)

उत्तम पुरुष एक वचन

बोलेउ (उँ) सोइ जो देस (से ?) उँ आहा । ७३ धं० (द)

१३० पूर्वकालिक

प्राप्त पूर्वकालिक कृदन्त के उदाहरणों में से अधिकांश—इ स्वरांत हैं। कहीं कहीं ई के स्थान पर अ मिलता है। ओ और आ के परे कहीं कहीं ई के स्थान पर ए मिलता है।

लेइ, लइ । १८ लो० क०
देखि । ८० लो० क०
जाइ । २ मै० स०
देखि । ६ मै०
जाए । ४ रा० ज०
उठि उठि । ५ रा० ज०
बठि । ३ स० क०
कइ । ४ स० क०
आन । ४२ स० क० अम्रित फल नित आन खवावौं
देखि । २ मिर०
छाडि । ३ मिर०
जरि । ७ मिर०
रोए । १ । ८ हु० च०
आए । ४ । १ हु० च०
जानि, बिहसि । १ । ६ हु० च०

१३१ क्रियार्थक संज्ञा

प्रारम्भिक अवधी में क्रियार्थक संज्ञाओं के दो रूप प्राप्त हुए हैं। नकारान्त रूप और वकारान्त। वकारान्त रूप के उदाहरण अपेक्षाकृत विरल हैं।

अविकारी रूप—

देखि नगर सब परा भगानां । ३३ लो० क०
बीर नगर तउ चाहन लागा । ६३ लो० क०

कहब तुम्हार न पावइ मैना । १८ मै० स०
कपट रूप रोबन अनुसारी । ५ मे० स०
आएहु राजा भेंटन तोही । १६ रा० ज०
ओढन डासन बर केर पाता । ४३ स० क०
अबहुँ भूठ वोलिब ना छाडसि । ३१७ मिर० (शि)
मोरि चिन्हावन केहि रे विधि होई । २६७ मिर० (शि)
नगर देस महँ परेव भगाना । ३१० मिर० (शि)
तब वसुदेव कहन अस लागे । ८ । १ हु० च०

विकृत रूप—

क्रियाथक सणा के—बइ और अइ प्रत्ययान्त विकृत रूप प्राप्त हुए हैं।

हरइ जउ पावउँ । ४६ लो० क०
जेहि विधि राखै सत्त सौं कौन डोलावै पार । २ मै० स०
जीव देवै बर पारउँ राम क देवइ पार । २० रा० ज०
सुरज किरन जनु जीतइ चाहइ । १६ स० क०
सो महेस सम कहवै लोहा । १४ स० क०
वामन बैठि गनै सब लागे । १५ मिर०
मरिब कहु (तलाया) नरेसा । ४३३ मिर०
गरजि गगन घन बरसै लागे । १ । १६ हु० च०

१३२ कतृ वाचक सज्ञा

प्रारम्भिक अवधी में कर्तृवाचक सज्ञा के निम्नलिखित उदाहरण प्राप्त हुए हैं—

सिरजनहार देंहि निस्तारा । ४६ लो० क०
धनि तै वोल धनि लेखन हारा । ५६ लो० क०
दीप गए से आवन हारा । ६ म० स०
कयो कर पावउ तीर साधन खेवनहार विन । म० स०
प्रवित लिखा विधाते कै दहु मेटनहारा । ६ स० क०
जेहि मोरे तेहि सिरजनहारा । १० स्वर्गा०
अति सुरूप धनि सिरजनिहारा । १४ मिर०

१३३ प्रेरणायक

धातु में आ जोड़ कर प्रेरणार्थक क्रिया बनाए गए उदाहरण प्राप्त होते हैं।

सुनावा । १, जलावउ । १, विछावहि । ५ लो० क०

डोलाई । २,	पहराऊँ । २,	बुलाई । ४ मै० स०
जेवाँवा । २,	पहिरावा । १०,	बठाइहु । १२ रा० ज०
सहावा । ३,	खोदावा । १८,	प्रजावहु । १६ स० क०
सुनायहि । ३,	समुझावहिं । ६,	पठावह । १६ मिर०
बैठारेउ । २ । ८	जनावहु । १ । १,	पठाए । २ । ८ ह० च०

१३४ कर्मवाच्य

प्रारम्भिक अवधी में दो प्रकार के कर्मवाच्य मिलते हैं। संश्लिष्ट और विश्लिष्ट। संश्लिष्ट कर्मवाच्य के रूपों में अपूर्ण कृदन्तों से बने रूपों के अतिरिक्त अन्यों का प्रयोग अनुनाय में होता है—

संश्लिष्ट—

पाइय । १, मारिय । ३४, लीजइ । २९, कीज । ६
जनियत । ४० लो० क०
कीजइ । ५, बलसियइ । १३, मानिय, १५,
कीज । २९ । म० स०
बोलियइ, कहियइ । रा० ज०
जाइए (इ), दीजै । ३४ स० क०
गनिअै । ४३९ मिर०, पठइज । १९ मिर० (शि)
गनीज । ३३ मिर० (शि), कीज, लीजै । ३६ मिर० (शि)
देखिय । ५ धरिअ । १ । ६ ह० च०, कीजे । ५ । ५ ह० च०

विश्लिष्ट कर्म वाच्य—

गही न जाई । २ लो० क०
कहे न जाई । ११ च०
परा जाइ । १९ मै० स०
चलि जाई । २० रा० ज०
जानि न जाई । १६ स० क०
चलि न जाई । ३३ स० क०
बिसरि न जाइ । २१ मिर०
कहि जाई । ९ मिर०
जानि न जाई । ४ । ८ ह० च०
लखि न जाए । १ । १ ह० च०

१३५ संयुक्त क्रिया

प्रारम्भिक अवधी की रचनाओं में निम्नलिखित क्रियायें सहायक क्रियाओं के साथ मिलकर संयुक्त क्रियाओं का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं—

जाना—

लै गई । ४, जाउँ उड़ाई । १९ लो० क०
गए भुलाई । ३, उठि गै । ४, चलिजाई । २० रा० ज०
लै गौ । ३०, गै बहु । २६, गैफूटी । ३१ स० क०
गएउ हेराई । २०, गालोटी । ४३५,
कहि जाई । ६ मिर०
मरि जाई । २ । ८ हृ० च०, चलो जा । ४ । ८ हृ० च०

पड़ना—

लै परी । ४ लो० क०
पड़उ जइ आइ । ५ मै० स०
पद पुरछाई । ४, छूटि पड़ । ७,
मुरछि परे । २२ रा० ज०
भूलि परेसि । २६ स० क०
पूरा सिर आई । १ । ८ हृ० च०

लगना—

आइ अब लागा । ४, चाहन लागा । ६३ लो० क०
लागे खाई । १२, नाचन लागे । १४ रा० ज०
पढावइ लागे । १६, खेलै लागे । ७,
होइ लाग । १७
सुनावन लागे । ७।१, कहन लागे । ८।१ हृ० च०

रहना—

रहा छाइ । १७ लो० क०
रहे छपाई । २८ स० क०
रमि रहे । ३।६ हृ० च०

पाना—

लखि पाए । ७, आइ न पावा । २१
हरइ जउ पावउँ । ४६ लो० क०
सुन पावइ । ८ मै० स०

हेरवे पावा। ११ रा० ज०
रहइ न पावा। ४३२ मिर०
जानि न पावा। ८।१ ह० प०

आना—
गिनत न आवइ। ४७ लो० क०
से आवहु। ५ रा० ज०
आने जाती। २८,
आनु बोलाई। ३८ स० क०
गनत न आव। १२ मिर०
चलि आए। ५१।६ ह० प०

चलना—
लइ चले। १५, चला उड़ाई। ५६ लो० क०
चली पराई। १६ मिर०

लेना—
धरि लीन्हे। ११, लिएउ छुड़ाई। ४७ लो० क०
लीन्ह सभारी। २ मै० स०
हरि लेई। २८ स० क०
लिहेसि बुलाई। १७ मिर०

पारना (सकना के अर्थ में)—
देखि को पारइ। ३४ लो० क०
डोलावै पार। २ मै० स०
देवे पार। २० रा० ज०
जोरइ पारा। ३, नियजै पारा। ३३ स० क०
रहै न कोई पार। ४३७ मिर०
गनै को पारा। २० रा० ज०

देना—
देइ दिखाइ। ४६ लो० क०
देहु डोलाई। २ मै० स०

चाहना—
जूझइ चाह।

बैठ—

ले बैठ । ८० लो० प०

थाइ बैठ्यो (बैठेउ) ३ प०

उठना—

उठा अकुताइ । १५ स० क०

तुलाना—

आइ तुलानो । ४३५ मिर०

□□

अव्यय

अव्यय

क्रिया विशेषण

१३६ प्रारम्भिक अवधी में प्राप्त क्रिया विशेषण नीचे दिए जा रहे हैं—

काल वाचक—

अब । ३, तब । २, फिरि । ७, फुनि । ६, जब । १०,
जउलहि, तउलहि । २०, बहुरि । २३, आजु । ४०, पुनि । ४६,
जउ (जब के अर्थ में) । ४८, नित । ३१ लो० क०
दिन दिन । १५ च०
पहलें । १, पुनि । १, तब (ही) ।४, जउ ।६, तउ ।६,
नित, नित । ६, कब ।११, जब, जब । १४, आज (हि) । १८,
तउलहि । १६, घड़ा घड़ी । २६, काऊ । २८ मै० स०
तब । ११, जब । १२, त । ४, जो । ४, पहिलें । २१,
चौथ । २१, पुनि । ३ रा० ब०
तब । ११, जब । ११, सदा । ६, आज । ८, पहिले । ४,
छनिक । ६, तब लगि । ६, नित । ४२, चोखे । ३८,
कालि । ४४ स० क०
जब लगि । २, पहिलें ३, काऊ । ८, फुनि । ८, ततिखन । ११
जौ, तौ । ६, अब । १२, तब । ४२४ काहिहु । ४२४,
कत । ४२५, जहिया तहिया । ४४३, बेगि । १६ मिर०
अब । २।१, जब (ही), तब (ही) । ३।१, बेगि । ५।१,
आदि । ५।१, जहिया, तहिआ । ६।१, पुनि । ६।१,
आजे । ७।१ कब (हि) । ३।८ बहुरि । ४।८,
तुरित । ५।१ ह० प०

स्थान वाचक—

कहूँ । ४, बीच । ६ । ८, कत (हु) । १२,
बाहिर । १३, कुत । १५, इहवाँ । १८, उहवाँ । २,
तहवा । ३७, कित । ४८, नियर । ५१, कहाँ, जहाँ । ५७, लो०क०
तले । १७ च० (प), आगे । १५ (च०)
अगें । २, जहाँ । ३, कहवाँ । ३, कत । ४, कहूँ । ६,
तहवाँ, जहवाँ । २६, पावें । २१, नियर । २६
सहवाँ । ३ ऊपर । ४, हेठ । ४, आगे । २१ रा० ज०
तहवाँ ।, तह । १०, भीतर । १०, जहा । १०, कहाँ । ७,
ऊपर । १७, कतहु । २० स० क०
तहा । ५, आगे, पीछे । ७, तर । २०, भीतर । २०,
ऊपर । ४।६, इहाँ । ४३३, बाहर । ४३३, कत । ४३० मिर०
बिच । ३।१, तह (हँ) । ५।१, तर । १।८, बाहर । २।८,
उपर (हि) । २।८, जहाँ, तहाँ । २।८,
भीतर । ३।८, पास । ४।८ हं० प०

रीति वाचक—

अस । ३, तस । ४, तइस (इ) ।७ अइस । ८,
जइस । १३, अइसन । १९,
कस । १६, केउ (किव) । १८, कइसें । १९, जइस । २१ लो० क०
अइस । १, जिउ । १, कस । ३, अस, ५, जस । ५,
अइसा । ५ क्योंकर । ६, तस । ११, अइसन । १८,
तिउ तिउ । २६, तइस । २६, अइसा । २६ । म० स०
कैसे । १५, जैसे । १५, अस । १५,
जस । १, अस । ६ कैस । ६, जैसे । ७, तस । ४,
जैसन, अइसन । २२, स० क०
कस । ३ अइस । ६, तसेहि । ८, जैसे । ११ मिर०
जेम । ५।१, कैसे । १।८, अस । १।८, जिमि । २८ हं० प०

परिमाण वाचक—

कछु । १३, बहुत । १६ अति । १६ जित । ३१ लो० क०
अति । ७ कछु । ८, अनम । १०, बहुत । १४, अपार । १८
तिन (जरा सा के अर्थ में क्रिया विशेषणवत प्रयुक्त) । २२ मे० स०

बहु । ३ बहुत । ५, रा० ज०
जत । १३, स० क०
बहु बहुत । ५, किछु । ८, अति । १२, किछौ । २१ मिर०
बछु । ३।१, बहु । ३।१, अति । २।८, अधिक । ३।८ हु० च०

निषेध वाचक—
न । १, नाहो । १, नहु । ७, मत । १३, जनि । ५५, लो० क०
ना । १, न । ४, बिन । ३०, नहो । २१, मति । २८ म० स०
ना । ८, बिनु । १०, न । १, जनि । २०, रा० ज०
न । ११, नहि । १२, जनि । १५, बिनु । १३ स० क०
ना । नहो। १, न । १, नहि । ८ मिर०
नहिं । ४।१, न । ४।१, जनि । ६।१ नाहो । ६।१ हु० च०

विविध—
तक । ३१ च०, किन ८ मिर० तो । ४५ । ८।१ हु० च०

१३७ समुच्चय बोधक

सयोजक—
अउ । २०, २० लो० क०, अवर । १८ च०, अरु । २४ लो० क०
अउर । ५२ लो० क०
और । ३, म० स०
औ । ११ रा० ज०
औ । ५४, ५६ स० क०
औ । ४, अउर । ८, और ४३८ मिर०

विकल्पात्मक—
कई । ४४, ४५, मत । १, बरु । ८० लो० क०
नातर । ६, कई । २१, मै० स०
की । ५, वरु । २० रा० ज०
को । २६ स० क०
कै । ४२४ मिर०
बरु । ५ । १ हु० च०

प्रतिवेधक—
पै । १०, २३, ६२ लो० क०
पइ । १४ मै० स०

पै । ४३२ मिर०

आश्रित वाक्य, संयोजक—

जउ । ५, जानहु । ११, जनु । १, दहु । ८, सो० क०
कै । जो । २, जउ । ६, मै० रा०
जानहु । ३, जो । ५, ६ रा० ज०
जेँ । १ (जिसका लि), जनु । १६, जउ, ३३, दहु । ६,
जो । ४७ उ० क०
जो । ४२४, जनु । २१, जनो । ४२४, जउं । ४२७ मिर०
जो । ८ जनि (नु ?) २ । ८, जानहु । ३ । ८ ह० च०

सम्भवनार्थक—

कै बहुँ । २८ मै० स०, मनु । ३१ च० (प)

मति—

मति सुनपावहु नेकहु सोर
(कहो लोरिक न सुन पाए ।)

१३८ निश्चयबोधक रूप

प्रारम्भिक अवधी में निश्चय बोधक दो रूपों में पाए जाते हैं। केवलार्थक और समेतार्थक। समेतार्थक रूप 'हु' अथवा 'उ' लगाकर तथा केवलार्थक 'हि' अथवा 'इ' लागा कर बनाए जाते है। ये प्रत्यय, सज्ञा, विशेषण, संख्या वाचक, सर्वनाम, क्रिया तथा क्रिया विशेषण रूपों में लगते हैं।

(क) समेतार्थक

१—सज्ञा—

खानजहानहु । १२ च० (प)
नगरहु । १ च०
सपनेहु । ६
नेगोहु । ७४३ मिर०
नलहु । १३ मिर०

२—विशेषण

साचेहु । ४२५ मिर०

३—संख्या वाचक

सातौ ३१ च० (प), दुवउ । ११ सो० क०

घनीसो । १४, घहुँ । २२ दुनहु । २०,
दोउ । १५, दोहुँ । २४ मै० स०
दूनहु । ५, तिहुँ । १६ रा० ज०
चारित २०, पाँचो । ७ स० क०
चारित । ४, दूवो । ४३८, एको । १३,
बत्तीसउ । १८, पायहु । ४३१ मिर०
आठो । ह० च०

४—सर्वनाम

हमारेउ । ३= लो० क०, तुम्हहूँ । (५),
तुम्हरो । २७ लो० क० तूह । ३८ च०,
कोनिउ । ५० लो० क०
तोहूँ । २३, काहू ६ मै० स०
हमहू । १२ रा० ज०
सेउ । १६ स० क०
औरौ । ४८ स० क०
तेहु । ४२६, हमहूँ । ४३२, काहू । ४३८ मिर०
हमहूँ । २ । ८
केहु । ४ ८ ह० च०

५—क्रिया (अत्यन्त विरल)

मुएहु । ३ लो० क०
देखतहु । ५ च०

६—क्रिया विशेषण

कैसेहुँ । ४६, कतहु । १२, अजहूँ । ३६ लो० क०
कहूँ । ६, तबहूँ । १३, कैसहुँ । २० मै० स०
तबहु । ८ रा० ज०
कबहु । २० स० क०,
जबहु । ५ स्वर्गा०
कहियउ । १८, किछो । २१, ऐसेहु । ४४० मिर०
कबहुक । २

(ख) वेयलायक

सज्ञा—

घरहि । २८ लो० क०
माटिह । १६ मै० स०

विशेषण—

सगरिह । ६६ लो० क०
झूटहि । २० मै० स०
साँचहि । ११० मिर० (चि)

सख्या वाचक—

एकै । २७ स० क०
एवै । ४२६ मिर०

सर्वनाम—

साई । ३६, सबै । ६, सबही । १०, हमारहि । ७३, लो० क०
तुमहि । ७४ प० (प)
सोइ । १५ मै० स०
एहै । ८ रा० ज०
आपुहि । ४, सभे । ३५ स० क०
उहै । २६ मिर० (चि)
आपुहि । ४२१, सबै । १३ मिर०
सोई । ३ । ६ ह० प०, इहै । ४ । ८ ह० प०

क्रिया—

कहतहि । ३४, हसतहि । ३६ लो० क०
मिलतई । १६ सौंठतहि । ५१
बैठहि । ४४० मिर०, सुनतेहि । ५६ मिर० (चि)
धरतहि । ४ । ८ ह० प०

क्रिया विशेषण

बहुतइ । ३५, जबहि । २४, तबहीं । ३६, तउहि । ४८,
यहाई । ६५, बतिहि । ४८ पं० (प)

उपसहार

उपसहार

पिछले पृष्ठों में प्रारम्भिक अवधी भाषा का अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। भाषा विशेष के रूप में अवधी का सवप्रथम उल्लेख अमीर खुसरो की जिस रचना में हुआ है उसका रचनाकाल ७१८ हि० अर्थात् सन् १३१६ ई० है। अमार के खुसरो के उल्लेख के पूर्व भी कई रचनाओं—प्राकृत पैंगलम् के कुछ छदों, राउरवेल और उक्तिव्यक्ति प्रकरण में अवधी के पर्याप्त रूप मिल जाते ह। वस्तुत उक्त रचनाओ विशेषत उक्तिव्यक्ति प्रकरण में अवधी रूप इतनी प्रचुर सख्या में हैं कि डा० चटर्जी ने उक्तिव्यक्ति की भाषा को कौसली या पूर्वी हिन्दी की प्रारम्भिक अवस्था का अवधी रूप कहा है। दे० १, १२ स्टडी उ० व्य० प्र०। किंतु हमने उक्तिव्यक्ति की भाषा को दो कारणा से अवधी नहा कहा है।

१—उक्ति व्यक्ति में आए हुए सभी रूप अवधी में नही मिलते। उदाहरण क लिये उक्तिव्यक्ति में अन्य पुरुष बहुवचन में 'करति' तथा उत्तम पुरुष बहुवचन में 'करहु' रूप होत हैं (देखिए ए स्टडी आव दि न्यू इण्डो आरियन स्पीच उक्तिव्यक्ति प्रकरण पृ० ५६ पर दिया गया धातुरूपादर्श) ये रूप अवधी में नही मिलते।

२—खुसरो के पूव अवधी शब्द का कोई उल्लेख नही मिलता।

प्राकृत पैंगलम् के विवेचित छदो और राउरवेल की भाषा की भी यही स्थिति है।

पहववसहि जम्म धरीजे, सपअ, अज्जिअ धम्मक दिज्जे
सोउ जुहिट्ठिर सक्ट पाआ देवक लिक्खअ केण मिटावा।
—१०१ व० वृ०

की भाषा को अवधी न कह कर अवधी का पूव रूप कहना अधिक उचित है क्योंकि जम्म, सपअ, अज्जिअ, धम्मक केण जैसे प्रयोग परवर्ती अवधी में नही मिलते।

इसी प्रकार तासु सोह कि कहडा पावइ। ४ रा० वे० तो को अवधी कहने में कोई आपत्ति नहा है किन्तु दित्ता। १६ रा० उ० प्रारम्भिक अवधी के 'दीता

का पूर्व रूप है। वस्तुतः प्राकृतपैंगलम् के विवेचित छंद राउरवेल और उक्ति व्यक्ति प्रकरण की भाषा उस आद्य पूर्वजा भाषा का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें अवधी विकसित हुई है।

हमें खुसरो के उल्लेख काल के ६३ वर्ष पश्चात् ७८१ हि० अर्थात् १३७६ ई० में रचित दाऊद कवि का काव्य उपलब्ध होता है। प्रस्तुत विवेचन में दाऊद के काव्य के रचनाकाल १४ वीं शताब्दी से लेकर लालचदास के हरिचरित (रचनाकाल लगभग सम्वत् १५८२ या १५२५ ई०) तक प्राप्त अवधी भाषा का अध्ययन किया गया है। डॉ० बाबूराम सक्सेना ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'एवोल्यूशन आफ अवधी' में जायसी और कुछ परवर्ती अवधी कवियों की भाषा का अध्ययन प्रस्तुत कर दिया था इसलिये हमने जानबूझ कर इस विवेचन में जायसी पूर्व अवधी कवियों की ही भाषा का जिसे हमने प्रारम्भिक अवधी कहा है, अध्ययन किया है।

ध्वनि

प्रारम्भिक अवधि और जायसी पश्चात् अवधी में ध्वनि विचार की दृष्टि से अंतर नहीं है। यद्यपि प्रारम्भिक अवधी में ण और श व्यंजन मिल जाते हैं किन्तु उनके प्रयोग विरल हैं। 'ण्' आधुनिक अवधी की भाँति अपने वर्ग के स्पर्श के पूर्व प्रयुक्त होता है। 'न' भी विरल प्रयुक्त है। 'न' का प्रयोग रा० ज० जैसे धार्मिक और अवधी के पूर्वी प्रदेश में लिखी गई रचना में मिलता है। 'श' के छिटपुट प्रयोग अन्यत्र भी जैसे दोष। ८ मै० स० स्वामी। १ स० क०, तिश्ना। २ मिर०, मिलते हैं। किन्तु ये तत्सम या अर्धतत्सम शब्दों में ही मिलते हैं जिनमें सम्भवतः प्राचीनता या आभिजात्य (?) का आभास देने लिए श' का प्रयोग किया गया है।

प्रारम्भिक अवधी में यद्यपि र और ल परस्पर विनिमेय ध्वनियाँ हैं किन्तु उसमें 'ल्' के र् में परिवर्तित होने की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत अधिक है। 'र्' ल' के जो उदाहरण मिलते हैं वे अधिकांशतः पूर्वी अवधी या भोजपुरी प्रदेश में लिखी गयी रचनाओं में है जैसे मंदिल। ५७ स० क० दुदिस्टिल। ५० मिर० (शि) इत्यादि अतः यह मागधी प्रभाव भी हो सकता है।

प्रारम्भिक अवधी में 'रह व्यंजन नहीं मिला है।

संज्ञा

लोरकहा मनासत और सत्यवती कथा में ऐसे उदाहरण मिले हैं जहाँ संज्ञा के मूलरूप अकारण इकारान्त हो गए हैं दे० टिप्पणी।

हकारात मूलरूप के उदाहरण ईश्वरदास के पश्चात् अवधी रचनाओं में नहीं मिले है। यद्यपि जनता म इस प्रकार के रूप आज भी प्रचलित है। हकारा त मूल रूप का उदाहरण प्राकृत पैंगलम् की इस पंक्ति में भी मिलता है—

वह पच्छा वावह। १९५ व० वृ०
(पश्चिमी वायु बहती है।)

ज्ञात होता है कि हकारा त अविकारी अपभ्रंश और प्रारम्भिक अवधी में विद्यमान था, जिसका प्रयोग परवर्ती अवधी काव्य में नहीं मिलता किन्तु जो अभी लोक प्रयाग म शेष है।

कारक

प्रारम्भिक और परवर्ती अवधी के कारक रूपों में सामान्यत कोई अन्तर नहीं है। किन्तु साधन के मनासत की कुछ पंक्तियों में षष्ठी एक वचन का अहु प्रत्यया त पुल्लिंग रूप विद्यमान है जैसे 'नरकहु कुड आनि सो मेलसि।' ३२ मै० स० जो परवर्ती अवधी में नहीं मिलता।

आ प्रत्यया त विकारी रूप बहुवचन के प्रयोग च० (प) और लो० क० में मिलते हैं।

महुस करा ४४१ च० (प)
वाहीं जोने। ६५ ल० क०

इस तरह के उदाहरण परवर्ती अवधी में मुझे नहीं मिले हैं।

परसग

प्रारम्भिक अवधी को प्राचीनतर रचनाओं में परवर्ती अवधी की अपेक्षा परसर्गों का कम प्रयोग हुआ है। लो० क० की प्रारम्भिक १०० पंक्तियों में परसर्गों का प्रयोग केवल २१ बार हुआ है जबकि पद्मावत की प्रारम्भिक १०० पंक्तियों म य ४१ बार प्रयुक्त हुए है। मिरगावत में परसर्गों के प्रयोग की मात्रा लगभग पद्मावत के ही समान है।

सवनाम

१४५ प्रारम्भिक अवधी और परवर्ती अवधी के सवनाम रूपों में कोई महत्त्वपूर्ण अन्तर नहीं दिखलाई पड़ा है। किन्तु उसमें काव्य भाषा के रूप में प्रयुक्त परवर्ती अवधी की अपेक्षा सवनाम रूपों की विविधता अधिक है। नीचे प्रारम्भिक अवधी के सवनाम रूपों का उल्लेख किया जा रहा है जो परवर्ती

अवधी में रचित काव्यों की भाषा में[1] नहीं मिलते—

(१) 'हम' का विकृत रूप 'हमाह'—

काहे तजिसि हमाह। १२८ मिर० (शि)

करवत सीस देइ जौ कोइ वैस ह जाय हमाह। १२१ मिर० (शि)

सम्भवत यह रूप हमह या हमहि से विकसित हुआ होगा। शब्दों के मध्य वर्ती 'अ' को दीर्घ करने की प्रवृत्ति प्रारम्भिक अवधी में मिलती है। दे० ७९

(२) मध्यम पुरुष अविकारी बहुवचन के तुहँ, तुह, तुहु रूप—

मइ करि जउ तुहिं (ह) इहवाँ रहहु। ३७ लो० क०

का लोगा तुह घरहु पियार। १ मैं० स०

सभे देवता तुहु वारौ निति एक जस लेहु। ४९ स० क०

(३) मध्यम पुरुष विकृत रूप बहुवचन का 'तुह' रूप—

तुह ते बुधि जन करहि के वारा। २।१ ह० च०

(४) अन्य पुरुष नित्य सम्बन्धी और दूरवर्ती संकेत वाचक सर्वनाम ए० व० के 'से' और 'ऊ' रूप—

से उपदेस करब मै भारी। ८ स्वगा०

ऊ फिर घेर न होइ। ३०८ च० (प)

'से' रूप बगाली, उड़िया और भोजपुरी (दे० ओ० डी० बी० ऐल ५५५) मे मिलता है। ऊ का प्रयोग पूर्वी अवधी भाषी जनता करती है।

दे० ए० अ० २४१।

(५) निकटवर्ती संकेत वाचक सर्वनाम का एकवचन रूप 'ई' और विकृत बहुवचन 'इन्ह' जो भूतकालिक कृदन्ती क्रियाओ के कर्त्ता रूप में प्रयुक्त होता है।

ई सभ लेहु गिनाइ। ५४ स० क०

इन्ह हमार सब देखु सरीरा। २७ स० क०

ये दोनो रूप अवधी भाषी जनता में प्रचलित है देखिए एवाल्यूशन आफ अवधी। २४४ बी।

(६) निकटवर्ती संकेत वाचक सर्वनाम के विकारी बहुवचन रूप में एक स्थल पर 'एतिन्ह' का प्रयोग मिलता है। जे एति ह कर लीन्ह सोमावा। १८३

---

१ परवर्ती काव्य भाषा से मेरा तात्पर्य डॉ० सक्सेना द्वारा विवेचित ए० अ० की प्रारम्भिक अवधी (अर्ली अवधी) से है। उन्होंने प्रारम्भिक अवधी के अन्तर्गत जायसी, तुलसीदास, और नूरमोहम्मद की भाषा का अध्ययन किया है।

मिर० (शि)। यह रूप अन्यत्र कही नही मिला है।

(७) सम्बध वाचक सवनाम का एकवचन अविकारी रूप—

पुन कथा जे यह सुनै। ५७ स० क०

यह रूप गाडा जिले में प्रचलित है। दे० २४७ (ए)० ए० अ०।

(८) प्रश्न वाचक सवनाम मूल रूप एक वचन के 'कउन' और 'के' रूप—

पिउ गारुड़ विन कउन जिवावै। २६ मे० स०

पुरबिल लिखा बिधाते के दहु मेटन हार। ६ सं० क०

उपयुक्त रूपों का प्रयोग अवधी में आज भी होता है।

कउन आवा है (लखीमपुरी) दे० ए० अ० २५० ए०

उनका के मारिसि (लेखक स्वय सूचक)

(९) अनिश्चय वाचक सवनाम का प्राणिवाचक मूल रूप का 'केहू' रूप—

कह केहू कछु दइ मगु लावा ।४५ लो० क०

गोंडा, फैजाबाद, सुलतानपुर प्रतापगढ और इलाहाबाद जिला में केऊ और 'केहू' रूप जन जन प्रचलित है (देखिए अ० २५८ बी० ।)

(१०) अनिश्चय वाचक सवनाम का सम्बधवाची विशेषण रूप 'परार'—

आप परार न चीन्है गुआरा। २८ रा० ज०

यह रूप लखीमपुरी में आज भी प्रचलित है देखिए—

परारे धन से कउन परोजन। २५८ बी०, ग्र० अ०

क्रिया

१४६ वतमान काल —

सहायक तथा अस्तित्ववाची क्रिया—

(१) आछ्

प्रारम्भिक पूव अवधी में आछ् धातु का प्रयोग परवर्ती अवधी की अपेक्षा अधिक हुआ है। जायसी ने आछहिं का प्रयोग केवल दो बार और 'आछ् का प्रयोग केवल एक बार किया है (देखिए ए० अ० २६०) जबकि दाऊद की रचना में आछ धातु के विविध रूपो का प्रयोग १२ मिलता है। आछहिं। ३३ च० [प], आछै। ८३ च०। आछ। ६६, आछे १८७, आछहिं। १८५, आछे १९६, आछ। २१४ आछत। २३८, आछौं। २४६, आछइ। २५९, आछै। २६१, आछउ। २६४ चं० (प)।

तुलसीदास ने केवल अछत' रूप का प्रयोग किया है, जबकि ईश्वरदास ने सत्यवती कथा में आछे। ४५७, आछहिं। ,५४, आछहु। ३६ का प्रयोग

किया है।

(२) बा, बाट

प्रारम्भिक अवधी में बाट का क्रियाओं के रूपों का प्रयोग मिलता है —

तेरा बा लग गारर। २६ प० (प)

सभे बा हुगो। १६ रा० ज०

अहुरी कया बाट। ३८ स० क०

जेग बाटे (टें) पांरो भाई। ७ स० क०—इत्यादि

डॉ० सक्सेना द्वारा विश्लेषित अवधी ग्रन्थों की भाषा में इस सहायक क्रिया का कोई उल्लेख नहीं है यद्यपि उन्होंने यह लिखा दिया है कि प्रतापगढ़ में बा, बाट और इलाहाबाद तथा मिर्जापुर जिला में बाट क्रिया के रूप प्रचलित है दे० ए० अ० २९१ ए०।

(३) होस

रा० ज० स० क० और मिर० में वर्तमान काल की अस्तित्ववाचक क्रिया के रूप में होसहि का प्रयोग मिलता है—

भए ब्याह जो होसहि नाती। ८ रा० ज०

ऐसन पाप ताहि कह होसे। २६ स० क०

होसे कोई सोहरा। ७० मि० (नि)

होस धातु का प्रयोग आजकल भोजपुरी में होता है। (दे० ५५४ भो० भा० सा०) अवधी में नहीं। रा० ज० स० क० और मिर० तीनों रचनायें पूर्वी अवधी प्रदेश या पश्चिमी भोजपुरी क्षेत्र की है अतः सम्भव है कि यह पूर्वी प्रभाव हो। यह भी असम्भव नहीं कि प्रारम्भिक अवधी में यह रूप प्रचलित रहा हो किन्तु कालान्तर में विलुप्त हो गया हो।

(४) अति, अथि

मिर० में अ० पु० पुरुष वर्तमान निश्चयार्थ के ब० व० में रचति, करथि जैसे रूप मिलते हैं—

मान बिहूने हेतु बिनु रूपहि जे रचति

मूरख दिया पतंग जेव फिरि फिरि ते दगधति। १७६ मिर० (नि)

ते पिय किय न करथि। १८० मिर० (शि)

रचति, दगधति, करथि, जैसे प्रयोग प्रारम्भिक अवधी में भी विरल हैं। अलबत्ता रा० बे० मोहथि। ३ मिलता है। उ० य० प्र० में प्राप्त अन्य पुरुष वर्तमान निश्चयार्थ बहुवचन रूप 'करति' को डा० चटर्जी ने करन्ति से विकसित बताया है। दे० स्टडी ७१ उ० व्य०। सम्भवतः 'करन्ति' से जहाँ उ० व्य० प्र०

में प्राप्त 'करति' रूप विकसित हुआ वहां उससे करइ और करहिं रूप भी विक सित हुए करति महाप्राणीकृत करथि तथा करनि> करइ और करथि> करहिं। मिर० में प्राप्त अति और अथि प्रत्ययान्त रूप इस अनुमान का आधार प्रस्तुत करते हैं। अन्ति और अथि प्रत्ययात रूप सम्भवत प्रारम्भिक अवधी में अप्रचलित हो गए थे।

१४७ भूतकाल —

ˌ (१) होत, होते

प्रारम्भिक अवधी में भूतकालिक कृदन्तो रूप होत (ए० व०) होते (ब० व०) रूप मिलते हैं। ये रूप परवर्ती अवधी म अत्यन्त विरल है। मुझे पद्मावत में इसके केवल दो उदाहरण मिले है। होती छ० स० २८३, ४१८ मधुमालती में इसका कोई उदाहरण नही मिलता।

दु ख जो होत कुमलात। ५५ लो० क०

(जो दु ख से मलान था)

अपनी गरभ होत (त) हम जहिया। ६। ह० च०

धन मा ग्रामन होत सुखी। १६ रा० ज०

यह रूप न तो परवर्ती अवधी का य भाषा (पद्मावत के दो स्थलों को छोड़ कर) मिलता है और न अवधी का बोलियों में ही इसका सन्धान मिलता है। किन्तु 'उ' को 'ओ' बना देने की प्रवृत्ति अवधी म आज भी दिखलाई पडती है दूसर> दोसर, चापलूस> चापलोस। इसी प्रवृत्ति से हुत और हुते का होत और होते रूप बने प्रतीत होते हैं।

(२) भउ

परवर्ती अवधी में भूतकालिक कृदन्ती सहायक क्रिया 'भउ' अत्यन्त विरल [redacted]। यह रूप मैनासत रामजन्म और सत्यवती कथा और हरिचरित में पर्याप्त मिलता है। पूर पद्मावत में यह ७ बार और मधुमालती में ३ बार प्रयुक्त हुआ है। पद्मावत छ० क्रमाक १६,२६७, ३२१ ३६२, ३६०, ४६६, ४७७, मधु मालती छ० क्र० ५७ ८२,४७१ (भो)। स० क० और ह० च० में इसका प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में हुआ है। ह० च० (कुल पंक्ति सख्या लगभग १५८४) में यह २४ बार और स० क० (कुल प० स० लगभग ४६४) में यह रूप १६ बार प्रयुक्त हुआ है।

हिन्दी क्षेत्र और उसके आसपास को नवोदित भारतीय आर्यभाषाओं में इस रूप का व्यापक प्रचार था। यह रूप प्राकृत पैंगलम् व० वृ० १३४, राउल बेल

२४, में मिलता है। ब्रजभाषा के कवि मतिराम ने भी इस रूप का प्रयोग किया है। (देखिए ब्रजभाषा २३१) डा० धीरेन्द्र वर्मा ने कहा है कि यह रूप ब्रजभाषा में अपेक्षाकृत कम प्रयुक्त होता है 'तथा अवधी प्रभाव के कारण हो सकता है (ब्रजभाषा २३१) कीर्तिलता में भी इस रूप का प्रयोग हुआ है (दे० कीर्तिलता ३।३७) इससे भी पूर्व मैथिल रचना वर्णरत्नाकर में भी इस रूप का प्रयोग हुआ है (२५ क, ३२ ख, २६ क, ३७ क, ४१ क, ४७ ख ७०, ७२ ख)।

सम्भवत भू धातु का अवधी में प्रचलित कृदन्ती भूत कालिक रूप भा, कभी 'भय' था (गा गया के गय की भाँति)—जिससे भइ और भय और भउ दोनों रूप विकसित हुए। गेउ (गया) भी प्रारम्भिक अवधी (देखिए रा० ज०।४, स० क० २४, ३०, ३१ इत्यादि ह० च० ।४।३, १०।१, इत्यादि पद्मा०। २३५, ३२७ इत्यादि तथा मधु०। २३६, २६७ इत्यादि तथा वर्ण रत्नाकर ३३। क, ४२। ख इत्यादि में मिलता है।

(३) ईत, ईतिस, एतिस, एतिह

प्रारम्भिक अवधी में ईत ईतिस, एतिस और एतिह भूतकालिक कृदन्ती रूप मिलते है। दे० ११६ (१२, १३, १४) प्रारम्भिक अवधी के ये रूप सर्वाधिक सख्या में चन्दायन में मिलते हैं। परवर्ती अवधी की रचनाओं में इनके प्रयोग केवल मधुमालती में मिलते है। चन्दायन (प० के आधार पर) में इन रूपों का सोलह बार, (छं० क्र० ५१, ७७, १३१, २३७, २६१, २७६, २६१, ३०४, ३५०, ३६५,३६७, ४२७, ४४६। छं० क्रमांक ७७, ३६१, और ३६५ में इस रूप का प्रयोग दो बार हुआ है) मै० स० में दो बार (२, १२) मिर० (शि) के ११६वें छन्द तक इन रूपों का प्रयोग १६ बार, पूरी मधुमालती में पाँच बार हुआ है। पदमावत में यह रूप नहीं मिलता। पदमावत जैसे प्रतिनिधि काव्य में इस रूप का अप्राप्त होना इस बात का सकेत करता है कि यह रूप अप्रचलित हो गया था। मधुमालती में भी इसका केवल पाँच बार प्रयुक्त होना भी यही संकेतित करता है।

राउरवेल में दित्ता का प्रयोग हुआ है।

अधिहिं कय्यल डहूरा दित्ता। १६ रा० वे०

(आँखों में गहरा या चमकदार काजल दिया)

कीता, या दीता जैसे रूपों का विकास इस प्रकार हुआ होगा। कृ + क्त कृत > कित्त > कीत। क्त प्रत्यय से युक्त रूपों का विकास दो रूपों में हुआ है दा + क्त – दत्त, या दिण्ण > दीन > दीह्। संस्कृत में दिण्ण या किण्ण जैसे रूप नहीं दिखलाई पड़ते किन्तु म० भा० आ० में ऐसे रूप मिलते हैं। सम्भवत

कीत, और कोन जैस दोनो रूपो का विकाम साथ साथ हुआ है। आज अवधी में कीत, दीत रूपो का प्रचलन नहो है किन्तु प्रारम्भिक अवधो में ये मिलते हैं। पजाबी में दीता जसे प्रयोग आज भी प्रचलित हैं।

कीतिस, लीतिस जसे रूप सम्भवत अवधी के किहिस, लिहिस जसे रूपो के पूव रूप ह।

लीतिन्ह, लीतिस ए० व० का बहुवचन रूप है।

१४८ अनुज्ञाय—

(१) असु

इसके अतिरिक्त मध्यम पुरुष अनुज्ञाय एकवचन के असु प्रत्ययान्त रूप च० (प) और ह० च० में मिलते है।

खडग भरहुर मारसु। १२५ च० (प)

कहसु मोंहि वारी कित हुत आवा। ४४० च० (प)

बरिसमु आए अखडित धारा। २।२३ ह० च० इत्यादि।

डा० बाबूराम सक्सेना ने अनुनाय—अउ प्रत्ययान्त रूपपर विचार करते हुए इसे (—अस) को म० भा० आ० का रूप माना है। दे० ३१० ए०अ०। प्राकृत पैंगलम् म यह रूप मिलता है—

विज्जसु, बुज्मसु। ११९ म० बु०

पिशेल ने भी इस रूप का उदाहरण दिया है—वट्टसु (दे० ४६७ प्र० भा० व्या०)।

(२) अहु

मध्यम पुरुष अनुज्ञाय बहुवचन—अहु प्रत्ययान्त रूप

यह केवल स० च० में मिला है—

दुलहुक करहु विआहु

प्रा० भा० व्या० में पिशेल ने इस रूप का उल्लेख किया है—

वहहु (दे० ४६७)

हेमचन्द ने अपने प्रा० व्या० में इस रूप के उदाहरण दिए हैं—

जइ पुच्छह घर बुड्डाइ। ४।३६४

यह रूप वर्ण रत्नाकर में भी मिलता है (दे० इट्रोडक्शन ४८)

सम्भवत यह रूप सस्कृत के विधि के मध्यम पु० बहुवचन 'अत प्रत्ययान्त रूप से विकसित हुआ है।

(३) एहु

साधारणत अवधी में मध्यम पुरुष बहुवचन भविष्य अनुज्ञाय के एहु प्रत्य

यान्त रूप मिलते हैं। एह—प्रत्यया त रूप केवल चन्दायन में मिला है। बाँह लगाय सरग चमकाएन्त। ८। च० इससे मिलते जुलते चल्हि, देखिह, देखिहै रूप बगाली, मैथिली, भोजपुरी में भी मिलते हैं। दे० आ० डी० बी० एल० ५१। लखीमपुरी का 'ए' प्रत्यया त रूप (देखे) दे० ३१२ ए० अ० इसी से सम्बद्ध होता है।

१४६ प्रारम्भिक अवधी के अधिकांश व्याकरणिक रूप यद्यपि परवर्ती अवधी के समान हैं किन्तु उनमें कई परवर्ती अवधी काव्यों में या तो अपेक्षाकृत बहुत कम मिलते हैं या नहीं मिलते है। ऐसे रूपों का विवरण दे दिया गया है। इनमें से कई रूप परवर्ती अवधी की काव्य भाषा में अत्यन्त विरल या अप्राप्त है किन्तु अवधी भाषा जनता में आज भी प्रचलित है। (दे० सज्ञा—हकारान्त मूलरूप, सर्वनाम—ऊ, ई, इह, वउन, के, बहू, पराइ, क्रिया—बा बाट)।

इन रूपों के अतिरिक्त कुछ रूप ऐसे मिले है जो परवर्ती अवधी रचनाओं में अत्यन्त विरल हैं, जिनका प्रयोग आजकल अवधी की बोलियों में भी नहीं मिलता, किन्तु जो तत्कालीन भारतीय भाषाओं में मिलते हैं जस, मौ, गौ।

कुछ रूप ऐसे है जो परवर्ती अवधी काव्यों में अप्राप्त है (मधु० को छोड़कर) किन्तु दूसरी भाषाओं में आज प्रयुक्त हैं। ऐसे रूपों में कृदन्ती—ईत प्रत्यया त रूप पंजाबी में प्रयुक्त होता है और होसइ। ८ रा० ज० और करह। ५१ स० क० जैसे रूप भोजपुरी में प्रयुक्त होते हैं। ए० व० पुरुष वाचक सर्वनाम रूप जे, स भी केवल पूर्वी अवधी में प्रयुक्त होते है और इन्हें मुख्यतः भोजपुरी तथा अन्य पूर्वी भाषाओं के ही रूप माना जाता है। प्राचीन अवधी में ऐसे रूपों का प्रयोग देख कर ज्ञात होता है कि ये रूप पहले अवधी में भी प्रयुक्त होते थे। किन्तु कालान्तर में इनका प्रचलन अवधी से उठ गया है। 'कीत' जैसे रूप परवर्ती रूप 'किय' और संस्कृत 'कृत' के बीच की कड़ी जोड़ने का काम करते है। राउर बेल में उपलब्ध दित्ता दीत की पूर्व स्थिति का सूचक है।

प्रारम्भिक अवधी का भूतकालिक अस्ति वाची रूप 'होन' भी अन्यत्र कहीं नहीं मिला है। यह न तो जायसी-परवर्ती किसी काव्य में मिला है न किसी बोली में। यह प्रारम्भिक अवधी की एक ध्वन्यात्मक विशेषता प्रकट करता है जो आज भी अवधी में सुरक्षित है जैसे दूसर > दोसर।

प्रारम्भिक अवधी भाषा के अध्ययन से प्रकट होता है कि वह अपनी सम सामयिक कई भाषाओं के कई रूपों की सहगामिनी थी जो अब उससे न्यारी है,

अर्थात् प्राचीन अवधी पंजाबी, ब्रजी, भोजपुरी, मैथिल, बंगला से आज की अपेक्षा अधिक निकट थी।

प्राचीन अवधी में परवर्ती अवधी की अपेक्षा लोक प्रचलित रूपों का प्रयोग अधिक हुआ है। सम्भवत जायसी के पद्मावत ने अवधी को साहित्यिक, और परिनिष्ठित भाषा के रूप म पूणत प्रतिष्ठित कर दिया जिसके कारण उसमें लोक प्रचलित रूपों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम हो गया। इस प्रकार जायसो पूव अवधी, जिसे हमने प्रारम्भिक अवधी कहा है, परवर्ती अवधी से पूव की स्थिति का विवरण और उसकी कुछ विशेषताएँ प्रस्तुत करती है।



परिशिष्ट कुछ रचनाओं का पाठ

परिशिष्ट—कुछ रचनाओ का पाठ

(१)

साधन का मैनासत—(मनेर शरीफ की प्रति)

जिन्ह कलि बैलसेउ एहु असदल गजदल दलमलेउ
साधज मैत लेहु पुथिमी चीन्हा न रहेउ
जाता देखउँ यह ससारू, का लोगा तुहु धरहु पियारू
पानी अइस बुलबुला होइ, जो आवा सो रहा न कोइ
(पहलें) प्रनि जो दई उपाने, आवत देखे जात न जाने
इक छत राज नरिन्दन कीन्हा, पुथिमी रहा न तिन्ह कर चीन्हा
हम पुनि दिन इक चल चल अहहा, मुख आख समझउ तो कहही
धूवाँ केर धौराहर पुथिमी कोइ न रहा निदान,
साधन रोइ बिकारि जिउ जिउ मनहु तवान।
कौडी कौड़ी जोर मूए किरमन बापुरे,
गए गडन्त कडोर मन पछतावा पापियइ।

(२)

सातन कुवर नगर कइ दूता, कपट रूप नारद कइ पूता
तेहि रतना मालिन हँकराई, सत्र मो मैनाँ देहु डोलाई
दूत बचन जेउ मैना पावउ, तोहि मालिन चूदर पहराऊँ
मालिन पान दूत कर लीन्हा, सतरूप सब आगें कीन्हा
बोहन मोहन लीन्ह सँमारी, टोना टामन फेरेसि मारा
लीत दरब मालिन पुनि गई मैनाँ कइ बार
जिन्ह बिधि राखइ सत सों कउन डोलावइ पार
जिह राखइ करतार ताक्ठ बार न बाँकियइ
जो लागइ ससार साधन छाँह कि छोनियइ

(३)

मालिन जाइ मंदिर में बैठी, मैनां जहाँ सिंघासन बैठी
चम्पक फूल चोमारा हारू कीन भेंट ओ दीन्ह जोहारू
हँसि कै पूछे मैनां रानी, कहवाँ गवन कीन्ह परवानी
कह दूतिनि सुन मालति मैनी अनचिन्हो कस बोलसि बनी
तोर पितइ धाइ मोहि कीन्हा, मैं बारह तोहि अस्थन दीन्हा
मन न रहइ हिय गहबरइ बरइ आग तन मोहि
सँवरि सबन्ह चित आप जिव भेंटन आइउँ तोहि
सीस नवै भुइँ लाग मुख अम्रित मुख कपटी
साधन धनुक चराइ जिव फिर बुन्दइ अहेरिया

(४)

मैने बात साच कइ जानी कुटनी कइ बोलहि पतियानी
तबही नाउन बेग बुलाई फु कु मरदन कइ नहवाई
घेवर पापड आनि जिवावा दखिन कइ चोर आन पहरावा
रहसी कुटनी अंग न लगाइ अब मोपह कत मैनां जाइ
कहिसि तोर देखउँ अब भेसा छूटी लटैं भँग भए केसा
मैल चोर तोर दखउँ कि तुम्ह दहुँ जोग
सीस न सेंदुर काजर काहु भएउ सभ भाग
हिरदइ कोठा सात नयनन्ह हँस मुख रोइ
दूत लखन तिह पास साधन आप सँभारि

(५)

पिता मोर अनु कीन्ह न राजा पिता राज मोरे बउँनै काजा
पियन्ह दुख मोहि पईउ जो आइ अग दुख परउ सउवि कहँ जाइ
महरी भइ धो चाँद गुआरो लै गइ सेंदुर मोर उतारी
का कहुँ मालिन करउ सिंगारा मोहि परिहर गो कत पियारा
बैरि (रो) करि (रइ) मोर जस कीन्हा बारी बस मोहि दुख दीन्हा
फिरइ माग दिन ओड़े मीत सो बरी होइ
बरह (हि) जो बाँचे नेवहरे मालिन जथा करइ न कोइ
तासों काजइ नेह जासो दुइ जग थिर रहइ
तासों कौन सनेह टूटइ काँचइ सूत जिउँ

(६)

दूती वचन कहत गहबरी कपट रूप रोवन अनुसरी
तोर दुख देखि मरत हउँ मैना हियइँ आग जरिहो तोह नैनाँ
रितु असाढ बरखा पैसारू समझाहू घर बार सँभार (रु)
छोप गए हिय (?) आवन हारा अजियर कहूँ न देखउँ वारा
जेहि घर कन ते करहिं बैरासू सो न छाछ (ड) हिं पियइ कर पासू
तोर दुख सुनत मरत हौं बोल छाड दे मोहि
जस मालति कर भँवरा चुर्ज न मेरवँउ तोहि
जिह सत ऊार चाव सपनेहु असत न रुचइ
जाइ तो जाउ साधन सत न छाड़ई

(७)

दूती दूत वचन जिवँ कहा मैना धाइ ओकर मुख चहा
रुखे नैना तीले बनाँ बोलइ सती महा सत मैना
लाज कान तोहि कहत न आई अस ओखर तैं बोलिसि धाइ
चा (जा) रउँ नार ताहि कर हिया एक छाड जिन दोसर किया
एकाएक करन जो देऊँ जग दोसरा कर नाउँ न लेऊ
मोर भँवर मुन मालिन रुप कि पूजइ कोइ
अति रे स्याम गोवरीरा भँवर कि सरवरि होइ
नारि अकेली सेज सावन रुत बरसइ घना
पानी होइ करेज साधन रसिया बाहुरइ

(८)

सावन मैनाँ आइ तुलानाँ घर घर सखी हिंडोला ताना
हरियर मुइ कुसुबी रतनारी नाँह सरीखे खेलइ धमारी
सन्त सुहागिन झूला वा (डा) रा, गावहिं गीत उठइ झनकारा
उह दुख तिह सुख रैन दुहेली झुरि झुरि मरहुँ सेज अकेली
सावन गग भए मोर नैनाँ तोर दुख मरउँ मैं मैनाँ
जोबन जात न जानव भए बार पछताव
आनि भँवर तोहु मेखउँ लेन जगत कछु जाव
यह जग जइस सनेहु सो जानइ जिहु दुइ जा (चा)
कपट रुप सम केहु साधन गोत न लागई

(९)

सुन मालिन सावन तहि आवइ जाकर पियह परदेसइ आवइ
भोग भुगुत सम धरेउ उतारी मोहिं लेखे ससार उजारी
रितु मानउँ जउ लोरिक आवइ नातर मैना मुएँ गवांवइ
तैं पापिन माहि पाप सुनावसि यहि बातनि तैं ओखर पावसि
मोरे पिता बाप औ भाई सुन पावहिं तउ मार अढाई
भोलिन बचन सुनहु तुम जनम कि नित नित आत
धावँ दूध विनासति (?) जाइ परतर भात
भादौं गहिर गभीर नयन गग कोसहु भरे
क्योंकर पावउँ तीर साधन खेवन हार बिन

(१०)

भादौं मैना मघा झकोरा ऊँच खाल भर नीर हिलोरा
धन गरजइ बरसइ अतवानी काँप करेज सोहु होइ पानी
सरासत भइ बादर भागे देख फाट हियँ पउरख थागे
दादुर पपिहा कुहकहिं मोरा सूनि सज हिय फाटइ तोरा
सखी सहेलि लास मन भावा केउ आान केउ रँवइ परावा
जोवन काहे न भोगसि अलम बस सुख छाँह
केति भँवर बिलसत है कवँल फूल दर माँह
जोवन देउँ बहाइ पीयहु पीत न छोड़िए
सूख रहु कुमलाइ फूटे जोवन प्रीत बिन

(११)

यह सुन मना उठी रिसाई अब ओखर तोहू बोलउ धाई
तेहि वह जे अमरौती खाई जाकइ पाप सुनावसि आई
जोरे मुआ सोइ ते (य) हि न आवा तिन्ह निन को आपहिं इहकावा
वह कत आइ न बाघइ धोती तिह जोवन सो कउन निरोती
तिल एक सुख जनम कउ पापू निह नित कउन बिठारइ आपू
जो बरजइ उचेरे धाइ पाप तस आहु
सोरख होई सार सौं उतर देब तब काहु
सुन धारदहु रे बान बिरहिन बिरहु चउगुना
प (ज) जु अरजुन कइ बान मनमथ सर घाइ नहीं

(१२)

सुन मना अब चढ़ा कुवारा । जनमि (?) ताम सभ गूथहि हारू
ऊराज साह कन्यागत होइ पियह भोग विन रहइ न कोइ
जो ह दहउ दिह उवइ मोरारी, तरुनी खेलहिं प्रेम धमारी
तैं वापुहि काहे ओडेरसि, मोर बोल काहैं त पैलसि
धन जोवन जें होत न खावा, गए बार पाछैं पछतावा
सौत किहिस तुह ऊपर सोरो कीत (किहित) न कानि
तिह नित कातें झूरवसि काहैं होसि अयानि
जिह राता मोह पीउ हौं चेरी तिह सौत को
डर नहिं चारौं जोड़ साधन हँसके राखिहैं

(१३)

सुन मालिन कुवार किन आवइ लोरिक बिन मोहि जगत न भावइ
होइ कन्यागत परब देवारी मोहि लेखें ससार उजारी
भोग भुगुत के नियर न आऊँ, सीत घाम कह डर न बेराऊँ
मानिइ रुव जाकर पिउ पासा, मोहि वियोग निस देवस उदासा
करवत सीस देइ जो लोरा तबहूँ अग न डोलइ मोरा
इह जोवन लारिक बिनौं जारि करउँ भइ छार
प्रीव जाइ इन बातनि सरग होइ मुख कार
दीजइ हाथ उठाइ खाजइ पीजिइ वेलसयइ
लेड गएउ मूड चड़ाइ साधन किरपन सच मुए

(१४)

उत्तम कातिक परब देवारी सभ कोउ खेलइ परम धमारी
धग जोवन भोगइ ससारू तो कह मनौं बहुत विचारू
बाँमन छतरिन वैसिन नारी बिरहिन पतिसन सोरग सोनारी
मानहिं परब छतीसो जाती तैं पइ भइस माँग के ताती
तोहि देखत औरहि लइ गएउ छाडसि तोहि न आपन भएउ
जोवन काहें न भोगवसि का खावसि ओह लागि
सहरस सबद हियर फाटइ जब जब देखियहु जागि
जो राता जिह पास सो जन ताकइ मन बसइ
लै धन जोवन पाहुनौ

(१५)

का कर कातिक परब दवारी भूट बान का क₂सि गँवारी
परब वार दिन मानिय सोई जिह सरीर मालिन जिय होई
जियरा मोर चाँद ले धरो बिन जिय घर माँगी में पढ़(ड)ो
माँटो लागि जेउ आप बिटारउ दोउ जग घरम पन्तर हारउ
इत ओर गरब लोर सग मानी पियहु बिन जगत धध के जाना
रग भोग कइ पुथिमी लिल इक करै मँघाइ
जुग जुग भूटइ पातक तिन्ह नित तिस को जाइ
क्या बिटारउ कोइ जग राता वैरी घनो
चरित खेलावइ सोइ भूटे भूठन पेलियइ

(१६)

माँटी मीटी कहा बरवानसि माँटी भेन्न न मैनी जानसि
माँटी माह् डिस्ट विधि खेला (मेला) परम अम माटिइ मह मेला (खेला)
सोवरन फूल जो माटी फूलइ माटी देख नो माटी भूलइ
माटी भोगवै माटी खाइ माटिहि उपजइ रग सोआइ ।
माटी विरला बूभइ कोइ हसे खेनपुन माटी होइ
काच सूत टूटे तस (   ) कापड लोर
अगहन छैल वैरासहु कहाँ सुनह जउ मोर
जउ जिय जाइ तो जाउ साधन सत न छाड़ई
पापहि देहि बहाइ सत कइ करनी आग रे

(१७)

जउ मालिन लोरहि अस भावा न माहि रोयन ने परिहस आवा
जाउउ मैं आपन जिय हारा कवन भाग जउ सो निय मारा
राज देइ तउ कवन बड़ाई भीख मगावइ का घट जाई
यहि डर जउ सत छाड पराई लाकर पाप करहि का आई
वचन तुम्हारइ धरम नसावउ पुनि का लारहि मुख दरसाऊँ
जरत अगिन मैं मालिन जियरा धरेउ बुभाइ
अगहन छैल वैरासहु मोरि हुत तुम्ह जाइ
सवरहु (हुँ) सपने सज अनचन भाँति सँवारिए
जाइ फाट करेज साधन साइ बाहुरे

(१८)

मैनाँ पोस मास देख आवा जाड पवन भिनसार जनावा
निस के पवन तहो वहइ अपारा हाड न रहा डोल तन हारा
कहब तुम्हार न फाबहि मना अइसन बोल तें सुन वैना
रांसि अकेलइ जाड न जाई मन की मदन संतावइ आई
राएँ अधर नोर भरे नैना, एतनई बोल मोर मान मना
लान नेह नित वैरसम कामिन एह ससार
आच (ज) हि रसिया मेरवटउ राख बोल हमार

(१९)

सुन रतना तै मानिन धाई तेह मेखहु जो भँवर भइ जाई
पौस मास का करिहे मोरा भाकर कैजिय लइ गइ लोरा
लोरिक बिरह तबइ मार अगा सो रज सीस ह भरउ मैं मागा
बिरह हैल जेहि सजिहि होइ धाकर वारन चापइ कोइ
भोग भुगुत मोहि कछु नहि भावइ जौलहि लोर न हम घर आवइ
बिरह तुसार सेज दुख मैना गरुअ अहइ सताप
पाँच भूत की हतिया एहमा छल कस पाप
समुद के पूरा जाइ पवन कि आपा थिर रहइ
साधन केउ सुखताइ माघ अकेली यिउ रहइ

(२०)

माघ तुसार कहउँ सुन पीरा (   ) सरीरा
पवन तुसार सबद के बाजा सुरनर मुनि जन देवता भाजा
भाज पाँच इन्द्री कै सना भँवर लुलानि कौट मेंह मैनाँ
मौं बिनु लोर भाज नहि जावउँ माघ चवगुन लागइ दानउ
सौंर सुपेती सेज बिछाई पिय बिन कैसहुँ जाड न जाई
दूनहु जग आग देउँ मै जहाँ न बसै मोर
भूटहि जात तें मारउसि कहा सुनउ का तोर
नेह काहे कर पाप पियह कारन सिर दीजियइ
साधन कौन सताप वरिन सा मरना भला

(२१)

घरमहिं मालिन करिहौं चाउ पाप के पथ धरउँ न पाउ
का कर घरम पाप कह केरा लोर पथ मकुतावहि वेरा (?)
ओहि परान ओहि जीवन मोरा नया सून (?) बन कुहँकहि लोरा
पै दहि जाउ कै लगाउँ तीरा बहत जाउ माँझ भै नीरा
जिह तन आग विरह झकझोरइ तहवा सीत कि जहवाँ ओरइ
तिल इक पृथिमी जान जार कै करउ बिसभार
पाछें तो पछताए झूठा यह ससार
जोबन आएउ बार साधन सात न कर सकइ
उतर गए ते पार सर दी हेउ बहुरे नहीं

(२२)

फागुन मदन न मानइ कहा उछाइ बिरह पवन तन दहा
बिरह आग तन तिल न बुझाइ काहेक पाप सुनावसि धाइ
कुमकुम केसर वेलसइ बारा चहुँ दिस देखहु सब रतनारा
नाचइ बिरह पवन कह माना बनसपती भउ खाकर बाना
रउ रोलिय पियह बेलिसियइ परम अग न समाइ
तिन्हूँ समझ न देख रसिया देवह मेराइ
साधन फन्ने बसत बिरहिन बिरह चउगुना
पर नारी लुबुधा कत सौयकु यह कैसे जिए

(२३)

प्रेम दूति कपट ते खेलसि मरकह कुछ बान सो मेलसि
बिनु सुहाग कइस को (सो) हू अगा सेंदुर झूठ नाहि बिनु मगा
गीत नाद षचार चउतार तिन्हहिं रुचइ जिन पास पियार
मौति तो पियह बिन जग अधियारी मैं का खेपहुँ परब धमारी
कत सुहागिन भूलइ बारा मोहि लोरिक बिन जग अँधियारा
कत नेह चित चो (जो) भेंटउ अउर न (मन?) मह माउ
तोहि (तेहि) दिन करउ बधावना जब लोरिक घर आउ
साधन चन्द बसन्त बिरहिन बिरहा चउगुना
परनारी लुबधा कत जोवन ते मरना भला

(२४)

चैत राउ रुत धाइ तुलानी रितु बसंत मधुकर मन मानी
अगर कपूर फूलि बहु बास कामिनि फूल सेज भरि डास
रावहि पुरुख सेज चढ़ि नारी मानइ पति सग परम धमारी
चचल मदन न मानइ कहा संत (कन्त) बिरह नाग होइ डहा
आनि देहु तोहि प्रेम पियारा एक मास सुन बोल हमारा
चैत बसंत प्रेम रितु मैना मानहुं भोग
पिरथमी जात न देखिय कहा करत हैं लोग
इव जरियइ पिउ लागि जैसे धुआं न देखियइ
जरें कया कइ आग साधन सत सो देखियइ

(२५)

जउ मानुस पिउ कारन जरई दोहूं जग मानहि निस तरई
मरन जबइ को सब का डुहावइ (?) फिर रे जीवन को डहकावइ
आगम कुइ न जाइ धहाई बिसर ठौंउ बहु सबइ नसाई
लाग आंख रैन चलि जाई भोर होत रवि किरन दिखाई
तिल एक बूंद का डहक सरोरु काजी बूंद बिनसइ जस रोप (घो) द
जोबन रतन जारि कइ पवन उड़ावइ छार
यहु सिर देहउ लोरकहिं अउर न देखइ पार
सो जानहि जोहि पीर घाव न देखियइ
कोमल बरन सरीर साधन सत सौं लेखियइ

(२६)

मनों अब आवा बैसाखा मदन भुवगम तारुह पाखा
त्यो त्या लहरि रग बहरावे पिउ गारुड़ बिन कवन जिवावे
अइसें जनम गँवावे वारी ए कामिनि सुन बोल हमारी
रस कह रहइ देवस दुइ चारो तैं काहे अब होसि गँवारी
तन छोजे मन ऊमें अन्नर बैस सोकमार
बिरह अगन मैना जरइ जरजर होइहै छार
क्या गई बिनु भोग बैस गँवावइ हे सखी
घड़ी घड़ी निज सोग साधन जनम गँवाइयइ

(२७)

किरन आग कइ जेठ सेराई जरि जरि धरती छार उड़ाई
तवहूँ न तजउ लोर कर नाऊ बिरह जारि के छार उड़ावउ
सिंघ अहेर कोन्ह जो धाई तो (ते) हि के चोत के सेर खाई
अब यह बारह मास तुलाने दिन अब आहि लोर घर नै
मोरे आइ दिन मोर तुलानो अब हौं सती लोर घर आनी
तोर कहा में मेटेउ सत्त राखु करतार
राखेउ प्रीत लोरिक कइ दोहूँ कुल उजियार
पाप पुन दोउ भोग सत कइ करनी आगरी
पापी न पावइ भोग साधन सत दइ कीजियइ

(२८)

जनम न चीत डोलावउ काऊ मूए बारींह जाउ तो जाऊ
मनइ मालिन धरि झकझोरी बहुत पत्त मैं राखेउ तोरी
दूती दूठ बचन सब तोर मती सुन पावइ कै कहुँ लोर
आपु उतर तैसितन रारी (?) नित ठावउ (?) आन देव है गारी
लोग पच कइ होति न कानी सरसा आजु उतरवेहुं पानी
रितु अनरितु रस अनरस मोहे कछु न भाउ
तोहे करउ बधाउ जब लोरिक घर आउ
जो जस करइ सो पावइ अनजन भाँति सवारियइ
साधन पियहु कइ बार साँचि होइ सर दीजियइ

(२९)

मैनौं मालिन नियर बोलाई धरि माटा कुटनी नेहुराई
मुड मुड़ाइ कइ सेंदुर दीन्हा कार नियर दुइ टीका दीन्हा
गन्हा आनि कइ धाइ चड़ाई हाट बाट सब नगर फिराई
जो जस करइ सो पावइ वइस कुटनी लोग पुकारइ अइस
लाइ पाइ कइ काटे कान, कोनो बोइ लौनिहुउ धान
सत मना को थिर रहा साधन राख करतार
कुटनी मारि निकारी कीन्ह गंगा के पार
पाप पुन दुइ बीज जस बोइय तस ऊजाइ
साधन जइसा बीज तैस फल आगे सहइ

श्री राम जी शहाऐ
श्री गगा जी शहाऐ
श्री भवानी जी शहाऐ
श्री गनेश जी शहाऐ
श्री पोथी राम नाम जनम

श्री पोथी राम नाम जनम

बरनो गनपति बिघिन बिनाशा ।
राम रूप होऐ पुरवहु आशा ॥
कठे स्त्रोसती होदे महेसा ।
बिद्या देहि श्री दाता, गनेशा ॥
बरनो सोरसी अस्रीत बानी ।
राम रूप तुम्ह भलि गति जानी ॥
बरनो चाद दनुज की जोती ।
राम रूप रस निमल मोती ॥
बरनो देव बिप्र गुर पाउ ।
जिह माँहि निरमल ध्यान सिखाऊँ ॥
दो०—सुरजदास कबि बरनो प्रान नाथ ज मोर ।
राम कथा किछु भाखो, कहत न लागे र ॥१
बालमीक रामायेन भाखा ।
तीनि भुवन जे भरि पुर राखा ॥
श्री रामकथा जि ह कीन्ह बिचारा ।
सातो खड कीन्ह बिस्तारा ॥
राम के जनम पढे जो सुनई
सहस हाम सो दिन दिन करई ॥
हृदे माह श्रोवनो कीन्हा ।
कोटि गाए बिप्र कहु दीन्हा ॥
कोटि बिप्र जो नेवति जेवावा ।
कोटि भार कचन पहीरावा ॥
जाहा ताहा ब्रामन नेवते आऐ ।
दछिना देहु के बिदा कराए ॥

की से आहिनि मोर श्रवन पूता ॥
दो०—धनि पानि ले आवहु, श्रवन पुत्र जो धाऐ ।
श्रोसा बहुत हम पाया, पानी आपे पिआय ॥
तब दसरथ कहा निचारी ।
सुनहु रिसो अस बचन हमारी ॥
न हम राक्स न हम पूता ।
मै मारा तोर श्रवन पूता ॥
दारवन तुम कह नीर पठाया ।
रीसे अधम पापी ले आवा ॥
पिअहु नीर रहे प्रान तोहरा ।
करु मोकह जस परे बिचारा ॥
अरे अधम हतेसि सतापो ।
बड़ अपराध कीन्ह तै पापो ॥
मै रीसे हो अजोधा के राउ ।
पसु धोखे में कीन्ह जो घाउ ॥
मैं अपराधी रीसे तोहारा ।
करु मोकह जशपरै बिचारा ॥
दीन्ह तोरि जो मोरि मति आई ।
पुत्र शोग तुम प्रान गवाई ॥
ऐतना कही, प्रान दुइ त्यागा ।
परी साप श्रोप चले बैरागा ॥
जो परमेशर संतति देहो ।
तीन्ह के शोग भले जीव लेही ॥
एतवा कही नम्र चलि आऐ ।
पाट उपर मे बैठे जाऐ ॥
भूजत राजा भरम भुलाना ॥
श्रोध भए पाछे पछताना ॥
दो०—दरपन लै मुख देखा देखि बदन अकुतान ।
शपने शोअत राजा भखत भेउ विहान ॥६
चिहुकि उठे राजा पुनि कैशे ।
गाठि के रतन छुटि पड़ जैशे ॥
शुभत महया राज हकरावा ।

गुर वाशिष्ट के आश्रम आवा ॥
गुर के चरन धैपुछु मुआरा ।
स्वामी मोर करहु उपकारा ।
लक्ष्मी मारि घउ गई असारा ।
एकुपुत्र बिनु जग अधारा ॥

दो०—काके टीका सारो, काके सौपो दाहन भडार ।
एक पुत्र बिनु सामी, भए बड़ा बेवहार ॥
बालापन ते भुआवल होई ।
अन धन कहु खोहे सभ कोई ॥
सुन राजा कुल बस मुआरा ।
एहजग क है एहै बेवहारा ॥
कहे वाशिष्ठ रोख सतभाऊ ।
पहिले निरधन धन गोहराऊ ॥
धन भए कलत जो होई ।
भए कलत पुत जो होइ ॥
पुत भए व्याह के भातो ।
भए ब्याह जो हाखहि नाती ॥

दो०—नाती भए परनाती, तबहु न पुजी आश ।
अत प्रीतु ना जाने, काल लिये जम फाश ॥८
जो तोहि राजा पुत्र कै आसा ।
चोखे जाहु सीग्रोखी का पासा ॥
चरन लागि कै रिख मनावहु ।
होंहि प्रसन तबहि सिधि पावहु ॥
रथ चढी रावु चले पुनि ताहा ।
सोगी रिखि के आश्रम आहा ॥
शागी रिखि के गोतम के बेटा
सुरजनास कवि राजे भेटा ॥
कटि बाधे जेवरी एक मोटी ।
कुस के वोकला कीन्ह कछौटी ॥
देखि सोगी रिखि आगे ठाढा ।
अगिन सिखा जनु थै कै काढा ॥

दो०—रथ से उतरे राजा गए चरन पर लोटि ।
शोगी रिशि का मन भो, दाया उपजा मोटि ॥९
बहु राजा तै कथि कर दुखी ।
'बेगि कहौ के आलौ सुखी ॥'
इन्दर सरग से टारि अडावौ ।
ताहि राज लै तोहि बैशाऔ ॥
कहे राजा मै समकर सुखी ।
एक पुत्र बिनु में बड़ दुखी ॥
एक पुत्र जो तोहि सो पावौ ।
जनम जनम तोहार गुन गावौ ॥

दो०—तीनि भुवन फिरि आए, कतहु न पूजो आश ।
गुर उपदेश गोसाईं, आए तोहरे पाश ॥१०
मुनि के रिखे समाधि तब कीन्हा ।
अगिन बारि के आहुति दीन्हा ॥
मूल मन्त्र तब ही अहिवाना ।
ह्नोदेश्वा चेति नराऐन आना ॥
चाउर चुरी पीड एक कीन्हा ।
सो राजा के कर लेइ दीन्हा ॥
माय नाइ कै राजा लीन्हा ।
सबहि रिखस अम्या दीन्हा ॥

दो०—प्रान बालमी रानी, ताहि सिआबहु जाइ ।
त्रिभुवन सुन्दर बेटवा, सो जग जनमिहि आइ ॥११
सो लेइ राऊ चले पुनि कसे ।
दुखी परा परा धन पावे जैस ॥
तब राजा अवध पुर गैएउ ।
सभ रनिवास धाय के अऐउ ॥
तहि मह राजा रहे निहारा ।
काहि देउ मोहि सभै पिआरी ॥
तहि मह तीनि पाट की रानी ।
ककइ कौसिल्या सुमित्रा जानी ॥

तेहि मा राजा सोभै कसे ।
तारा माह चदरमा जैसे ॥
दो०—भीरि ना छाड़े रानी, तब दुइ खंडा कीन्ह ।
कौसीला औ ककई, बाटि दुनो के दीन्ह ॥१२।
दुनो जनी जब लागी खाए ।
चली चली सुमित्रा आए ॥
कहे सुमित्रा सवती पिआरी ।
हमहु आज अतीप तोहारी ॥
दुनो जनी रही कर खैंचो ।
कैसे खाउ अतीप ही बांची ॥
अतीय बाची जो नर खाई ।
जनम जनम सो नरकहि जाई ॥
दो०—आदर क सुमित्रहि पास बैठाइन्ह आइ ।
कछु कछु उन्ह क दीन्हा पाछे लागी खाइ ॥१३
तीनो रानी गरभ सुभाउ ।
आनद करे तब दसरथ राउ ॥
मन मो कचन कलसा भरावा ।
॥
मनमो दासी मनमो दासा ।
मनमो लोग बसे चहुँ पासा ॥
सुफल मनोहर बाजन बाजा ।
निति उठि दान देत है राजा ॥
पाच मगल गावहि नर नारी ।
ब्रामन वेद पढ़े झमकारी ॥
दो०—सुफल मनाहर पूजा, उच्छ्त मे सब काम ।
कौसिल्या के प्रथम ही, जन्म लीन्ह श्री राम ॥ १४
चइत मास नवमी गुरवारा ।
तेहि दिन राम लीन्ह अवतारा ॥
जब जनमे सवसार के सारा ।
कैकइहि जनमे भरथ कुमारा ।
सुमित्रा जनमे दुई बलवीरा ।
लछन चतुरगुन रन के धीरा ॥

गुर नर मुनि सम नाचन लागे ।
तीनि भुवन कै दालिद्र भागे ॥
राम को जनम सुनै मन लाई ।
सो नर सदा बैकुण्ठहि जाई ॥

दो०—सहज मदार उधारा, जो सेवै सो पार ।
श्री रामचन्द्र को जनमे, हरख करे सवसार । १५

बाहर भीतर राउ न जाइ ।
दिन दिन चौगुन होत बधाई ॥
चारो पुत्र खेलावहि मन ।
दुइमे आँखि चारि भी नैमे ॥

दो०—चारो पुत्र के आदर सम सम होय दुलार ।
राम छाडि के राजा, बैगर होय ना पार ॥१६

एक खेलावना जो लेइ आवे ।
कोटि कचन सो तबही पाव ॥
पाहनि मुण्डनि जब जब होई ।
तब तब धन पूछै नहि कोई ॥
तबहि सो धन मेलि लँडावे ।
राम के दरस महा धन पावे ॥
धन देई जो होखे दुखी ।
राम के जनमे सभै भा सुखी ॥

दो०—एहि रग रहे राजा, बारह बरस तुलान ।
बैठवन्हि दोन्ह जनेउ, अस बोले मतिमान ॥ १७

राम मनोहर राम पिआरा ।
राम छोड़ि नहि आन अधारा ॥
रामे माता रामे पीता ।
रामे दाता रामे भुगुता ॥
रामे बोलिये रामे कहिए ।
अहु निशि राम नाम चित धरिए ॥
राम नाम सवसार के सारा ।
राम नाम तिहुँ लोक पिआरा ॥

दो०—राम रग रस लावहु, सुरजदास कवि भान ।

सांगो रिनि मोहि कीन्ह पसाउ ।
तीन्ह प्रसाद पुत्र फल पाउ ॥

दो०—तीन्ह रिसि ह वे दाना, गुपत भए सब काम ।
अवदा कवन गोसाइ, आऐहु कवने काम ॥२०
आयहुँ राजा भेंटन तोही ।
तोहरे हरख हरस भा मोही ॥
दुष्ट तालुका जग्य नसावा ।
एको काम न होवे पावा ॥
वन मीं ब्रामन होते सुखी ।
ओहि के करन सभे का दुखी ॥

दो०—ओहि के देखते राजा, होए ना एको काम ।
ताहि बधे के कारने मागत हों श्री राम ॥२१
निठुरि बचन जानि बोल गोसाइ ।
खेडा करत करत जीव चलि आई ॥
मागहु गज रथ सहन भडारा ।
सरवस देत न लाओ वारा ॥
औ मागहु परिजन परिवारा ।
रो मह मागहु एक बारा ॥

दो०—काढि लेउ जीव मोरे, के देहु लेवै पार ।
जीव देवै बरुपारो, राम के देवै पार ॥२२
सुनि के वचन रिसै रिसियाना ।
राम काडि नहिं मांगै आना ॥
पहिले लेइ तालुका भराओ ।
पाछे धनु गुन वेद पढाओ ॥
कवन बोल तुम बोलन लागे ।
हठ ना रहिहै हमरे आगे ॥

दो०—चोखे देहु रामहि मोही, का लावहु पडोवार ।
नाहिं तो नग्र अजोध्या जारि करो थे छार ॥२३
सुनि के राउ परा भुइ कैसे ।
मन्त्र के मारल विसिघर जसे ॥

लखनसेन का हरि-चरित्र विराट पर्व

बादसाहि जे वीराहिम साही, राज करहि महि मडन माही
आपुन महाबली पुहुमी धावै, जउना पुर मह छत्र चलावै
सवत चौदह सह एकासो, लपनसेनी कवि, कथा प्रगसी
गुनी जन सब अधीर मैउ, बैजलदास राइ पह गएउ
बैजल दास मन हरषीत ताहो भरावे जीव
लपवसेनि कवि भाषा, कथा बैरठ जे कवि

+ + +

कैसे मेखउ अक्षर के पाती सरवार राजा कइ जाती
हसन पति हाइ छा छन वाका, महवेलाभ भए नोहलका
अक्षर सुनत सुन्य सुधी काठा अम्रती बोन बचन सो वान्त

दोहा

मगहि चहि नगसरी पडित रहे सीर घुनो
छले वैल सब होवै लपन सेनी कवि गुनो
डोलेस्वर अनुकाराम तेज रासि कुल राजा धम
तासु तने जे लपन कुमार दुरजन द्रवन सोध करीवार

दोहा

कठे बसे सुरसती हीरदे वसहि गनेस
लपनसेनी तहने बसे धय धय सो देस
लपनसेनी कवि जन मैं आइ, बड़ बड कविता गए लजाइ
गए धम औ सतजुग राजा, देवीपुर गए बली के काजा
गए प्रीती धनसेनि नरेसा, भोजपुर गए देव गनेसा
जेदेव चले सग वो वाटा, औ गए घघ सुरपति भाटा

नगर नरिंद्र जो गए उनारी, वीद्यापति कइ गइ लचारी
अग्रित कुड नग्र जै यहाइ, त्रोघनी कुड नग्र अव गहइ
तेन्ह पापीन्ह कह वोज उठाऊ, जै नहो लीन जन्म भरि नाऊ

दोहा

तहि पापी तह रापीए जइ हरिनाम न लीन
अछर तीनोसा जीव करि, ध्रम होइ दीन दीन्ह

जन परिजन छड़ि सो देसा, अहव उपमवन बसे नरेसा
मोदु महय जे लागे काना, नाज छाडि जे अनाज आना
कुवल वाँये गुपन भरई आ र सो पर सेइ चराई
चदन काटि करील ज लावा आव काटि कइ वबुर वोवावा
कौकिल हस मञारहो मारी बहुत जतन कागहि प्रतिपारी
सीरीव पप उपरिव पाने तमचुर जग ससार
लपनसेनी ताहूने वसे काढो जो पाही उपारि
चौसा नगर जगत परसीधा रामराज तह गौरव सीधा
जै ज कहि जवा बीग्रह बढाइ कापे सेज (सेस ?) धरनी लरपरइ
प्रोयीमी वहनन्न नर नाहा दुसर रघुपति उपज ताहा
धारी वानी चौरासी मोरा मारेउ सबै गग कै तीरा
वेकर पुन जे पुरनमाला अरि के हीरदे महावल साला

दोहा

साठी गाइ वाधी चरु पुरनमल कै ठाट
कौतुक कीन सुरस करी वावीघ भया वैराट

भीम कवि का डगवै पुराण

संवत पंद्रह से पचास जब भएऊ द्रुपुप नम समस्त चलि गएऊ
सावन सुकुल सतमी आइ । डगवै कब भो मुनई
चंदन नग्र चैसनी ठाऊ कैन देस कैन से गाऊ
जहए भए कबीसर विचार तह बसत है कौन भूअर
पुहुमी धम प्रन एक दसा बसै सो त्रीमल रेह

+ + +

मस कवी दोसन को देहो, जो कवी अपन नाउ न लेइ
चवीत तहव मे उपपतो चवन नग्रे चैन सो जती
नग्र अमर सब घेर बहा, चमुक इन्द्रदेव तीस लहा
जती कै कएथ करन कुबेर महीमत ही कलीनेम अचर
तसुत नौ रतन बर बीरू अतो प्रचड नीक सुसरोरू
मत मतग चोरू मह दीनह तब तेनह सब गवरह लोह
तेही कुल भीम बरिपरा, वैरी बुधी बहु वैसरा
कहे चहे कछु कथ सुभउ मरथ कथ डगवै गउ
चह उरब फौरी आवे सोहइ सोइ प्रीती चठमन लइ

पुरुषोत्तम दास का जैमिनी पुराण

आदि—श्री गणेशाय नम अथ जैमिनि लिप्येत। प्रथमहि प्रणवा पुरुष पुराना। आदि अंत प्रभु है अवसाना। निगुण सगुन जानि नहिं जाई। रूप न रेख रहत घट सोई। ब्रह्मान्कि जिहि पावत रहहो। आदि सारदा सोहि मनावो। देहु सुमति जो हरि गुन गावो। तुम भल जानत रहहु भगवतहिं। मारि देत रावेहु सुर सतहि। वाहन गरुर गदा कर लीन्हा। सप चक्र मनि भूपन कीन्हा। कमन चरन कै नमल चरना। रसना रामे नाम गहु सरना। वाक वाग्नि नमल वाना। देहु सुमति हरिनाम प्रवाना। कवल नयन निजु चरन निवासी, तुम्र प्रसाद पावौ कविनासी। दोहा० ब्रह्म रुद्र सुरगन पनि जग जननी जस लेहु। पुरसोत्तम हरि सवक बुधि प्रकाश किसु देहु।

अंत—मदन सिंघ सब विप्र बुलाए। जोतिप शास्त्र बिसारद आए। कहहु लग्न सुभ कहिआ अहो। विपया चद्रहास जो ब्याहो। उत्तम सूज ब्रहस्पति कहिआ। बर कन्या एकान्‍ (?) घहिआ। बडे भाग्य वैष्णव गृह आवा, आजु नीक सुभ लगन सोचावा। गौधूरी कर उतिम पर्वा लग्न दोष विवर्जित सवा। सुनै मदन परम हुलासा। सपिग्रह सो कह वचन प्रकासा। बाजन बाजै मगलचारा, होइ लाग विवाह पसारा विपया चद्रहास नहवाए। न्यावर वस्तर पहिराए। मडप पाटेबर ते छावा। वरकन्या वेदी बैठावा। हरादे घनाइ कन्या नहवाई अरघ देई बदी बैठाई। चद्रहास कह वस्त्र बनावा, अस्त होत हरि कलस पुजावा। जिव मह सुमिरा हरि कर चरना। आसन आइ बैठ मन हरना। साधरन विप्रह कह

विपय—मगलाचरण, कवि तथा उसके अभिभावक का परिचय जबू दीप भरत पडा। कनउज कै पाटी परचडा। सप्तपुरी महा उत्तिम थाना। कौशल देसवै (देस सवै) कोउ जाना। रामपुरी सरजू के तीरा। नाम अजोध्या निमल नीरा। सर्गाद्वार पाप कर नासन। जहवा रामचद्र कर आसन। तिहि ते दक्षिन जोजन चारी। आदि गोमती किल्मिप हारी। नारायणपुरी सुघर सुदेसा। तहा बसै

विकार नरेसा। कुवर ब्रह्म दवीच सुजाना। वो ह्की सरवर राव न आना। तहवा नगर बसत इक दादर। जहवा जती सती कर आदर। राजा रूपमल्ला वहाँ रहई वैश्यवश नित धर्महि चहई। लागि गुहारि वेरि सहारा। दादरपुर के महा जुभारा। सव सकुल निमल राजा रूप मल्ल नाम। राम भक्त पुरुषोत्तम बसहि सुदादर ग्राम। वश विभूति पिता मह प्रीती। क्षेमानद धर्म की रीति। तिनके सुत पुरुषोत्तम दासा, प्रथम गए जग्रनाथ निवासा। कमलनयन परब्रह्मिज्ञ ही हा। अवक पुरी जाइ गुरु कीन्हा। गुरु रघुनाथ के चरन मनाये। जिन ब्याकरन निगुन पढाए।

ग्रन्थ निर्माण काल—सवत् पद्रह से अटठावन निमल चैत मास (स) का आवन, शुक्ल पक्ष प्रतिपक्षा (दा) सुहावन, श्री गोविन्द कथा गुन गावन उत्तम दिवस चन्द्रकर बारा मेषक सूर्ज बसत प्रगासा। हरि प्रसाद पुरुषोत्तम दासा अश्वमेध कर कीन्ह प्रगासा।



सहायक ग्रन्थ

प्रकाशित ग्रन्थ—

१—अर्ध कथानक स० श्री नाथूराम प्रेमी बम्बई, १९५७ ई० ।

२—अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय डा० दीन दयालु गुप्त प्रथम संस्करण लखनऊ ।

३—ईश्वरदास की सत्यवती कथा तथा अन्य कृतियाँ स० डॉ० शिव गोपाल मिश्र तथा रावत ओमप्रकाश सिंह ग्वालियर, १९५८ ई० ।

४—उक्ति व्यक्ति प्रकरण स० जिनमुनि विजय । बम्बई, सं० २०१० ।

५—एवोल्यूशन आफ अवधी डॉ० बाबूराम सक्सेना इलाहाबाद, १९२७ ई० ।

६—ओरिजिन एंड डवलपमेंट आफ बंगाली लैंग्वेज डॉ० सुनीति कुमार चटर्जी कलकत्ता, १९२६ ई० (अंग्रेजी में) ।

७—कुतुबन कृत मृगावती स० डॉ० शिवगोपाल मिश्र प्रयाग, शक सं० १८८५ ।

८—कुवलयमाला स ए० एन उपाध्याय, बम्बई, १९५९ ई० ।

९—खड़ी बोली हिंदी साहित्य का इतिहास बाबू ब्रजरत्नदास काशी, स० १९९८ ई० ।

१०—ग्रामर आफ हिंदी लैंग्वेज कैलाग, लंदन १९५५ ई० ।

११—ग्रामीण हिन्दी डा० धीरेन्द्र वर्मा इलाहाबाद,१९५६ ई० ।

१२—चंदायन स० डॉ० विश्वनाथ प्रसाद आगरा, १९६२ ई० ।

१३—चंदायन स० डा० परमेश्वरीलाल गुप्त १९६४ ई० ।

१४—जायसी के परवर्ती सूफी कवि और काव्य डॉ० सरला शुक्ल : लखनऊ, स० २०१३ ।

१५—जायसी ग्रंथावली स० डॉ० माताप्रसाद गुप्त इलाहाबाद, १९५१ ई०

१६—द इलही सल्तनत आर० सी० मजूमदार बम्बई, १६६० ई०
१७—निगु न स्कूल ऑफ पोएट्री डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल (हिंदी अनुवाद) लखनऊ, सं० २००७।
१८—नुह सिपेहर 'खिजली कालीन भारत' नामक ग्रंथ के अन्तर्गत, अली गढ, प्रथम संस्करण।
१६—द माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर आफ हिंदुस्तान ग्रियर्सन (हिन्दी अनुवाद) वाराणसी, १६५७ ई०।
२०—पुरानी राजस्थानी तैस्सीतेरी (हिंदी अनुवाद), काशी, स० २०१२।
२१—प्राकृत ग्रामर आफ हेमचन्द्र, पूना, १६३६ ई०।
२२—प्राकृत पैंगलम् स० भोलाशंकर व्यास वाराणसी, १६५६ ई०।
२३ प्राकृत भाषाओं का व्याकरण (हिन्दी अनुवाद), पटना १६५८ ई०।
२४—बाङ्गला साहित्येर इतिहास डॉ० सुकुमार सेन कलकत्ता, १६५० ई०।
२५—बुद्धकालीन भारतीय भूगोल डा० भरतसिंह उपाध्याय, प्रयाग, स० २०१८।
२६—व्रजभाषा डॉ० धीरेन्द्र वर्मा इलाहाबाद, १६५४ ई०।
२७—भारत का भाषा सर्वेक्षण स० ग्रियर्सन (हिन्दी अनुवाद), लखनऊ १६५६ ई०।
२८—भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा प० परशुराम चतुर्वेदी दिल्ली, १६५६ ई०।
२६—भोजपुरी भाषा और साहित्य डा० उदयनारायण तिवारी पटना, १६५४ ई०।
३०—मधुमालती स० डॉ० माताप्रसाद गुप्त इलाहाबाद, १६६१ ई०।
३१—मिश्रबंधु विनोद मिश्र बंधु लखनऊ स० १६७.।
३२—मुन्तखबउत्तवारीख (अंग्रेजी अनुवाद) लन्दन, १८६८ ई०।
३३—रामचरितमानस गीता प्रेस, गोरखपुर संस्करण।
३४—राउरवेल स० डॉ० माताप्रसाद गुप्त इलाहाबाद १६६३ ई०,
३५—वारहमासा स० डॉ० माताप्रसाद गुप्त आगरा, १६६२ ई०।
३६—वर्णरत्नाकर स० डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी तथा बबुआ मिश्र कलकत्ता, १६४० ई०।
३७—शिवसिंह सरोज शिवसिंह सेंगर लखनऊ, चतुर्थ संस्करण।

३८—सदेश रासक स० डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी विश्वनाथ त्रिपाठी बम्बई, १९६० ।

३९—साधन कृत मैनासत स० हरिहर निवास द्विवेदी ग्वालियर, १९५६ ई० ।

४०—सोलहवी शती के हिन्दी और बगाली वैष्णव कवि डा० रत्नकुमारी लखनऊ, १९५६ ई० ।

४१—हरिचरित स० आचाय नलिन विलोचन शर्मा श्री रामनारयण शास्त्री पटना, १९६३ ई० ।

४२—हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान प० परशुराम चतुर्वेदी बम्बई १९६४ ई० ।

४३—हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का विकास हरिऔध लहेरिया सराय, दरभगा, स० १९६७ ।

४४—हिन्दी साहित्य डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी दिल्ली, प्रथम सस्करण ।

४५—हिन्दी साहित्य का आलोचनात्म इतिहास डा० रामकुमार वर्मा इलाहाबद, १९५४ ई० ।

४६—हिन्दी साहित्य का इतिहास प० रामचन्द्र शुक्ल काशी, सातवा सस्करण ।

४७—हिन्दुई साहित्य का इतिहास तासी (हिन्दी अनुवाद) इलाहाबाद १९५३ ई० ।

अप्रकाशित ग्रन्थ—

४६—मिरगावत डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सपादित और शीघ्र प्रकाशनीय ।

४७—मैनासत प्रो० हसन अस्करी पटना के पास सुरक्षित ।

४८—रामजन्म श्री गोविन्दजी ६८ रामबाग, इलाहाबाद के पास सुरक्षित ।

पत्रिकाएँ—

१—कल्पना हैदराबाद ।

२—द जनल ऑफ दि बिहार रिसच सोसाइटी पटना ।

३—नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी ।